कवि गुलाब खण्डेलवाल के साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन

रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय से पी.एच. डी. (हिन्दी)
का उपाधि-प्राप्त
शोध-प्रबन्ध

शोधकर्त्री:
श्रीमती डा0 पूर्ति मिश्रा

निर्देशक:
डॉ0 मिथिलेश शरण मित्तल
विभागाध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
ने. में. शि. ना. दास महाविद्यालय, बदायूँ

1994

प्रकाशक :
कमल प्रकाशन
105, मकन्दूगंज, चौक, प्रतापगढ़--230001 (उ. प्र.)
दूरभाष : (05342) 220650, 220651

© गुलाब खंडेलवाल

मूल्य : 350 रुपये
विदेश में : $ 20.0

प्राप्ति-स्थान :
(1) गुलाब खंण्डेलवाल
56, जय अपार्टमेंट
102, आई. पी. एक्सटेंशन
पटपड़गंज, नई दिल्ली–110092
दूरभाष : (011) 22726934

(2) नारायण दत्त मिश्र
मौलिक साहित्य प्रकाशन
162-डी, कमला नगर दिल्ली--110007
दूरभाष 23844450, 35380149

लेज़र टाइप सेटिंग :
शाह कम्प्यूटर ग्राफ़िक्स
फोन : 22935535

निर्देशक का प्रमाणपत्र

प्रमाणित करता हूँ कि श्रीमती पूर्ति मिश्रा, शोध-छात्रा, हिन्दी-विभाग, नेहरू मेमोरियल शिव नारायण दास स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बदायूँ ने अपने प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध 'कवि गुलाब खण्डेलवाल के साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन' को मेरे निर्देशन में लिखा है। इसका यह शोध-प्रबन्ध सर्वथा मौलिक तथा नवीन है और यह कार्य इन्हींके द्वारा सम्पन्न किया गया है। इन्होंने रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय परिनियमावली के अनुसार निर्धारित और अपेक्षित शोध-अवधि को भी पूर्ण कर लिया है।

अतः अब यह शोध-प्रबन्ध अधिकारी विद्वानों के परीक्षणार्थ विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया जा सकता है।

दिनांक 27.4.1994

डॉ0 मिथिलेश शरण मित्तल
विभागाध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
नेहरू मैमोरियल शिवनारायण दास स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बदायूँ

पुरोवाक्

अध्ययन के क्षेत्र में उत्तरोत्तर आगे बढ़ने की लालसा अध्यवसायी के मनो-मस्तिष्क में ज्यों-ज्यों प्रखर होती जाती है त्यों-त्यों वह ज्ञान सरोवर में पैठता चलता है। ज्ञान-वृद्धि व्यक्ति की आयु-वृद्धि का पर्याय है। साहित्य, संगीत और कला ज्ञानाकाश के उज्ज्वल नक्षत्र हैं। ये मनुष्य को अपने अन्तः-बाह्य सौन्दर्य में आद्यन्त बाँधे हुए हैं जो एक बार इनके परिक· में आ गया है, वह फिर मोह-रज्जु में ऐसा बँधा है कि उससे छूटते नहीं बना है। जिस व्यक्ति का जन्म ही ऐसे सुपरिवेश में हुआ हो उसके छूटने का कहीं-से-कहीं तक प्रश्न ही नहीं है। इसी भाव को यों कहा जा सकता है कि ऐसे व्यक्तित्व के रोम-रोम में और श्वास-श्वास में वह रम गया है जो मनसा, वाचा, कर्मणा व्यक्त होता है।

मैंने जब इस धरित्री की गोद में आँखें खोलीं तब मुझे सब ओर एक ही परिवेश दिखा, साहित्य का, कला का, कविता का और आये दिनों कवियों के आगमन का। उठते-बैठते, आतिथ्य करते और सामान्य से विशेष उत्सव तक में कविता की सरसता और कवियों की मण्डली दिखी है। चाहे-अनचाहे शताधिक कवियों, कवयित्रियों, गीतकारों और लेखकों से परिचय हो गया। यदि किसी की कविता सुनी तो किसी की रचना पढ़ी औ: किसीको गाते सुना। यह समस्त परिवेश मिला पूज्य पिता श्री डॉ0 ब्रजेन्द्र अवस्थी जी की पुत्री और बड़ी पुत्री होने के कारण। गत पांच दशक से उनकी ओजस्वी वाणी भारत के कोने-कोने में ही नहीं प्रत्युत विदेशों में भी गूँजी है। उन्होंने राष्ट्र को एक सजग प्रहरी की भांति जाग्रत रखा है जिससे न केवल समय-सापेक्ष प्रबोध मिला है बल्कि राष्ट्रीय गौरव को अक्षुण्ण रखने की भारतीयों ने सजगता प्राप्त की है। किमधिक, साहित्य के प्रति अभिरुचि पारिवारिक परिवेश से ही मिली है। इसे मेरा सौभाग्य ही कहा जायेगा कि नारीजीवन की पूर्णता परम पूज्य डॉ0 वी0 के0 मिश्रा को प्राप्त करके मिली। इसके साथ ही उन्होंने साहित्यिक अभिरुचि को कहीं से भी न्यून नहीं होने दिया बल्कि यों कहना चाहिए कि उन्हींकी सतत

प्रेरणा ने इस दिशा में कुछ करने के लिये प्रेरित किया, जिसका एक सुफल प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध है।

परमादरणीय गुरुवर्य डॉ0 मिथिलेशशरण मित्तल, हिन्दी-विभागाध्यक्ष, नेहरू मेमोरियल शिव नारायण दास महाविद्यालय, बदायूँ का मेरे ऊपर सदैव से वरद-हस्त है। जब शोधकार्य हेतु अपनी उत्कट अभिलाषा मनीषी विद्वान डॉ0 मित्तल के समक्ष रखी तो न केवल सहर्ष प्रेरणा दी बल्कि उन्होंने निर्देशन का भार वहन करने की भी सहज स्वीकृति प्रदान की। मैंने शोध-कार्य-हेतु कविवर गुलाब खण्डेलवाल को ही क्यों चुना ? संक्षेप में उत्तर यह है कि मेरी इच्छा थी कि ऐसे साहित्यकार पर मुझे कार्य करना उत्तम लगेगा जो वादों, विवादों के घेरे से मुक्त और एकान्त में उत्तरोत्तर विकासमान सोपानों पर अन्तर्मुखी साधक की भांति चढ़ता जा रहा हो। यह कल्पना यथार्थ में महाकवि गुलाब खण्डेलवाल में साकार लगी तथा शोध-प्रबन्ध-हेतु विषय चुन लिया गया। शोध-कार्य सम्पन्न होने में समय तो अवश्य लगा है लेकिन मुझे अपने कार्य से पूर्ण संतुष्टि है। यदि यह विद्वान् अध्येताओं को भी यत्किंचित तुष्टि दे सका तो मेरा श्रम वास्तव में सार्थक हो गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में कविवर गुलाब खण्डेलवाल का सामान्य और साहित्यिक परिचय देते हुए यह बताया गया है कि कवि को किशोरावस्था से ही ऐसा साहित्यिक परिवेश मिला जिसकी संगति ने गुलाब जी को साहित्यिक गतिविधियों से अवगत करा दिया। युग-प्रकाश-स्तम्भ महात्मा गांधी, कवीन्द्र रवीन्द्र, महाप्राण निराला, काव्यगुरु नारायणानन्द सरस्वती, काव्यमंच-गुरु बेढब बनारसी आदि जैसे महापुरूषों की निकटता से महाकवि गुलाब को अपने साधना-पथ को चुनने में सहायता मिली है। कवि श्री गुलाब वादों के घेरों से सर्वथा मुक्त रहे हैं। द्वितीय अध्याय में दस गीत-संग्रहों, छः प्रबन्ध-काव्यों, (महाकाव्य , खण्ड-काव्य और नाटक-काव्य) चार ग़ज़ल-सग्रहों का और अन्य चौदह काव्यकृतियों, कविता-सग्रंह एवं नाटक, का रचना-काल विषय-वस्तु एवं प्रकाशन-संबंधी सूचना देते हुए सामान्य परिचय दिया गया है। इस प्रकार दोनों अध्यायों में कवि के व्यापक परिचय को शब्दायित किया गया है।

तृतीय, चतुर्थ और पंचम अध्याय आलोचना-खण्ड के अन्तर्गत रखे गये हैं। तृतीय अध्याय में गीत के स्वरूप को बताते हुए गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों की संरचना पर दृष्टिपात किया गया है। हिन्दी की गीति-शैली के

विकास में गीतकार गुलाब के गीतों को लिया गया है जिनमें गीति-परम्परा अग्रसर हुई है। गुलाब खण्डेलवाल के गीतों ने परवर्ती गीताकारों को प्रभावित भी किया है। साहित्यकार एक ओर प्रभाव ग्रहण करता है तो दूसरी ओर प्रभाव छोड़ता भी है। साहित्य में यह शाश्वत प्रक्रिया है। चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत प्रबन्धकाव्य, महाकाव्य एवं खण्ड-काव्य के शास्त्रीय पक्ष, भारतीय एवं पाश्चात्य, दोनों को दरशाते हुये 'उषा' महाकाव्य का चरित्रगत, शैलीगत और प्रभावगत अध्ययन किया गया है। इसी प्रकार 'कच-देवयानी' 'अहल्या' 'आलोक-वृत्त' 'गांधी-भारती' और 'दानवीर बलि' (बलि-निर्वास) खण्डकाव्यों का भी चरित्रगत, शैलीगत और प्रभावगत अध्ययन किया गया है।

पंचम अध्याय में उर्दू-ग़ज़ल और हिन्दी-ग़ज़ल के स्वरूप को लेकर व्यापक चर्चा की गयी है। हिन्दी-ग़ज़ल के पुरोधा कवि गुलाब खण्डेलवाल ने चार संग्रहों में करीब तीन सौ साठ ग़ज़लें कही हैं। ग़ज़ल-संरचना को गुलाब खण्डेलवाल ने पूर्णतया स्वीकार करते हुए कुछ नया जोड़ने का सफल प्रयत्न किया है। मतला, रदीफ, काफिया, शेर, मकता आदि की ओर विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया गया है। इसी अध्याय में अन्य काव्यों की चर्चा में रचनाओं पर छायावादी, रहस्यवादी और प्रगतिवादी प्रभाव को प्रदर्शित किया गया है। 'रूप की धूप' और 'सीपी-रचित रेत' दोनों कृतियाँ संरचना की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

षष्ठ अध्याय एवं सप्तम अध्याय में गुलाब खण्डेलवाल के प्रबन्ध और मुक्तक-दोनों प्रकार के काव्यों का प्रतिपाद्य दिया गया है। प्रतिपाद्य की प्रस्तुति हेतु यह प्रयत्न किया गया है कि प्रत्येक कृति को पृथक्- पृथक् स्थान दिया जाय जिससे मूल्यांकन में सुविधा रहे। महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के रचना-संसार के प्रतिपाद्य को हम यों कह सकते हैं - कवि ने पौराणिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक पात्रों के माध्यम से चरित्र-निर्माण, आत्म-गौरव और नर-नारी-सम्बन्धों में प्रेम के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। गीति-साहित्य में प्रेम, और रूप-सौन्दर्य लौकिकता से अलौकिकता की ओर अग्रसर होता चला है। गीतों में अध्यात्म की ओर झुकाव अद्भुत है। अन्य काव्यों में कवि के अनुभव हैं जो जीवन, जगत, समाज आदि से सम्बन्धित हैं। सभी काव्यों में सौन्दर्य का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता से किया गया है जो कवि का मौलिक कल्पना-संसार है। अष्टम अध्याय शोधप्रबन्ध का उपसंहार है जिसमें कविवर गुलाब खण्डेलवाल के प्रगतिवादी चिन्तन को शब्दायित किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट हो गया है कि

श्री गुलाब परम्परागत प्रगतिवादी नहीं हैं, वे साहित्यिक प्रगतिवादी हैं। उनका आदर्श रूस और मार्क्स नहीं प्रत्युत् भारतीय चिन्तन और भारतीय मनीषी हैं। कवि का, प्रत्येक रचना में, मौलिक चिन्तन सर्वथा सराहनीय है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का प्रमुख उद्देश्य सर्वथा सत्य, शिव और सौन्दर्य के अनन्य उपासक महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की साहित्यिक यात्रा को अध्ययन की परिधि में लाना है। गुलाब जी वास्तव में ऐसे मौन साहित्यिक साधक हैं जिन्होंने साहित्य-साधना के समक्ष प्रचार और प्रसार-हेतु किसी प्रकार के विज्ञापन को महत्त्व नहीं दिया है। रूप, संरचना और प्रतिपाद्य की दृष्टि से गुलाब जी का साहित्य व्यापक और विविधात्मक है। सामान्य उद्देश्यों में प्रबन्ध और मुक्तक काव्य के क्षेत्र में मौलिक प्रयोग, हिन्दी में गीतों का बहुआयामी रूप, ग़ज़ल की हिन्दी में स्थापना, अतुकान्त काव्य में प्राणवत्ता का समावेश, हिन्दी में अंग्रेजी छन्द-सॉनेट का प्रयोग, जापानी छन्द हाइकू का प्रयोग, अरबी फारसी छन्द 'कता' का हिन्दी में प्रयोग आदि के अतिरिक्त पाश्चात्य अनुभवों के समक्ष भारतीय चिन्तन की मौलिकता से पताका फहराना आदि हैं। गुलाब जी लगभग छः दशकों से हिन्दी साहित्य की सेवा में लगे हुए हैं, एक अडिग और अटूट आस्थावादी की भाँति। साधक बाधाओं पर शालीनता और शान्ति से विजय पाता है, साधना को महत्त्व देता है और फलासक्ति में विशेष रति नहीं रखता, तभी तो उपलब्धियाँ पग-पग पर अपने प्रणाम निवेदित करती हैं।

परम् श्रद्धेय गुरुवर्य डॉ0 मिथिलेश शरण मित्तल जी का पग-पग पर वात्सल्य मिश्रित यथार्थ में सहयोग एवं कुशल निर्देशन न मिला होता तो शोध-प्रबंध पूरा कर पाने में लोहे के चने चबाने से भी कोई भयंकर स्थिति से गुज़रना पडता। मैं अपने अन्तर्मन से गुरुवर्य के प्रति नत-शीष हूँ। गुरुवर मुझ पर अपना वरद हस्त बनाये रखें, यह मेरी हार्दिक अभिलाषा है। पिता-तुल्य डॉ0 माता प्रसाद मिश्र का शुभाशिष शोध-प्रबन्ध के रूप में फलित हुआ जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता है, उसके प्रति मेरे श्रद्धा समेत शताधिक प्रणाम निवेदित हैं। मनीषी, विद्वान् और शुभचिन्तक श्री के0 एस0 मिश्र, आई0 ए0 एस0, कस्टम, ने निरन्तर प्रेरणा देकर मेरे साहस एवं साहित्यिक अभिरुचि में गुणात्मक वृद्धि की है। मैं अत्यन्त विनम्रता से उनके प्रति आभार व्यक्त करती हूँ। श्रेष्ठ, बन्धु, कवि और कुशल अध्येता डॉ0 छोटे लाल शर्मा 'नागेन्द्र' के प्रेरणापरक सहयोग को भुलाना कभी सम्भव नहीं है। मैं उनके प्रति

अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। अपनी प्रिय अनुजा तृप्ति (एम0 ए0) के लिए किन शब्दों का प्रयोग करूँ, जो शोध-प्रबन्ध पूर्ण देखने के लिये शीघ्रता का आग्रह करती रही ! प्रिय तृप्ति का सहयोग अविस्मरणीय है।

प्राण-सहचर डॉ0 वी0 के0 मिश्र के प्रति आभार व्यक्त करना अपने प्रति आभार व्यक्त करना होगा। क्लीनिक में निरनतर व्यस्त रहते हुये भी वे शोध-कार्य की ओर सचेत करते रहे हैं। पूज्य पिताश्री डॉ0 ब्रजेन्द्र अवस्थी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कैसे की जा सकती है ! उनके कृपा-रूपी परिवेश से ही तो साहित्यक अभिरुचि जीवन में घुली है।

साथ ही मैं इस शोध-प्रबन्ध के टंकणकार्य के लिये उषा रानी, थीसिस टाइपिस्ट, 'मित्तल टाइपिंग सेण्टर' गली मिर्धानला बड़ा बाजार, बरेली की भी विशेष अनुग्रहीत हूँ जिन्होंने अति अल्प समय में मेरे इस शोध-प्रबन्ध को सुन्दर एवं स्वच्छ रूप में टंकित किया।

अन्त में, मैं उन समस्त महानुभावों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिनका मुझे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग एवं आशीर्वाद मिला है।

पूर्ति मिश्रा

विषय-सूची

अध्याय	विवरण	पृष्ठ-संख्या
प्रथम अध्याय	विषय-प्रवेश - परिचय खण्ड : कवि गुलाब खण्डेलवाल का परिचय	

(क)जीवन-परिचय, शिक्षा, गुरुजन-मण्डली, मित्र एवं शुभचिन्तक-मण्डली, आजीविका, साहित्यिक सीढ़ियाँ चढ़ते साहसी पग, रचनाओं का प्रचार-प्रसार, सम्मान एवं प्रोत्साहन,

(ख)कवि गुलाब खण्डेलवाल का युग (छायावाद से प्रयोगवाद) राजनीतिक परिवेश, सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति, साहित्यिक परिवेश, छायावाद, प्रगतिवाद आदि।

(ग)काव्य-सृजन के प्रेरणा के स्रोत-युगीन परिवेश, अध्ययन, व्यक्तित्वों का प्रभाव, कवीन्द्र रवीन्द्र, महात्मा गांधी, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' आदि। गुलाब खण्डेलवाल का साहित्यिक व्यक्तित्व।

द्वितीय अध्यायः

कवि गुलाब खण्डेलवाल की कृतियों का परिचय -

(क) गीत-काव्यों का परिचय

रचनाकाल, विषयवस्तु एवं प्रकाशन -

(1) चाँदनी, (2) नूपुर-बँधे चरण, (3) ऊसर का फूल, (4) आयु बनी प्रस्तवाना, (5) हम तो गाकर मुक्त हुए (6) सब कुछ कृष्णार्पणम्, (7) कितने जीवन, कितनी बार, (8) नाव सिन्धु में छोड़ी, (9) सीता-वनवास, (10) गीत-वृन्दावन

(ख) प्रबन्धकाव्यों का परिचयः

(1) कच-देवयानी, (2) 'उषा' महाकाव्य, (3) अहल्या, (4) आलोक-वृत्त,

(5) गांधी-भारती, (6) दानवीर बलि। (बलि-निर्वास)

(ग) ग़ज़ल-संग्रहों का परिचय
(1) सौ गुलाब खिले, (2) पँखुरियाँ गुलाब की, (3) कुछ और गुलाब, (4) हर सुबह एक ताज़ा गुलाब।

(घ) अन्य काव्यकृतियों का परिचय-
(1) मेरे भारत, मेरे स्वदेश, (2) रूप की धूप, (3) कविता, (4) सीपी-रचित रेत, (5) शब्दों से परे, (6) व्यक्ति बनकर आ, (7) बूँदें : जो मोती बन गयीं (8) रेत पर चमकती मणियाँ, (9) नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ, (10) चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर, (11) कस्तूरी कुण्डल बसे, (12) एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ, (13) राजराजेश्वर अशोक, (14) भूल।

तृतीय अध्याय :
गीत-विधा और गुलाब खण्डेलवाल के गीत -

(क) गीत की परिभाषाएँ, गीत-काव्य का विकास, गीत के रूप, गुलाब खण्डेलवाल के गीत।

(ख) गीत-संरचना और गुलाब खण्डेलवाल के गीत, प्रेम-गीत व्यंग्य-गीत, धार्मिक गीत, शोक-गीत, वीर-गीत और युद्ध-गीत, भक्ति या वन्दना-गीत, प्रकृति-सम्बन्धी गीत, सामाजिक गीत, सॉनेट।

(ग) गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का विकास

(घ) गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का प्रभाव।

चतुर्थ अध्यायः
प्रबन्धकाव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन

(क) प्रबन्धकाव्य का स्वरूप और गुलाब खण्डेलवाल के प्रबन्धकाव्य, महाकाव्य का स्वरूप। गुलाब खण्डेलवाल के प्रबन्धकाव्य : 'उषा' (महाकाव्य),

'उषा' (महाकाव्य) और 'कामायनी' , 'उषा' (महाकाव्य) और 'प्रिय-प्रवास' , 'उषा' का महाकाव्यत्व।

(ख) गुलाब खण्डेलवाल के महाकाव्य (उषा) का चरित्रगत, शैलीगत एवं प्रभावगत अध्ययन।
'उषा' - (क) चरित्रगत अध्ययन - उषा, किरन, राजीव, प्रभात।
'उषा' - (ख) शैलीगत अध्ययन।
'उषा'- (ग) प्रभावगत अध्ययन

(ग) गुलाव खण्डेलवाल के खण्डकाव्यों का चरित्रगत, शैलीगत और प्रभावगत अध्ययन।
'कच-देवयानी' - कच का चरित्र, देवयानी का चरित्र,
'आलोक-वृत्त' - गांधी का चरित्र
'अहल्या' - अहल्या का चरित्र, देवराज इन्द्र का चरित्र, श्रीराम का चरित्र।
'दानवीर बलि' (बलि-निर्वास) बलि का चरित्र, शुक्राचार्य का चरित्र, देवराज इन्द्र का चरित्र आदि।
'गांधी-भारती' - गांधी का चरित्र।
गुलाब खण्डेलवाल के खण्डकाव्यों का शैलीगत अध्ययन।

पंचम अध्यायः

ग़ज़लों एवं अन्य काव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन -

(क) हिन्दी-ग़ज़ल और गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लें,।

(ख) ग़ज़ल-संरचना और गुलाव खण्डेलवाल की ग़ज़लें-मतला, रदीफ़. काफ़िया, शेर, मकता आदि।

(ग) गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों का विकास

(घ) अन्य काव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन - छायावादी प्रभाव, रहस्यवादी प्रभाव, आदि।

षष्ठ अध्याय :

प्रबन्ध-रूपात्मक काव्यों का मूल्यांकन -

(क) 'उषा' महाकाव्य का प्रतिपाद्य

(ख) 'दानवीन बलि' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य

(ग) 'अहल्या' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य

(घ) 'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य

(ड.) 'कच-देवयानी' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य।

सप्तम अध्याय :

गुलाब खण्डेलवाल के मुक्तक-काव्यों का मूल्यांकन :

(क) गीत-काव्य का प्रतिपाद्य

प्रारम्भिक गीतों का प्रतिपाद्य, मध्यकालीन गीतों का प्रतिपाद्य, तृतीय चरण के गीतों का प्रतिपाद्य

(ख) ग़ज़लसंग्रहों का प्रतिपाद्य -

(ग) अन्य काव्यों का प्रतिपाद्य -

(1) कविता-संग्रहों का प्रतिपाद्य - 'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबो कर', 'सीपी-रचित रेत' , 'रूप की धूप'।

(2) छंदमुक्त काव्यों का प्रतिपाद्य, - 'शब्दों से परे' , 'व्यक्ति बनकर आ', , 'बूँदें जो मोती बन गयीं' , 'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ' , 'कस्तूरी कुण्डल बसे' , 'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ' , 'रेत पर चमकती मणियाँ'।

अष्टम अध्याय :

उपसंहार -

(क) प्रगतिवादी कवियों में गुलाब खण्डेलवाल

(ख) गुलाब खण्डेलवाल का मौलिक स्थान।

परिशिष्ट :

(क) सन्दर्भ-ग्रन्थों की सूची

(ख) महाकवि गुलाब खण्डेलवाल का साहित्य।

प्रथम अध्याय

कवि गुलाब खण्डेलवाल का परिचय

कवि गुलाब खण्डेलवाल का परिचय

व्यक्ति संसार में केवल यथार्थ वस्तु नहीं है जिसे पत्थर आदि की भांति एक ही स्थान पर पड़े रहना पड़ता हो और एकरूपता ही भोगनी पड़ती हो। वह कभी परिस्थितियों में स्वयं ढलता है और कभी परिस्थितियों को ढालता है। इस संसार में वही व्यक्ति अपने कार्य में सफल होते है, जो अपनी परिस्थितियों को अनुकूल बना लेते है और यदि वे बना नहीं सकते तो अपने अनुकूल परिस्थितियों को पैदा कर लेते है।"[1] संसार में जितने भी महान व्यक्ति हुए हैं उन सभीने अपनी परिस्थितियों के साथ समझौता किया है और अपने कृतित्व को वह परिवेश-भूमि दी है जिस पर उनका अभिलषित विकसित और पल्लवित हो सके। व्यक्ति के गौरव में व्यक्ति और संसार दोनों की बराबर की भागीदारी हैं।

साहित्य-जगत् में बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी महाकवि गुलाब खण्डेलवाल साहित्य की अजस्र सुरसरिता प्रवाहित करनेवाले प्रथम कोटि के तथा छायावाद के उत्तरकालीन कवियों में अग्रणी हैं। वे गत पाँच दशकों से देश और विदेश में भ्रमण करते हुए और भांति-भांति के अनुभव ग्रहण करते हुए अपनी सारस्वत साधना को निर्बाध गति से प्रगति दे रहे हैं। भारतीय सभ्यता, संस्कृति, साहित्य, कला, आदर्श और जीवन-मूल्यों के प्रति गुलाब जी के हृदय में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है, उनके प्रति सजग आस्था एवं विश्वास है। कदाचित् इसीलिये वे 'निजता' से निरन्तर जुड़े हुए हैं। उन्होंने विदेशीय और विजातीय प्रभाव को आत्मीयता से ग्रहण तो किया है लेकिन उसको अभिव्यक्ति के धरातल पर उतारने से पूर्व 'निजता' के ढाँचे में ढाला अवश्य है। गुलाब जी द्वारा सृजित प्रकृति और प्रेम की स्वच्छन्द भावव्यंजना के गीत हों या देशभक्ति से अनुप्राणित सशक्त और प्रवाहपूर्ण दोहे और सॉनेट, जीवन की मार्मिक अनुभूतियों से निःसृत ग़ज़लें रुबाइयाँ और मुक्तक हों अथवा गम्भीर चिन्तन

---

1. सूक्ति-सागर : सम्पादक – रमाशंकर गुप्त। जार्ज बर्नार्ड शा का कथन पृ0 460

के शुभ परिणाम, जीवन-दर्शन की विवृत्ति करने वाले महाकाव्य, खण्ड-काव्य और काव्य-नाटक हों, कवि ने सर्वत्र अपनी अप्रतिम मौलिक प्रतिभा का प्रभावशाली परिचय दिया है।

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने किशोर जीवन में रोमाण्टिक सौन्दर्य-बोध से साहित्यिक यात्रा प्रारम्भ की है जो गंगा की भाँति विभिन्न पर्वत श्रेणियों को पार करती, उछलती-कूदती, हँसती-खिलखिलाती और अन्तस स्नेह-रस-सिक्त करती अपने भव्य-गन्तव्य की ओर अग्रसर है। कवि की काव्य-यात्रा जीवन के शाश्वत मूल्यों के शुभ अन्वेषण में संलग्न है। गुलाब जी के साहित्य में न तो मूल्यों के प्रति दुराग्रह है और न किसीके स्थापित मूल्यों के प्रति द्वेष-भाव है, प्रत्युत यों कहना चाहिए कि वे विनम्र मन से पूर्वापर दृष्टि रखते हैं, वर्तमान को निरपेक्ष दृष्टि से देखते हैं तथा 'किम् करणीय, किम् अकरणीय' पर ध्यान देते हुये भविष्योन्मुखी हैं जिससे विधाता की सृष्टि के अच्छे और स्मरणीय साथी बन सकें।

गुलाब जी सहज, सुन्दर, सौम्य आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी हैं। स्वभाव से सरल और निश्छल, प्रचारतंत्र और साहित्यिक अखाड़ेबाजी से उदासीन, भारतीय जीवन-मूल्यों के पोषक, साहित्य को जीवन के लिये और जीवन को साहित्य के लिये मानने के आग्रही, वे आवर्त्तों को झेलते हैं, उनके अन्तराल में छिपे शाश्वत के बल पर, पूरी आस्तिकता से। साहित्य उनकी जीवन-यात्रा है और वह अनवरत् चल रही है।[1] श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अपनी अनवरत् साहित्य-साधना से जो उज्ज्वल मोती हिन्दी-साहित्य-देवता के मन्दिर में अर्पित किये हैं उनसे इतिहास में उनका नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जा चुका है। वे अक्षर दिन-प्रतिदिन दीप्ति-सघन हो रहे हैं।

---

1. महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की कालजयी कृतियों का संक्षिप्त परिचय—प्राचार्य विश्वनाथ सिंह : पृ0 3-4.

कवि गुलाब खण्डेलवाल का जीवन-परिचय

राजस्थान की धरती अन्न, जल, वनस्पति आदि उत्पन्न करने में भले ही पीछे रही हो, लेकिन त्याग-बलिदान, शौर्य-पराक्रम, साहित्य-कला और प्रणवीरता के समर्पित व्यक्तियों को जन्म देने में भारत के अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा बहुत आगे है। भारतीय इतिहास में विभिन्न कोटि के वीरों की शौर्य-गाथाएँ आज भी भारतीय मानस को प्रेरित करती हैं। इसी वीर-प्रसवा भूमि पर जयपुर के निकट अपनी ननिहाल नवलगढ़ नगर (राजस्थान) में गुलाब खण्डेलवाल का जन्म श्री शीतल प्रसाद और बसन्ती देवी दम्पति के यहाँ 21 फरवरी 1924 ई0 को हुआ। इन्हे बाद में उनके सगे ताऊ रायसाहब सुरजूलाल ने गोद ले लिया। गुलाब जी के पूर्वज प्रपितामह राजस्थान में शेखावाटी के अपने गाँव 'मंडावा' से उठ कर बिहार राज्य के अन्तर्गत गया में आ बसे थे। इस प्रकार उनका प्रारम्भिक जीवन 'गया' में बीता। आगे चलकर प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश श्री गुलाब का घर हो गया जहाँ उनकी ससुराल है और जहाँ उनके द्वितीय पुत्र कमल नयन को उनकी सास ने अपना उत्तराधिकारी बना लिया। इधर 8-10 वर्षो से सुदूर अमेरिका में भी वे अपने पाँव जमाये हैं। सन् 1983 ई0 से वर्ष का आधा हिस्सा वे अमेरिका में ही व्यतीत करते हैं। इनका अधिक परिवार अमेरिका में ही बस गया है। श्री गुलाब दोनों ही स्थानों पर दायित्व का निर्वाह करते हुये साहित्यसृजन में गहरी रुचि बनाये हुये हैं।

शिक्षा :

श्री गुलाब खण्डेलवाल की प्रारम्भिक शिक्षा गया (बिहार) में हुई और बी0 ए0 तक की शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से उन्होने 1943 में सपन्न की। प्रारंम्भिक छात्र-जीवन में, कानपुर से गया में पधारे हुए स्वामी नारायणानन्द जी सरस्वती ने बालक गुलाब में नैसर्गिक् काव्य-प्रतिभा देख, उन्हें काव्य-शिक्षा प्रदान की। काशी के छात्र-जीवन की किशोरवस्था में गुलाब जी की 'बेढब बनारसी' से भेंट हुई। बेढबजी ने उनके व्यावहारिक काव्य-गुरु की भूमिका का निर्वाह किया। उन्होंने न केवल काव्य-सृजन में प्रेरणा दी बल्कि गुलाब की कविता को मंच तक पहुँचाया तथा उनकी सुवास से लोक-मानस को सुवासित

भी किया। शिक्षार्जन काल की मात्र 16-17 वर्ष की आयु में, 1941 ई0 में उनके प्रसिद्ध गीतों एवं कविताओं का संग्रह प्रकाशित हुआ जिसकी भूमिका लिखी श्रीयुत् सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने और आशीर्वाद दिया श्री बेढब बनारसी जी ने। श्री गुलाब ने एक ओर विश्वविद्यालयी शिक्षा की उच्च सीढ़ियाँ चढ़ीं और दूसरी ओर वे काव्य के क्षेत्र में भी पैंग बढ़ाने लगे।

गुरुजन-मण्डली :

शिवधाम - काशी, विद्या, काव्य और कला का गढ़ रहा है और आज भी है। हिन्दी और संस्कृत के लिये तो मानो काशी रत्नाकर है। गुलाब खण्डेलवाल जब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्र हुए तब वे अपनी विनयशीलता एवं बेढब बनारसी जी के साहचर्य से उस समय के साहित्य-महारथियों के निकट आने लगे। वे वय में कम होने पर भी प्रसाद-परिषद के सदस्य बना लिये गये जो उस समय के श्रेष्ठ साहित्यकारों की एक मात्र संस्था थी। वे बीसियों साहित्य-गोष्ठियों में बेढब बनारसी, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', बाबू श्याम सुन्दर दास, पण्डित रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पण्डित श्रीनारायण चतुर्वेदी, राय कृष्णदास, पण्डित सीताराम चतुर्वेदी, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, पं0 अयोध्या सिंह उपाध्याय, 'हरिऔध' आदि से मिलने के अवसर पाने लगे। इन गोष्ठियों में किशोर गुलाब खण्डेलवाल अपने सुमधुर कण्ठ से अपनी रचनाएँ सुनाते रहे और गुरुजन-मण्डली उन्हें अपने शुभाशिष से सींचती रही और कविता की बेलि निरन्तर बढ़ती चली।

मित्र एवं शुभचिन्तक-मण्डली :

जैसे-जैसे गुलाब खण्डेलवाल अपनी रचनाओं के द्वारा (कवि सम्मेलनों, पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों के माध्यम से) लोकमानस को अपनी ओर आकर्षित करने लगे, वैसे-वैसे गुलाब खण्डेलवाल की साहित्यिक मित्र-मण्डली का दायरा भी बढ़ने लगा तथा शुभचिन्तकों की संख्या में भी वृद्धि होने लगी। शुभचिन्तकों की लम्बी सूची में से कुछ नाम इस प्रकार हैं - हरिवंश राय बच्चन, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, महाकवि सुमित्रा नन्दन पन्त, सुश्री

महादेवी वर्मा, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर', डॉ0 रामकुमार वर्मा, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, न्यायमूर्ति महेश नारायण शुक्ल, प्राचार्य विश्वनाथ सिंह, माननीय गंगा शरण सिंह, शंकर दयाल सिंह तथा श्री कामता सिंह आदि। कदाचित् ही कोई ऐसा शुभ-चिन्तक हो जिसने श्री गुलाब जी को शुभकामनाओं से भरपूर न किया हो और कवि ने जिनकी टिप्पणियों का सदुपयोग अपनी कृतियों के प्रकाशन में न किया हो। मित्र-मण्डली में कश्मीर के पूर्व युवराज डॉ0 कर्ण सिंह, डॉ0 शम्भुनाथ सिंह, आचार्य विश्वनाथ सिंह, डॉ0 हंसराज त्रिपाठी, डॉ0 कुमार विमल, प्रो0 जगदीश पाण्डेय, प्रो0 देवेन्द्र शर्मा, श्री विश्वम्भर मानव, श्री त्रिलोचन शास्त्री, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', भवानी प्रसाद मिश्र, नथमल केडिया, शेषेन्द्र शर्मा एवं रामकुमारी इन्दिरा धनराजगिरि, डॉ0 राजेश्वर सहाय त्रिपाठी, श्री श्रीधर शास्त्री, श्री विद्यानिवास मिश्र, श्री अर्जुन चौबे काश्यप आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। वैसे देखा जाय तो शुभ चिन्तकों एवं मित्रों और परिचितों की संख्या हजारों में पहुँचेगी। कविवर गुलाब ने साहित्यिक विधाओं की सीढ़ियाँ चढ़ते हुये अपने अत्यन्त विनम्र स्वभाव से देशी और विदेशी शुभ-चिन्तकों तथा मित्रों व परिचितों का वृहत् समाज बना लिया है जिसमें उनकी अच्छी प्रतिष्ठा है।

आजीविका :

श्रीयुत् गुलाब खण्डेलवाल ने प्रतिष्ठित व्यापारी-परिवार में जन्म लिया है जहाँ वे आजीविका की चिन्ता से पहले से ही मुक्त थे। राजस्थान के अधिकांश प्रतिष्ठित व्यापारी भारत के कोने-कोने में फैले हुए हैं और उन्होंने यथेष्ट धन और यश अर्जित किया है। बीकानेर से जाकर कलकत्ता में बसे 'नाहटा बन्धु' की साहित्यिक सेवाओं को नहीं भुलाया जा सकेगा। इसी प्रकार श्री गुलाब खण्डेलवाल के परिवार ने भी व्यापार के क्षेत्र में स्वंय को लगाया था और गया, प्रतापगढ़, कलकत्ता में अपना व्यापारिक केन्द्र विकसित किया था। वे इस तथ्य को भली भाँति जानते थे कि आज के इस भौतिक युग में धन के अभाव में मनुष्य का जीवन प्रश्न-चिह्न जैसा है। भौतिकता, युग की आकांक्षाओं को, तथा जीवनादर्श के प्रतीक गांधी की विचारधारा को लेकर कवि ने भी अनेक बार विचार किया है।[1] कहने का आशय यह है कि श्री गुलाब खण्डेलवाल जैसे

साहित्यिक सीढ़ियाँ चढ़ते गये है वैसे ही आजीविका के क्षेत्र में भी प्रतिष्ठा के साथ आत्म-निर्भर होते चले गये हैं। परिणामतः, आजीविका की चिन्ता ने उन्हें कभी त्रस्त नहीं किया है।

साहित्यिक सीढ़ियाँ चढ़ते साहसी पग :

काशी के साहित्यिक परिवेश ने कविवर गुलाब खण्डेलवाल को ऐसे साहित्यिक रंग में सराबोर किया है कि उनका अन्तः-बाह्य रंग-रंजित हो गया। ज्यों-ज्यों उनकी आयु बढ़ती गयी है त्यों-त्यों उन पर यह रंग अपनी चटक बढ़ाता गया है। एक दिन ऐसा अवश्य आयेगा जब साहित्य-जगत गुलाब के सुर-सुवास से मादक हो उठेगा। साहित्यिक सीढ़ियों पर कवि के साहसी पग नित्य नये उल्लास से अग्रसर हो रहे हैं। इन विकासमान चरणों की गति का अनुमान निम्नांकित तालिका से सहज ही लगाया जा सकता है --

1. कविता (गीत-कविता-संग्रह) रचना, - 1939-1941 ई0
2. चाँदनी (गीतसंग्रह) रचना, -1940-1942 ई0
3. बलि-निर्वास (या दानवीर बलि, काव्य-नाटक) रचना-1943 ई0
4. कच-देवयानी (खण्डकाव्य) रचना-1944-1945 ई0

---

1. **मेरा मन तराजू के काँटे-सा डोल रहा है**
एक पलड़े पर भोगवादी है, एक पर गांधी है,
मनुष्य को अपनी ओर झुकाने के लिये
दोनों ने ही कमर बाँधी है
भोगवादी कहते हैं - भोगों से भागो मत,
उन्हें खुली आँखों भोगो, तभी तुम उनसे छूट पाओगे।
गांधी कहते हैं -
वासना के नागफण को कुचल डालो,
त्याग द्वारा ही भोगों का सुख लूट पाओगे
'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : 'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ' : पृ0 122

5. उषा (महाकाव्य) रचना - 1946-1947 ई0
6. अहल्या (खण्डकाव्य, रचना : 1946-50 ई0
7. मेरे भारत, मेरे स्वदेश (गीत, दोहे) रचना - 1962 ई0
8. रूप की धूप (रुबाइयाँ) रचना - 1960-1970 ई0
9. सौ गुलाब खिले (ग़ज़लें) रचना - 1971-1973 ई0
10. आलोक-वृत्त (खण्डकाव्य) रचना - 1968-1974 ई0
11. गांधी-भारती (भावात्मक प्रबन्ध :) रचना 31 जनवरी 1948 ई0
12. पँखुरिया गुलाब की (ग़ज़लें) रचना - 1973-1977 ई0
13. सीपी-रचित रेत (सॉनेट) रचना - 1941-1946 ई0
14. कुछ और गुलाब (ग़ज़लें) रचना - 1976-1978 ई0
15. नूपुर बंधे चरण (गीत-काव्यरूपक आदि) रचना - 1941-1960 ई0
16. आयु बनी प्रस्तावना (प्रेमगीत) रचना - 1949-1971 ई0
17. शब्दों से परे (गीत एवं कविता) रचना - 1960-1980 ई0
18. व्यक्ति बनकर आ (आध्यात्मिक कविताएँ) रचना - 1981-1982 ई0
19. बूँदें जो मोती बन गयीं (कविताएँ) रचना - 1981-1982 ई0
20. हर सुबह एक ताज़ा गुलाब (ग़ज़ले) रचना - 1977-1980 ई0
21. कस्तूरी कुण्डल बसे (मुक्तक) रचना - 1983 ई0
22. राजराजेश्वर अशोक (ऐतिहासिक नाटक) रचना - 1971 ई0
23. भूल (सामाजिक नाटक) रचना - 1950 ई0
24. सब कुछ कृष्णार्पणम् (गीत) रचना - 1985 ई0
25. ऊसर का फूल (गीत कविता आदि) रचना : 1941-1948 ई0
26. नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ (कविता) रचना : 1983-1984 ई0
27. चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर
(गीत : कविता) रचना - 1947-1983 ई0
28. हम तो गाकर मुक्त हुए (गीत) रचना - 1986-1987 ई0
29. कितने जीवन, कितनी बार (गीत) रचना - 1988 ई0
30. हमने नाव सिंधु में छोड़ी : (गीत) रचनाः - 1990 ई0
31. गीत-वृन्दावन (गीत-प्रबंध) रचना - 1992 ई0
32. सीता-वनवास (गीत-प्रबंध) रचना - 1993 ई0
33. आधुनिक कवि (कवि द्वारा संकलित अपनी रचनाओं का संग्रह,
प्रकाशन-वर्ष 1983 ई0,

पद्मभूषण पं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी के सम्पादकत्व में श्री गुलाब खण्डेलवाल का, सन् 1990 ई0 तक, समस्त साहित्य गुलाब-ग्रन्थावली के रूप में प्रकाशित हुआ है। गुलाब-ग्रन्थावली के चार खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। गुलाब-ग्रन्थावली के सन्दर्भ में इतना समीचीन प्रतीत हो रहा है कि कविवर गुलाब का अब समस्त साहित्य चार ही जिल्दों में सहज ही उपलब्ध है। दूसरे, कई ऐसी रचनाएँ (रचना-संग्रह भी) जो पुस्तकाकार सामने नहीं आयीं, उन्हें भी इन खण्डों में सुगमता से देखा जा सकता है। कवि ने अंग्रेजी में भी काव्य-सृजन किया है। हमने उसे अपने परिकर में नहीं लिया है।

अद्भुत साहित्य-सृष्टा कवि गुलाब खण्डेलवाल के रचना-संसार को देखने से पता चलता है कि कवि ने प्रारम्भ से बड़ी तीव्र गति से काव्य-सृजन किया है लेकिन 1950 ई0 से रचना-सृजन में प्रायः शैथिल्य रहा। इस सन्दर्भ में कवि ने लिखा है सन् 1951 ई0 से 1960 ई0 के दशक में कुछ फुटकर रचनाओं को छोड़कर मैंने कुछ विशेष नया नहीं लिखा। 1960 ई0 के बाद मैं पुनः थोड़ा सक्रिय हुआ। चीन के भारत पर आक्रमण के समय मैंने डिंगल दोहों जैसे, खड़ी बोली में वीर रस के दोहे, तथा कुछ कविताएँ लिखीं, जो 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' के नाम से उन्ही दिनों पुस्तकाकार छपीं।'[2] लगभग गत पाँच दशकों से कवि गुलाब खण्डेलवाल साहित्य-साधना में संलग्न हैं। उन्होंने इस बात की चिन्ता कभी महसूस नहीं की कि उनकी चर्चा साहित्य-जगत् में है अथवा नहीं। कवि का विश्वास है - 'सच्ची ख्याति के लिए, विरले भाग्यशालियों को छोड़कर, अधिकांश को प्रतीक्षा करनी पड़ती है। भवभूति ने 'कालोह्ययं

---

1. इस ग्रन्थमाला की विशेषता यह है कि कवि अपनी कविताओं का चयन कर स्वयं ही उन पर सव्याख्या अपनी रचना-प्रक्रिया को प्रस्तुत करता है। प्रत्येक काव्य-संग्रह में कवि की हस्तलिपि का नमूना और उसकी प्रतिकृति का रेखाचित्र रहता है।
   प्रकाशकीय - डॉ0 प्रेम नारायण शुक्ल : साहित्य मंत्री (1983 ई0) हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग।
2. 'आधुनिक कवि' (19) गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 9.

निर्वधिर्विपुला वपृथिवी' लिखकर इसी सन्दर्भ में अपनी मर्म-व्यथा व्यक्त की है। साहित्य के मार्ग में पदार्पण करनेवाले को चोंच में जल लेकर समुद्र को सुखाने का प्रयास करनेवाली टिटिहरी के समान धैर्य धारण करना सीखना होता है।'[1] कवि को कवि-कर्म पर अधिक विश्वास है।

रचनाओं का प्रचार-प्रसार :

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ज्यों-ज्यों नयी-नयी रचनाएँ नयी-नयी विधाओं में रचते गये त्यों-त्यों उन रचनाओं के संग्रह भी प्रकाशित होते गये। चूँकि लोक में कवि की रचनाओं का भरपूर स्वागत हुआ और शुभचिन्तकों द्वारा तथा प्रशंसकों द्वारा सराहना की गयी इसलिए काव्य-जगत में कवि को रमना ठीक लगा। जब किसी रचनाकार की रचना में दम होता है तो उसकी सर्वत्र जय-जयकार होती ही है। प्रमुख रूप से कविवर गुलाब की रचनाएँ पुस्तकाकार रूप में 'वाणी-प्रकाशन', 'अर्चना-प्रकाशन' और 'कमल-प्रकाशन' से प्रकाशित हुई हैं। आगे चलकर आधुनिक कवि-योजना के अन्तर्गत साहित्य-सम्मेलन प्रयाग ने भी प्रकाशन किया। 'गुलाब-ग्रन्थावली' (चार खण्ड) का प्रकाशन कवि-प्रसिद्धि और रचनाओं की सम्यक् प्रचार-प्रसार-दृष्टि को द्योतित करता है। प्रचार-प्रसार को ध्यान में रखकर ही कवि और उसकी समस्त कृतियों की संक्षिप्त परिचय-पुस्तिकाएँ (दो) भी प्रस्तुत की गई हैं जिनसे भी कुछ जानकारी प्राप्त हो जाती है।

सम्मान एवं प्रोत्साहन :

कविवर गुलाब खण्डेलवाल की जो पुस्तकें सम्मानित एवं पुरस्कृत हुई हैं उनकी सूची इस प्रकार हैं -

1. 'उषा' (महाकाव्य) उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 1967 ई0 में पुरस्कृत।
2. 'रूप की धूप' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा - 1971 ई0 में पुरस्कृत
3. 'सौ गुलाब खिले' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा - 1975 ई0 में पुरस्कृत
4. 'कुछ और गुलाब' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा - 1980 ई0 में पुरस्कृत

---

1. आधुनिक कवि(19) : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 15

5. 'अहल्या' उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा विशिष्ट पुरस्कार 1980 ई0

6. 'अहल्या' श्री हनुमान मन्दिर ट्रस्ट, कलकत्ता द्वारा अखिल भारतीय राम-भक्ति पुरस्कार - 1984 ई0।

7. 'आधुनिक कवि — 19, बिहार सरकार द्वारा - साहित्य सम्बन्धी अखिल भारतीय ग्रन्थ-पुरस्कार।

8. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' - उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 1989 ई0 का निराला-पुरस्कार।

देशीय पुरस्कार तथा सम्मान के अतिरिक्त विदेश में भी श्री गुलाब खण्डेलवाल को हिन्दी-कवि के रूप में सम्मान मिला है - 'श्री गुलाब खण्डेलवाल की साहित्यिक उपलब्धियों के सम्मानार्थ उन्हें 1985 ई0 में अमेरिका की बाल्टीमोर नगर की सम्मानित नागरिकता प्रदान की गयी एवं 6 दिसम्बर 1986 ई0 को राजधानी वाशिंगटन में वे अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी-समिति, अमेरिका द्वारा विशिष्ठ कवि के रूप में सम्मानित किये गये। इस अवसर पर मेरीलैण्ड राज्य के गवर्नर ने समस्त मेरीलैण्ड राज्य में तथा बाल्टीमोर के मेयर ने बाल्टीमोर नगर में हिन्दी दिवस की घोषणा की।[1] उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने कविवर गुलाब खण्डेलवाल को 1979 ई0 में सम्मानित किया और 1989 ई0 में अ. भा. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने उनकी सुदीर्घ हिन्दी-साहित्य-सेवा को देखते हुये 'साहित्य वाचस्पति' की सर्वोच्च मानद उपाधि से उन्हें सम्मानित किया है।

जहाँ विभिन्न विश्वविद्यालयों में साहित्य-मनीषी गुलाब खण्डेलवाल के साहित्य के विभिन्न रूपों एवं पक्षों को लेकर विभिन्न स्तरीय शोध-प्रबन्ध लिखे गये है और लिखे जा रहे हैं वहीं दूसरी ओर उनके साहित्य को लेकर पत्र-पत्रिकाओं और विद्वानों के मध्य चर्चा होने लगी है। देश और विदेश में कवि को जो असाधारण रूप से सम्मान मिला है, वह जोड़-तोड़ की राजनीति से सम्बन्धित नहीं बल्कि वह कवि की सुदीर्घ साहित्य-साधना का परिणाम है। कवि ने लिखा है - 'फूल में यदि कुछ सुगन्ध होगी तो वह लोगों का मन मोह ही लेगी। वैसे मैं मानता हूँ कि साहित्य का अन्तिम निर्णायक काल ही होता है। मैंने निश्चिन्त भाव से अपने को उसके हाथों में सौंप रखा है।'[2] काल ने

---

1. महाकवि गुलाब और उनकी कृतियाँ : पृ0 ढ
2. 'आधुनिक कवि' (19) : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 17.

भी कवि की रचानाओं का सम्यक मान किया है तभी तो कवि को अपनी रचनाओं पर अनेक पुरस्कार, सम्मान, उपाधि आदि जैसे रत्न मिले हैं एवं उत्तर प्रदेश की माध्यमिक शिक्षा में इण्टर कक्षाओं मे 'आलोक-वृत्त' 1976 ई0 से तथा विहार राज्य में भी 1990 ई0 से बी.ए. में अध्ययन-हेतु अनिवार्य किया गया है। कवि गुलाव खण्डेलवाल का महाकाव्य 'उषा' मगध विश्वविद्यालय में 1967 ई0 से बी. ए. में पढ़ाया जा रहा हैं। निकट भविष्य में और भी स्वर्णिम सम्भावनाएँ हैं। यह सम्भावना इसलिये की जा सकती है कि कवि ने कागज रँगे नहीं है बल्कि अन्तरानुराग को अभिव्यक्ति दी है -

न तो मैं तेरी रूप-माधुरी
कागज पर उतार पाता हूँ
न अपने प्रेम की विकलता
शब्दों में उभार पाता हूँ
फिर इन कविताओं का क्या प्रयोजन है !
मेरा यह समस्त वाग्विलास क्या व्यर्थ नहीं है !
सच्ची बात तो यह है
यदि मेरी पंक्ति-पंक्ति से
तेरे प्रेम की सुगंध नहीं आती है
तो केवल कागज काले करते जाने का
कोई अर्थ नहीं हैं।[1]

(ख) कवि गुलाब खण्डेलवाल का युग :

कोई कवि या कलाकार यह नहीं कह सकता है कि मैं युगीन प्रभाव से निर्पेक्ष रहूँगा अथवा इतनी मात्रा में ही प्रभाव ग्रहण करूँगा अथवा मैं बिल्कुल भी प्रभाव ग्रहण नहीं करूँगा। यदि कोई कवि या कलाकार ऐसी क्षमता का है तो वह अपनी क्षमता के प्रति और दायित्व-बोध के प्रति न्याय नहीं कर सकता है। समाज में व्याप्त राजनीति, धर्म, अर्थ, नैतिकता, साहित्य आदि कुछ ऐसे घटक हैं जो कवि और कलाकारों को ही नहीं, बल्कि साधारण से साधारण

---

1. 'गुलाव-ग्रन्थावली' (द्वितीय खण्ड) : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी : (एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ) : पृ0 186-187.

व्यक्ति को भी प्रभावित करते हैं। कवि अपने से पूर्ववर्ती कवियों से अपेक्षानुकूल प्रभाव ग्रहण करता है, वर्तमान को खुली आँखों से देखकर नई गतिशीलता को दिशा देता है और भविष्य की ओर उन्मुख होकर ऐसी दिशा-दृष्टि देता है जो मनुष्यता एवं जीवन-मूल्यों को किसी भी सीमा तक सोन्मुख न होने दे।

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने बीसवीं सदी के तृतीय दशक के अंतिम दिनों में काव्य-सृजन प्रारम्भ किया है। वे चतुर्थ दशक से वर्तमान दशक तक निरन्तर सरल-विरल और विशिष्ट गति से लिखते चले आ रहे हैं। लगभग पाँच दशकों में भारतीय जीवन में अनेक उतार-चढ़ाव आये और गये हैं। कवि के साहित्य एवं साहित्यिक व्यक्तित्व पर सम्यक चर्चा करने के लिये कवि के युग पर दृष्टिपात करना अपेक्षित प्रतीत होता है। कवि ने विभिन्न मानसिकताओं, स्थितियों, परिवेशों और आन्दोलनों को देखा और सहा है, अतः उनका यथार्थ अवलोकन अपेक्षित है।

राजनीतिक परिवेश :

भारतवर्ष में मुगलों के पतन के साथ ही मध्ययुग का अन्त होता है। लेकिन हमारा युग मध्ययुग की तरह अंधकार युग नहीं है। यह तो धार्मिक सन्तों की चेतना से सम्पन्न तथा समृद्ध काल है।[1] इसी युग में हिन्दू संस्कृति एवं अस्मिता पर अंग्रेजों का हमला हुआ जिसका प्रतिरोध हमें 1857 ई0 के स्वतन्त्रता-आन्दोलन के रूप में देखने को मिला। हिन्दू अंग्रेजों से भयभीत नहीं था। 'भारत यूरोप के साथ आनेवाले धर्म से नहीं डरा बल्कि भय उसे यूरोप के विज्ञान को देखकर हुआ। उसकी बुद्धिवादिता, साहस और कर्मठता से हुआ। अवएव भारत में नवोत्थान का जो आन्दोलन उठा, उसका लक्ष्य अपना धर्म, अपनी परम्परा और अपने विश्वासों का त्याग नहीं, प्रत्युत यूरोप की विशिष्टताओं के साथ उनका सामंजस्य बिठाना था।[2] यूरोपियन जातियों ने (विशेष कर ब्रिटेन ने) भारत पर सभी ओर से आक्रमण किया। महात्मा गांधी को जब 10 मार्च 1922 को गिरफ्तार किया गया तो उन्होंने आरोपपत्र के उत्तर में जो बयान दिया उसकी कुछ पंक्तियों से भारत को पोर-पोर लूटने

---

1. 'पं0 रामनरेश त्रिपाठी का काव्य' : डॉ0 कृष्ण दत्त पालीवाल : पृ0 18.
2. 'संस्कृति के चार अध्याय' : रामधारी सिंह 'दिनकर' : पृ0 537.

की बात प्रमाणित हो जाती है - 'न चाहते हुये भी मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि ब्रिटेन के सम्बन्ध ने भारत को राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से इतना असहाय बना दिया है जितना वह पहले कभी नहीं था। एक निहत्थे भारत में आक्रमण का मुकाबला करने की शक्ति नहीं है। वह इतना गरीब हो गया है कि अकाल तक का मुकाबला करने के लिए उसके पास अत्यन्त क्षीण शक्ति है। शहरों के रहनेवाले नहीं जानते हैं कि किस तरह आधा पेट भोजन करनेवाली जनता धीरे-धीरे मृत्यु के निकट पहुँच रही है।'[1] अग्रचेता गांधी ने इस बात को भली भाँति जान लिया था कि राजनीतिक शक्ति सामान्य आदमी के पास है जो गाँवों में रहता है या शहरों में मजदूरी कर गुज़ारा करता है।

गांधी जी ने कांग्रेसजनों, मुस्लिम लीगियों, धर्म-सम्प्रदायों, विरोधियों, अंग्रेजों और सामान्य से विशिष्ट वर्ग तक, सभीको किसी-न-किसी रूप में प्रभावित किया है। दिनकर जी ने लिखा है - 'गांधी जी के इस महाव्यापक प्रभाव को दृष्टिगत रखते हुए यह सरल कार्य नही है कि हिन्दू-नवोत्थान की पृष्ठभूमि पर उनका प्रभाव समग्र रूप से आँका जा सके। जन्म और विकास तो उनका भी सांस्कृतिक नवोत्थान के कारण हुआ, किन्तु काल को खींचकर वे अपनी दिशा की ओर ले गये।[2] 'गांधी जी ने धर्म, दर्शन, साहित्य और राजनीति को एक कर दिया।'[3] गांधी जी मनुष्य और समाज दोनों को ही समान रूप से महत्त्व देते थे। पं0 नेहरू ने भी प्रकारान्तर से इसे स्वीकार किया है 'मैं इस तथ्य का कायल हूँ कि हिन्दुस्तान की और दुनिया की समस्याओं के हल की कुंजी समाजवाद में निहित है और जब मैं इस शब्द का इस्तेमाल करता हूँ तो वह इस्तेमाल वैज्ञानिक और आर्थिक अर्थ में होता है। एक अस्पष्ट मानवतावादी तरीके से नहीं। उसमें हमारे राजनीतिक और सामाजिक ढाँचे में व्यापक और क्रांतिकारी परिवर्तन, भूमि और उद्योग में निहित स्वार्थ और उसके साथ ही भारतीय रियासतों के सामंती और स्वेच्छाचारी शासन की समाप्ति शामिल है।'[4] यही वह दृष्टि है जिसने पन्द्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालिस को स्वतन्त्रता प्राप्त की और विभाजन की त्रासदी को भोगा।

---

1. 'स्वतन्त्रता-संग्राम' : (अनुवाद) : रामसेवक श्रीवास्तव : पृ0 137.
2. 'संस्कृति के चार अध्याय' : रामधारी सिंह 'दिनकर' : पृ0 627.
3. 'पं0 रामनरेश त्रिपाठी का काव्य', डॉ0 कृष्णदत्त पालीवाल : पृ 0 34-35.
4. 'स्वतन्त्रता-संग्राम' (अनुवादक) : रामसेवक श्रीवास्तव : पृ0 191.

स्वतन्त्रता-प्राप्ति का अर्थ खुली छूट ने ले लिया। संज्ञा, पद और मान को लूटने की होड़ में महात्मा गांधी के बलिदान को भुला दिया गया और भूखों की भाँति लोग संज्ञा, पद और धन पर टूट पड़े। संविधान की उपेक्षा धर्म-ग्रन्थ की भाँति की जाने लगी। जो अपने बलिदान से स्वतन्त्रता देवी को लाये, वे अपनी आँखों के आगे उसकी दुर्दशा मौन होकर देखने लगे। भाषा, जाति, वंश, क्षेत्र आदि के सहारे राष्ट्र को तोड़ने तथा स्वयं को सत्ता से जोड़ने की राजनीति में लोलुपों की वृद्धि हो गयी। इस राजनीतिक अस्थिरता के परिणाम-स्वरूप 1962 ई0 में चीन द्वारा भारत पर आक्रमण हुआ और देश का कुछ भू-भाग चला गया। 1965 ई0 में पाकिस्तान के साथ युद्ध हुआ और 1971 ई0 में पाकिस्तान के साथ पुनः युद्ध हुआ और बांग्ला देश का उदय हुआ। आन्तरिक कलह के कारण प्रदेशों का पुनर्गठन हुआ। तुष्टीकरण की नीति ने राष्ट्र की स्थिति अत्यन्त दयनीय कर दी। अब उत्तरांचल प्रदेश, बोडो समस्या, वनांचल प्रदेश, आतंकवाद, उग्रवाद, खलिस्तान आदि कुछ ऐसी समस्यायें हैं जिनके कारण बार-बार राष्ट्रपति-शासन, अस्थिर सरकारें और लूट-पाट-हत्या आदि की गतिविधियों से देश गुज़र रहा है। राष्ट्रीय, प्रान्तीय, क्षेत्रीय, धार्मिक, साम्प्रदायिक और व्यक्तिवादी संगठनों का रूप देश को विकृति की दिशा में ले जा रहा है।

सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति :

स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, महात्मा गांधी, विनोबा भावे, आदि के सतत प्रयत्नों का शुभ परिणाम ही माना जायगा कि राष्ट्र में उत्तरोत्तर शिक्षा, कला, साहित्य, विज्ञान की आशातीत प्रगति हुई है। 'भारत में धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलनों ने सिद्ध कर दिया था कि हिन्दुत्व का सूर्य अब उदित हो चुका है, उसे दबाया नहीं जा सकता है। इन आन्दोलनों ने सामाजिक तथा राष्ट्रीय उत्थान में प्राण फूँक दिये। बाल-विवाह, विधवाविवाह, अनमेल विवाह, छुआछूत, तथा साम्प्रदायिकता से मुक्ति आदि के सुधार आदि इन्ही के परिणाम थे। इन्होंने पाश्चात्य सभ्यता की कुरीतियों का भण्डाफोड़ करते हुये हिन्दुत्व के प्राचीन गौरव को पुनरुज्जीवित करने का प्रयास किया।[1] लेकिन स्वतन्त्रता के पश्चात् देखा जा रहा है कि

---

1. 'पं0 रामनरेश त्रिपाठी का काव्य' : डॉ0 कृष्ण दत्त पालीवाल : पृ0 29.

पाश्चात्य संस्कृति, सभ्यता और साहित्य का भारतवर्ष में इतना बोलबाला है कि भारतीय स्वयं को अंग्रेज बनाने लगा है यद्यपि यहाँ शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार कई गुना बढ़ गया है। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में ही राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा था -

करके सुशिक्षा की उपेक्षा, यों पतित हम हो रहे
हो प्राप्त पशुता को स्वंय मनुजत्व अपना खो रहे
आहार-निद्रा आदि में नर और पशु क्या सम नहीं
है ज्ञान का बस भेद सो भूले उसे क्या हम नहीं !
धर्मोपदेशक विश्व में जाते जहाँ से थे सदा
शिक्षार्थ आते थे जहाँ संसार के जन सर्वदा
अज्ञान के अनुचर वहाँ अब फिर रहे फूले हुए
हम आज अपने आपको भी हैं स्वयं भूले हुए

विदेशी शासकों द्वारा आर्थिक दृष्टि से पंगु किया गया देश अर्थनीति में और प्रगति में आत्म-निर्भर होता जा रहा है। यातायात के साधनों का प्रसार, विदेशी व्यापार, पंचवर्षीय योजनाएँ, उन्नततम कृषि-उत्पादन एवं साधन, कल-कारखानों की वृद्धि, विज्ञान का उद्योग-धन्धों में प्रवेश, अन्तर-राष्ट्रीय स्तर पर परस्पर सहयोग आदि से भारत आत्मनिर्भर होता जा रहा है लेकिन देश में बढ़ती अराजकता, राजनीतिक अस्थिरता, भ्रष्टाचार की अभिवृद्धि और व्यापारी वर्ग की स्वच्छन्दता निरन्तर राष्ट्र के लिये घातक सिद्ध हो रही है। फिर भी कृषि-विश्वविद्यालयों की शोधों, नहरों का फैलाव, बीजों की उन्नत अवस्था, बाजार प्रणाली में सुधार, सिँचाई के साधनों का विस्तार आदि से आर्थिक प्रगति हो रही है।

साहित्यिक परिवेश :

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में हिन्दी-साहित्य का नेतृत्व आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (1864-1936 ई0) ने किया। 'सरस्वती' नामक पत्रिका के सम्पादक के रूप में उन्होंने पुनरुत्थानवादी काव्य का आन्दोलन प्रवर्तित किया और बीस वर्ष के भीतर ही (1920 ई0 के आस पास तक) हिन्दी-काव्य की

धारा को नया रूप प्रदान किया।[1] दूसरी ओर स्वच्छन्दतावाद का स्वर भी प्रखर होता रहा। पदुमलाल पुन्नालाल बक्शी और मुकुटधर पाण्डेय की कविता में स्वच्छन्तावादी प्रवृत्ति और रहस्यभावना सही ढंग से व्यक्त हुई थी पर उन्होंने आगे चलकर कविता लिखना ही बन्द कर दिया। जयशंकर प्रसाद इस दिशा में बराबर आगे बढ़ते गये। 1916-17 ई0 के बाद सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' और सुमित्रानन्दन पन्त ने स्वच्छन्द प्रवृत्ति का काव्य लिखना शुरू किया। यही काव्यधारा 1920 के बाद हिन्दी की प्रमुख काव्यधारा बन गयी। इसीको छायावाद नाम दिया गया जिसकी एक प्रवृत्ति रहस्यवाद की थी।[2] आचार्य द्विवेदी द्वारा प्रेरित और बहुचर्चित इतिवृत्तात्मक काव्य के प्रतिक्रिया-स्वरूप स्वच्छन्दतावादी कवियों ने छायावादी एवं रहस्यवादी कविता प्रारम्भ की। डॉ0 गुप्त ने लिखा - 'हिन्दी कविता के क्षेत्र में प्रथम महायुद्ध (1914-1918 ई0) के आसपास एक विशेष काव्यधारा का प्रवर्तन हुआ, जिसे छायावाद की संज्ञा दी गयी है।[3]

श्री जयशंकर प्रसाद की कृति 'आँसू' छायावाद की प्रथम कृति है। शुक्ल जी ने इस सन्दर्भ में लिखा - 'पहली विशिष्ट रचना आँसू (वि0 सं0 1988) है। आँसू वास्तव में तो शृंगारी विप्रलम्भ के है जिनमें अतीत संयोग-सुख की भिन्न स्मृतियाँ रह-रह कर झलक मारती हैं। पर जहाँ प्रेम की मादकता की बेसुधी में प्रेमी नीचे से ऊपर चले जाते है और समाधि की दशा प्राप्त कर लेते हैं, जहाँ हृदय की तरंगे उस अनन्त कोने को नहलाने चलती हैं, वहाँ से आँसू उस अज्ञात प्रियतम के लिये जान पड़ते हैं।[4] इस कृति के साथ ही छायावाद और रहस्यवाद की चर्चा प्रारम्भ हुई। वैसे - 'शुक्ल जी के मतानुसार, छायावाद का जन्मकाल 1905 ई0 के आसपास बैठता है। इलाचन्द जोशी छायावाद का जनक जयशंकर प्रसाद को तथा जन्मकाल 1913-1914 ई0 के लगभग मानते है। विनय मोहन शर्मा तथा प्रभाकर माचवे छायावाद का जन्म तो 1913 ई0 के आसपास मानते हैं परन्तु वे इसका प्रवर्तक भारतीय आत्मा माखनलाल चतुर्वेदी को मानते है। आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी, सुमित्रानन्दन पन्त को छायावाद के प्रवर्तक का श्रेय देते है। उनका मत है - 'साहित्यिक दृष्टि से

---

1. 'भारत-भारती' (वर्तमान खण्ड) : मैथिली शरण गुप्त : पृ0 126.
2. 'हिन्दी-काव्य की सामाजिक भूमिका' : डॉ0 शम्भुनाथ सिंह : पृ0 285
3. 'हिन्दी-साहित्य का विकास' : डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त : पृ0 281
4. 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' : रामचन्द्र शुक्ल : पृ0 680

छायावादी काव्य-शैली का वास्तविक काव्य-अभ्युदय 1920 ई0 के पश्चात् सुमित्रानन्दन पन्त की 'उच्छ्वास' नाम की काव्य-पुस्तिका के साथ माना जा सकता है।[1] छायावादी कविताओं से वास्तव में युगान्तर हुआ। इन पर रवीन्द्र की 'गीतांजलि' की कविताओं का भी प्रभाव पड़ा।[2]

छायावाद को शब्दायित करते हुये आचार्य शुक्ल ने लिखा - 'पुराने इसाई सन्तों के छायाभास तथा यूरोपीय काव्य-क्षेत्र में प्रवर्तित आध्यात्मिक प्रतीकवाद के अनुकरण पर रची जाने के कारण बंगाल में ऐसी कविताएँ छायावाद कही जाने लगीं।[3] जयशंकर प्रसाद ने परिभाषित करते हुए लिखा - 'जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतियाँ अभिव्यक्त होने लगीं तब उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया जाने लगा। रीतिकालीन प्रचलित परम्परा से, जिसमें बाह्य वर्णन की प्रधानता थी, इस ढंग की कविताओं में, भिन्न-भिन्न प्रकार के भावों की नये ढंग से अभिव्यक्ति हुई। ये नवीन भाव, आन्तरिक स्पर्श से पुलकित थे। अभ्यन्तर के सूक्ष्म भावों की प्रेरणा बाह्य स्थूल आकार में भी कुछ विचित्रता उत्पन्न करती है। सूक्ष्म अभ्यन्तर-भावों के व्यवहार में प्रचलित पदयोजना असफल रही। उसके लिये नवीन शैली, नया पद-विन्यास आवश्यक था। हिन्दी में नवीन शब्दों की भंगिमा स्पृहणीय अभ्यन्तर-वर्णन के लिये प्रयुक्त होने लगी। शब्द-विन्यास पर ऐसा पानी चढ़ा कि उसमें एक सूक्ष्म अभिव्यक्ति का प्रयास किया गया।[4] समीक्षक 'मानव' जी ने परिभाषा देते हुए कहा छायावाद प्रकृति में मानव-जीवन का प्रतिबिम्ब देखता है, रहस्यवाद समस्त सृष्टि में ईश्वर का। ईश्वर अव्यक्त है और मनुष्य व्यक्त। इसलिये छाया मनुष्य की, व्यक्ति की ही देखी जा सकती है, अव्यक्त की नहीं। अव्यक्त अव्यक्त ही रहता है।[5] डॉ0 भगीरथ मिश्र ने लिखा - 'छायावाद आधुनिक हिन्दी-काव्य की एक विशेष प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्ति का सम्बन्ध केवल विषय या वर्ण्यगत ही नहीं वरन् वर्णन या शैलीगत भी है।[6] श्री शुक्ल ने छायावाद को लक्ष्य कर कहा ' छायावादी

---

1. 'साहित्य-कोश' : धीरेन्द्र वर्मा से उद्धृत।
2. 'हिन्दी-कविता में युगान्तर' : डॉ0 सुधीन्द्र : पृ0 246.
3. 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' : रामचन्द्र शुक्ल : पृ0 651.
4. 'काव्य, कला तथा अन्य निबन्ध' : जयशंकर प्रसाद : पृ0 143.
5. 'सुमित्रानन्दन पन्त' : विश्वम्भर मानव : पृ0 45.
6. 'हिन्दी-साहित्य का उद्भव और विकास' : भागीरथ मिश्र : पृ0 208.

कविता में बाह्य वास्तविकता से अपने को अलग करने की प्रवृत्ति लक्षित होती है। छायावादी कवि बाह्य पदार्थों के वर्णन में प्रवृत्त न होकर अपनी आन्तरिक अनुभूतियों में अधिक संलग्न प्रतीत होता है। बाह्यात्मकता से अधिक अन्तर्दर्शन की प्रवृत्ति छायावादी कविता की प्रधान विशिष्टता है।[1] छायावाद आन्तरिक भावों की नयी शैली में अभिव्यक्ति की कला है।

छायावाद की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि छायावाद में निम्नलिखित तत्त्व पाये जाते हैं -

1. छायावाद और रहस्यवाद एक हैं।
2. छायावाद एक शैली विशेष है।
3. छायावाद प्रकृति में मानव-जीवन का प्रतिबिम्ब देखता है अर्थात् प्रकृति का मानवीकरण करता है।
4. छायावाद एक दार्शनिक अनुभूति है।
5. छायावाद एक भावात्मक दृष्टिकोण है।
6. छायावाद में प्रेम का चित्रण होता है।
7. छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है।
8. छायावाद में प्रकृति का चित्रण होता है।
9. छायावाद में गीति-तत्त्व की प्रमुखता होती है।[2]

जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, निराला और महादेवी वर्मा ने छायावाद और रहस्यवाद से ओत-प्रोत कविताएँ लिखीं। ये कविताएँ युग-परिवर्तन में समर्थ हुईं। जयशंकर प्रसाद की कविताओं ने लोकमानस को सबसे अधिक प्रभावित किया। छायावाद के प्रवर्तन में 'इन्दु' पत्रिका का महत्त्व असंदिग्ध है - 'अपने समय में 'इन्दु' की हिन्दी-साहित्यक्षेत्र में वही मान्यता और प्रतिष्ठा रही है जो 'सरस्वती' की थी। अन्तर यही है कि 'सरस्वती' मर्यादावाद और आदर्शवाद के प्रति समर्पित रही और अपनी निर्धारित नीतियों के आधार पर छायावाद को सीमित मात्रा में प्रोत्साहन दे सकी जबकि 'इन्दु' अपने प्रारम्भ से ही नव काव्योन्मेष की समर्थक बन कर चली। छायावाद के सम्वर्धन में

---

1. 'आधुनिक हिन्दी-काव्यधारा का सांस्कृतिक स्रोत' : केसरी नारायण शुक्ल : पृ0 170.
2. 'हिन्दी-साहित्य का विकास' : डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त : पृ0 283.

इसका ऐतिहासिक महत्त्व है।[1] इसी प्रकार 'मतवाला', 'हंस' आदि पत्रिकाओं ने भी छायावाद के प्रचार-प्रसार में यथार्थ सहयोग दिया है।

जयशंकर प्रसाद के काव्य से कतिपय उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं यथा-

संयोग -

चंचला स्नान कर आवे, चन्द्रिका पर्व में जैसे
उस पावन तन की शोभा, आलोक-मधुर थी ऐसे।[2]

दो काठों की सन्धि बीच, उस निभृत गुफा में अपने
अग्नि-शिखा बुझ गयी जागने पर जैसे सुख-सपने।[3]

वियोग-श्रृंगार

पागल रे ! वह मिलता है कब, उसको तो देते ही हैं सब
आँसू के कन-कन से गिनकर यह विश्व लिये हैं ऋण उधार।[4]

निराला जी के काव्य से कतिपय उदाहरण -

(1) उगा उगा उर में प्रेमांकुर मधुर-मधुर कर प्रशमित मन
बादल में आये जीवनधन।[5]

(2)प्रेम, हाय! आशा का वह भी स्वप्न एक था
विफल हृदय तो आज दुःख ही दुःख देखता।[6]

---

1. 'छायावादी कवि और काव्य' : डॉ0 श्रीदेवी खरे : पृ0 14.
2. 'आंसू' : जयशंकर प्रसाद : छन्द : 48.
3. 'कामायनी' : जयशंकर प्रसाद : (मर्म सर्ग) : पृ0 147.
4. 'लहर' : जयशंकर प्रसाद : पृ0 34.
5. 'गीतिका' : निराला : पृ0 15.
6. 'परिमल' : निराला : 'प्रिया के प्रति' कविता से।

पन्त जी के काव्य के कतिपय उदाहरण -

(1) उतर रहे चम्पक जघनों से नव प्रकाश के स्वर्णिम निर्झर
यह अनन्त-यौवना प्रकृति भव-निशि विषाद पल में लेती हर।[1]

(2) देह नहीं है परिधि प्रणय की, प्रणय दिव्य है, मुक्ति हृदय की
हृदय तुम्हें देती हूँ प्रियतम, देह नहीं दे सकती
जिसे देह दूँगी अब निश्चित स्नेह नहीं दे सकती।[2]

(3) प्रथम मधु के फूलों के बाण,
चुभे उर में, कर मृदु आघात
रुधिर से फूट पड़ी रुचिवान
पल्लवों की यह सजल प्रभात
शिराओं में उर की अज्ञात
नव्य जग-जीवन पर गतिमान।[3]

महादेवी वर्मा जी के काव्य के कतिपय उदाहरण

(1) लयवती मृदु वर्तिका, हर स्वर जला बन लौ सजीली
फैलती आलोक - सी झंकार मेरी स्नेह गीली
इस मरण के पर्व को मैं आज दीपाली बना लूँ।[4]

(2) सिहर-सिहर उठता सरिता-उर,
खुल-खुल पड़ते सुधा - सुमन भर,
मचल-मचल जाते पल फिर-फिर
सुन प्रिय की पदचाप हो गयी पुलकित यह अवनी
सिहरती आ वसन्त-रजनी।[5]

---

1. 'किरण-वीणा' - सुमित्रानन्दन पन्त : पृ0 38.
2. 'स्वर्ण किरण' : सुमित्रानन्दन पन्त : पृ0 38.
3. 'पल्लव' : सुमित्रानन्दन पन्त : पृ0 52.
4. 'दीपशिखा' : महादेवी वर्मा : पृ0 78.
5. 'यामा' : महादेवी वर्मा : पृ0 134.

यहाँ तक जो कविताओं के उदाहरण दिये गये हैं वे छायावाद और रहस्यवाद के आधार-स्तम्भों के हैं। जयशंकर प्रसाद को छोड़, शेष तीनों कवियों ने बीसवीं शती के आठवें दशक तक छायावाद का प्रतिनिधित्व किया।

छायावाद के उत्तरकालीन कवियों में डॉ0 रामकुमार वर्मा, रामधारी सिंह 'दिनकर', हरिवंश राय 'बच्चन', नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', भगवती चरण वर्मा, शिव मंगल सिंह 'सुमन', बालस्वरूप 'राही' , गुलाब खण्डेलवाल आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यहाँ यह बतलाना भी समीचीन प्रतीत होता है कि इन कवियों ने काव्य का सृजन तो छायावाद से प्रभावित होकर प्रारम्भ किया लेकिन आगे चलकर इनकी धाराओं में परिवर्तन हो गया। छायावाद को जो गाम्भीर्य जयशंकर प्रसाद ने प्रदान किया वह निरन्तर सरल और विरल होता गया। सन् 1935-1936 ई0 के बाद के लगभग बीस वर्षों में हिन्दी कविता अधिकाधिक समाजोन्मुखी होती गयी। पन्त और निराला तो निरन्तर बदलते गये।

प्रगतिवाद :

प्रगति, प्र+गति शब्द से 'प्रगति' व्युत्पन्न हुआ, जिसका शाब्दिक अर्थ प्रकृष्ट गति अर्थात् उन्नति है। लाक्षणिक दृष्टि से कहा जा सकता है कि प्राचीन मान्यताओं के विरुद्ध समसामयिक विचारधाराओं का साहित्य-आन्दोलन ही प्रगतिवाद है।[1] डॉ0 गुप्त ने लिखा है - 'प्रगति शब्द का अर्थ है - चलना, आगे बढ़ना, अतः प्रगतिवाद का शाब्दिक अर्थ हुआ - वह 'वाद' जो आगे बढ़ने में विश्वास रखता है'।[2] इस दृष्टि से प्रगतिवाद का अर्थ व्यापकता लिये हुये है। लेकिन हिन्दी, काव्य में प्रगतिवाद को विशेष अर्थ में ही लिया गया है। शास्त्री जी ने इस विचारधारा के उदय के लिये लिखा है - 'सामाजिक वर्जनाओं तथा युगीन परिस्थितियों ने ऐसा वातावरण उत्पन्न कर दिया कि स्थिर व्यवस्था के प्रति विद्रोह का होना स्वाभाविक हो गया। मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग के मध्य खाई और चौड़ी हो चली। मध्य वर्ग ईमानदार रचना के प्रति आग्रहशील हो चला। सामाजिक व्यवस्था और विसंगतियों के कारण प्रगतिवाद ने जन्म

---

1. 'हिन्दी-साहित्य का निबन्धात्मक इतिहास' : आचार्य उमेश शास्त्री : पृ0 220.
2. 'हिन्दी-साहित्य का विकास': डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त : पृ0 298.

लिया।[1] डॉ0 वार्ष्णेय ने इतिहास में बताया - 'साहित्य के क्षेत्र में छायावाद-रहस्यवाद ने द्विवेदी-युग की इतिवृत्तात्मकता और स्थूलता के प्रति विद्रोह किया तो प्रगतिवाद ने छायावाद-रहस्यवाद की सूक्ष्मता और समाजविमुखता के प्रति विद्रोह किया। 'कला कला के लिये' या 'स्वान्तःसुखाय' के सिद्धान्त में उसे आस्था नहीं है। अपने विशिष्ठ अर्थ में प्रगतिवाद मार्क्सवाद का साहित्यिक रूपान्तर है।'[2]

प्रगतिवादी काव्यधारा के समीक्षक एवं पक्षधर डॉ0 रामविलास शर्मा ने प्रगतिवाद को परिभाषित करते हुए लिखा - 'प्रगतिशील साहित्य से मतलब उस साहित्य से है जो समाज को आगे बढ़ाता है, मनुष्य के विकास मे सहायक होता है।'[3]

ज्ञातव्य हो कि प्रगतिवाद और प्रगतिशील शब्दों में अन्तर है - जहाँ 'प्रगतिवाद सर्वथा मार्क्सवाद से बँधा हुआ है, वहाँ प्रगतिशील उससे स्वतन्त्र है। समाज की प्रगति के कई मार्ग हो सकते हैं। प्रगतिवादी केवल साम्यवादी मार्ग को ही अपनाने के लिये विवश हैं जब कि प्रगतिशील किसी भी वाद-विशेष से आबद्ध नहीं होता।'[4] हम यहाँ प्रगतिवाद की चर्चा कर रहे हैं।

कार्ल मार्क्स (1818-1883 ई0) ने अपनी साम्यवादी विचारधारा से विश्व को प्रभावित किया। इस विचारधारा के तीन प्रमुख आधार हैं - (1) द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद, (2) मूल्य-वृद्धि का सिद्धान्त, (3) मानव-सभ्यता की व्याख्या। दर्शन के क्षेत्र में जो द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद है, राजनीतिक क्षेत्र में वही साम्यवाद है और वही राजनीति और साहित्य के क्षेत्र में प्रगतिवाद कहलाता है। तात्कालिक परिस्थितियाँ कुछ इस प्रकार की थीं कि प्रगतिवादी साहित्य का समाज में जोरदार स्वागत किया गया। हिन्दी-कविता में प्रगतिवाद पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि प्रगतिवादी कवियों में जो प्रवृत्तियाँ प्रमुख रूप से दृष्टिगत हुईं, वे ये हैं - (1) धर्म, ईश्वर एवं परलोक का विरोध, (2) पूँजीपति-वर्ग के प्रति घृणा और द्वेष का प्रचार, (3) शोषित-वर्ग के जीवन की कटुता, विषमता और हीनता का कारुणिक चित्रण, (4) नारी के

---

1. 'हिन्दी-साहित्य का निबन्धात्मक इतिहास' : आचार्य उमेश शास्त्री : पृ0 221.
2. 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' : डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : पृ0 297.
3. 'प्रगति और परम्परा : हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ' : डॉ. रामविलास शर्मा : पृ0 262.
4. 'हिन्दी- साहित्य का विकास' : डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त : पृ0 298.

प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण और (5) श्रम और संगठन की आवश्यकता पर बल। यहाँ यह भी उल्लेख्य है कि प्रगतिवादी कवियों ने रस, छन्द, अलंकार, काव्य-रूप और काव्य-रीति आदि पुरानी परम्पराओं का भी विरोध किया। लेकिन स्मरण रहे कि हिन्दी-कविता में निषेध जैसी स्थिति नहीं है।

प्रगतिवादी कवियों के कतिपय उदाहरण -

(1) वैभव की दीवानी दिल्ली, कृषक-मेध की रानी दिल्ली
अनाचार, अपमान व्यंग्य की चुभती हुयी कहानी दिल्ली
अपने ही पति की समाधि पर, कुलटे ! तू छवि पर इतराती,
परदेशी सँग गलबाँही दे मन में है फूली न समाती[1]

(2) उठ मन्दिर के दरवाजे से, जोर लगा खेतों में अपने
नेता नहीं, भुजा करती है, सत्य सदा जीवन के सपने
नेताओं का मोह, मूढ़ ! केवल तुझको ठगनेवाला है
लगा जोर, अपने भविष्य का बन तू आप प्रणेता
नेता, नेता, नेता[2]

(3) सकल देश में हालाहल है, दिल्ली में हाला है
दिल्ली में रौशनी, शेष भारत में अँधियाला है
मखमल के परदों के बाहर फूलों के उस पार
ज्यों-का-त्यों है खड़ा आज भी, मरघट-सा संसार।[3]

(4) गृह-सुख से निर्वासित कर दी, हाय मानवी बनी सर्पिणी,
यह निष्ठुर अन्याय, आओ बहन !
अरी सर्पिणी आ, तेरे मणिमय मस्तक पर मैं
अंकित कर दूँ निर्धन चुम्बन, आ सर्पिणी आ
ले भाई का निर्बल प्रेमालिंगन[4]

---

1. 'हुंकार' : रामधारी सिंह दिनकर : पृ0 480
2. 'नीम के पत्ते' : रामधारी सिंह दिनकर : पृ0 67.
3. 'परशुराम की प्रतीक्षा' : रामधारी सिंह दिनकर : पृ0 53.
4. 'आधुनिक काव्यधारा' : केसरीनारायण शुक्ल : (नरेन्द्र शर्मा) : पृ0 203.

(5) वे लोहा पीट रहे हैं, तुम मन को पीट रहे हो,
वे पत्थर जोड़ रहे हैं, तुम सपने जोड़ रहे हो,
उनकी घुटन ठहाकों से घुलती है,
और तुम्हारी घुटन उनींदी घड़ियों में चुकती है
वे हुलसित हो आते ही फसलों में डूब गये हैं,
तुम हुलसित हो चितकबरी चाँदनियों में खोये हो।[1]

छायावाद और उत्तर छायावाद के कवियों ने प्रगतिवाद को अपनाया तथा समाजोन्मुखी कविता को विकसित किया। प्रगतिवादी कवियों के भी दो वर्ग हैं— प्रथम, वे कवि जिन्होंने प्रगतिवाद को भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखा जैसे— रामधारी सिंह 'दिनकर', पन्त, निराला आदि। और द्वितीय वे कवि जिन्होंने रूस आदि देशों को भारत से अधिक मान्य ठहराया। ऐसे कवियों में शिवमंगल सिंह 'सुमन', नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल आदि प्रमुख हैं। द्वितीय वर्ग के कवियों ने 'लाल' शब्द को विशेष महत्त्व दिया। प्रगतिवाद से ही लेनिनवादी एवं माओवादी कविता को बढ़ावा मिला। हिन्दी-कविता अब अनेक धाराओं, उपधारणाओं में होकर प्रवाहमान हो चली।

(ग) काव्य-सृजन की प्रेरणा के स्रोत :

काव्य-सृजन की प्रेरणा कवि में जन्मजात होती है, जैसे धरती में उर्वराशक्ति। परन्तु किसी प्रेरणा, अध्ययन या प्रभाव से उसे सजाया और विकसित किया जा सकता है। कवि गुलाब खण्डेलवाल को स्वामी नारायणानन्द जी काव्य-गुरु के रूप में बचपन में ही मिल गये। कवि ने मात्र ग्यारह वर्ष की अवस्था में 'रोला छन्द' की रचना की। यही कवि की प्रथम रचना है ---

गाते हैं चहुँ ओर विहग गण मधुर राग को
मधुकर होकर मत्त पान करते पराग को

---

1. 'हिन्दी साहित्य का निबन्धात्मक इतिहास' : आचार्य उमेश शास्त्री : (नागार्जुन) पृ0 225.

फैली है अति रुचिर, सुखद, शीतल हरियाली
खिले हुये हैं सुमन, छहरती छटा निराली[1]

यह संयोग की बात है कि कवि को ऐसा परिवेश प्रारम्भ से ही मिला कि उसे कविता करने के लिये प्रेरणा-स्रोत मिलते रहे। कवि ने लिखा है कि उसके निर्माण में श्री बेढब बनारसी का बहुत बड़ा हाथ है - 'बेढब जी प्रायः मुझसे कबीर, तुलसी, भारतेन्दु, रत्नाकर और प्रसाद की गौरवमयी साहित्य-परम्परा की चर्चा किया करते थे। वे मुझसे यह अपेक्षा रखने लगे थे कि काशी की इस महान परम्परा को मैं आगे बढ़ाऊँगा। मैंने भी मन ही मन इस चुनौती को स्वीकार कर लिया था।[2] काव्य-सृजन की प्रेरणा के स्रोत परिवेश, व्यक्ति और अनुभव होते हैं। यहाँ संक्षेप में इन घटकों पर विचार किया जा रहा है ---

युगीन परिवेश :

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने जिस समय काव्य-सृजन के लिये सजगता से मन बनाया उस समय कई प्रकार की स्थितियाँ युग को प्रभावित कर रही थीं। एक ओर छायावाद अपने परमोत्कर्ष पर था और दूसरी ओर उसके विरोधस्वरूप प्रगतिवाद अपनी आँखें ही नहीं खोल चुका था बल्कि अपने लिए यथार्थ भूमि तलाश चुका था। श्री हरिवंश राय 'बच्चन' ने हालावाद को जन्म देकर काव्य को नयी दिशा दे दी थी[3] और कथा-सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द की अध्यक्षता में प्रगतिशील लेखक-संघ हिन्दी-साहित्य को एक अलग दिशा प्रदान कर रहा था। पुरानी पीढ़ी (जयशंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचन्द, हरिऔध, लाला भगवान दीन, रामचन्द्र शुक्ल, श्यामसुन्दर दास, कवीन्द्र रवीन्द्र आदि) चुक रही थी जिसके गौरव को सुरक्षित बचाने की चुनौती सामने थी। पं0 रामनरेश त्रिपाठी, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पन्त, निराला, श्यामनारायण पाण्डे, सोहनलाल द्विवेदी, डॉ0 रामकुमार वर्मा आदि काव्य-जगत् में अपने पैर जमाये हुये थे। इतना ही नहीं राजनीतिक स्तर पर देखा जाय तो द्वितीय विश्वयुद्ध

1.'आधुनिक कवि' (19) : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 2.
2.'आधुनिक कवि' (19) : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 5.
3.उमर खय्याम के विचार को आधार बना कर चटपटे स्वाद में 'मधुशाला' (प्रकाशन वर्ष 1933 ई0) से हालावाद स्थापित हुआ।

(1939-1945 ई0) विश्व-स्तर पर और भारतीय राजनीति में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन (1942 ई0) अपनी पराकाष्ठा पर थे। कहने का तात्पर्य यह है कि जब गुलाब खण्डेलवाल ने काव्य-जगत् में अपनी पंखुरियाँ खोलीं उस समय युगीन परिवेश बड़ी ही विचित्रताओं से भरा हुआ था।

कवि को, बनारस में शिक्षा प्राप्त करने हेतु आना, एक वरदान सिद्ध हुआ। कवि स्मरण करता हुआ लिखता है - 'गुप्त जी की एक सलाह तो मुझे अभी तक याद है, 'काव्य की प्रेरणा रुकती हुई जान पड़े तो दूसरी भाषा के किसी अच्छे कवि की कृति का अनुवाद प्रारम्भ कर दीजिएगा। मैंने स्वंय इस पद्धति का अनुगमन किया है।'[1] बच्चन जी एक वर्ष पहले काशी से बी0 टी0 की ट्रेनिंग पूरी करके इलाहाबाद जा चुके थे परन्तु उनके गीत हवा में गूँज रहे थे। 'हल्दीघाटी' के रचयिता पं0 श्याम नारायण पाण्डे से हर कविसम्मेलन में भेंट होती थी। हास्यरस की विधा में काशी के बेढब जी, चोंच जी तथा बेधड़क जी सारे भारतवर्ष में छाये हुए थे और बेढब जी के साथ दूर-दूर के कवि-सम्मेलनों में मेरा भी जाना होता था। ऐसे माहौल में कवि-रूप में प्रतिष्ठा पाना स्वंय में एक प्रेरणादायक उपलब्धि थी।'[2] कवि को वास्तव में प्रेरणात्मक परिवेश मिला था।

कविवर गुलाब का साहित्यिक परिवेश छायावाद के विभिन्न संस्करणों के रूप में अभिव्यक्ति पा रहा था। जैसा कि पन्त जी का कथन है - 'नये मूल्यों की दृष्टि से मैं प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नयी कविता को भी केवल छायावाद अथवा उस युग में नये काव्य-संचरण की ही रूपान्तरित विधाएँ मानता हूँ क्योंकि अभिव्यक्ति-जनित समानता तो पायी ही जाती है।[3] कवि गुलाब जी वादों के घेरे से निकल रहे थे क्योंकि उनकी दृष्टि में, बँधकर काव्य-सृजन कोई बड़ी उपलब्धि नहीं थी - 'मेरी समझ में जो साहित्य वादों के घेरे में अटक जाता है वह अधिक से अधिक पचास वर्षो तक ही जीवित रह सकता है। संवेदना और मानवीय संचेतना पर आधारित काव्य ही शाश्वत साहित्य में स्थान पाने का अधिकारी है। मैंने अपने जीवन में हिन्दी के तीन वादों का तूर्यनाद सुना है। वे हैं - छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद। इनमें से छायावाद अभिव्यक्ति

---

1. उत्तर प्रदेश ('अमृतलाल नगर स्मृति-अंक') : अप्रैल 1990 : पृ0 81.
2. 'आधुनिक कवि' : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 4.
3. 'छायावाद पुनर्मूल्यांकन' : सुमित्रानन्दन पन्त : पृ0 113.

को, प्रगतिवाद सामाजिकता को और प्रयोगवाद काव्य में वैयक्तिकता को उद्घोषित करने का आन्दोलन है। मैंने इनमें से जो कुछ स्वतः ग्रहण किया जा सकता है, ग्रहण किया है, परन्तु अपनी कविता को इनके खेमों से दूर ही रखा है।[1] स्पष्ट है कि कवि ने युगीन परिवेश को बड़ी गम्भीरता से लिया है।

अध्ययन :

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी का अध्ययन किया है। हिन्दी और अंग्रेजी[2] में तो कवि ने साहित्य सृजित किया है। बिना अध्ययन के कविता का अंकुरण ही हो सकता है लेकिन कविता अनवरत कविता हो सके, असामान्य-सा लगता है। सन्त कवि कबीर और प्रज्ञाचक्षु सूरदास जैसे कितने कवि हुए हैं जिन्होंने बिना कुछ पढ़े काव्य-सृजन किया हो ! ज्ञातव्य हो कि अध्ययन का अर्थ पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है, सत्संगति से व्यक्ति बहुत कुछ सीख लेता है। कविवर गुलाब ने अपने समकालीनों एवं समकालीन साहित्य से बहुत कुछ सीखा है। उन्हें गुरुजनों और अपने समय के प्रतिष्ठित साहित्यकारों का सामीप्य और आशीर्वाद मिला है जिसके फलस्वरूप उनकी काव्य-यात्रा सहज और सुन्दर हो उठी है। उन्होंने काव्य को प्राणों का धर्म ही मान लिया है[3] और वे अपनी क्षमता से आगे बढ़ते जा रहे हैं। कवि का अध्ययन पग-पग पर बोलता चला है, जैसे---

विश्वमंच पर प्रकट हुई जो शेक्सपियर की अद्भुत नाट्यकला-सी
पहने कोमल कविता का गलहार

---

1. 'आधुनिक कवि' (19) : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 13-14.
2. 'गुलाब खण्डेलवाल : सेलेक्टेड पोएम्स' : अपनी चार काव्य-पुस्तकों का स्वयं कवि के द्वारा किया गया अंग्रेजी काव्यानुवाद - प्रकाशन वर्ष - 1986 : भूमिका - डॉ0 कर्णसिंह (अमेरिका में भारत के राजदूत)।
3. **प्राण का धर्म ही साहित्य है, व्यवसाय नहीं, शुद्ध व्यक्तित्व का विभास, संप्रदाय नहीं, मोम-सा आप जलो तो प्रकाश फैलेगा, सिद्धि का और यहाँ दूसरा उपाय नहीं।**
-गुलाब-ग्रन्थावली : (तृतीय खण्ड) : रूप की धूप : पृ0 103.

कालिदास कवि की कुटिया में खेली मृगछौनों से शकुन्तला-सी
छवि की मोहक प्रतिमा जो सुकुमार[1]
मानस की मानसी, सूर के अंध नयन की ज्योति प्रखर चपला-सी
कोटि-कोटि कंठों की प्राणाधार
चंचल मधु-अंचला खड़ी हिमनग पर हिमनग-सी उज्ज्वल-अचला-सी
आज वही शारद-हासिनी उदार
दे रही मुझे विजय-उपहार
मैं भावों का राजकुमार

काव्य का सृजन करने के लिये अनिवार्य रूप से छन्द तो चाहिए ही। यह बात दूसरी है कि छन्द का विरोध करने के बाद भी कवि छन्द को छोड़ने में समर्थ नहीं हो पाये हैं। गुलाब जी ने छन्दसम्बन्धी ज्ञान स्वामी नारायणानंद सरस्वती से सीखा।[2] लेकिन कवि को किसी भी रूढ़ि या परिपाटी से बँधकर चलना उचित नहीं लगा। कवि छन्दों के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग करता रहा है और छन्दों के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करता रहा है। 'सॉनेट' नामक अंग्रेजी छन्द की पूरी जानकारी ही कवि ने दे दी है।[3] यदि कवि का छन्द-सम्बन्धी अध्ययन-क्षेत्र व्यापक न होता तो विदेशी और देशी छन्दों का तथा गीत-रूपों का काव्य-रूप के साथ इतनी विविधता से प्रस्तुतीकरण सहज नहीं होता। जापान के प्रसिद्ध 'हाइकू' छन्द का तो कवि ने जमकर प्रयोग किया है, जैसे --

हम सब माया-मृग हैं,
हम सभी ने ऊपर से सोने की खालें ओढ़ रखी हैं
बस मुखौटे अलग अलग हैं[4]

इसी प्रकार का व्यापक अध्ययन ग़ज़लों के क्षेत्र में भी कवि ने दिखाया है।

---

1. 'गुलाब ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक : श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 37.
2. 'आधुनिक कवि' (19) : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 2.
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : (तृतीय खण्ड) : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 34.
4. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : (द्वितीय खण्ड) : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 142.

व्यक्तित्वों का प्रभाव :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के साहित्य-सृजन में उनकी जन्मजात प्रतिभा, नारायणानन्द सरस्वती का छन्द-ज्ञान, बेढब बनारसी की सतत और आत्मीयतापूर्ण प्रेरणा, देशी-विदेशी साहित्य का अध्ययन, मौलिक एवं प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से अनेक साहित्यिक व्यक्तित्वों का प्रभाव है। यहाँ संक्षेप में व्यक्तित्वों के प्रभाव की प्रस्तुति की जा रही है।

1. कवीन्द्र रवीन्द्र :

भारतीय साहित्याकाश में रवीन्द्रनाथ का उदय एक अपूर्व घटना थी। साहित्य के प्रायः सभी क्षेत्रों में उनका योगदान अप्रतिम है। भारत की प्रत्येक भाषा के साहित्य पर उनका व्यापक प्रभाव पड़ा और पूरे चार दशक तक वे सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय का निर्देशन करते रहे।[1] छायावाद और स्वच्छन्दतावाद का हिन्दी में प्रवेश यूरोप से बँगला साहित्य के माध्यम से हुआ। गुलाब खण्डेलवाल रवीन्द्रनाथ टैगोर से बहुत अधिक प्रभावित थे। 'कविता' नामक संग्रह (प्रथम) में अन्तिम कविता इस प्रभाव को लेकर चलने की बात कहती है

शिथिल बाँह, पग काँप रहे, कण्ठ-स्वर रुँधने को आया
झुकी कमर, जड़ काष्ठ उँगलियाँ, जीर्ण त्वचा, जर्जर काया
समझा, जीवन की संध्या में आज पुकार रहा किसको
कौन तरुण वह, सौंप चला जायेगा यह नौका जिसको
आ जा, माँझी ! छाया-सा चुपचाप उतर निर्जन तट पर
इन लहरों से मैं खेलूँगा अब तेरी नौका लेकर[2]

मानवीय सम्वेदना की प्रेरणा रवीन्द्र की ही देन है, यथा - 'हे कवि ! तब उठ आओ। यदि तुम में प्राण हैं तब उसे ही साथ लो, तब उसे ही आज दान करो, बहुत दुख है, बड़ी व्यथा है, और सामने दुखी संसार है। संसार में अत्यंत

---

1. 'आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र' : डॉ0 रामेश्वर दयाल मिश्र (डॉ0 नगेन्द्र की टिप्पणी) : पृ0 अ.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : (प्रथम खण्ड) : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 38.

दरिद्रता, शून्यता, क्षुद्रता एवं घना अंधकार है।

2. महात्मा गांधी -

महात्मा गांधी बीसवीं सदी की ऐसी घटना हैं जिसने अपने सभी पूर्ववर्तियों को प्रसिद्धि और प्रभाव के क्षेत्र में पीछे छोड़ दिया है। गांधी जी की विचारधारा को लेकर महादेवी वर्मा ने लिखा है - 'गांधीवाद धर्म का सम्प्रदायवाद न होकर जीवन-धर्म है, दर्शन का मतवाद न होकर मानवदर्शन है और केवल कर्मयोग न होकर सत्य तथा अहिंसा की ऐसी सक्रियता है जो व्यष्टि को समष्टि से जोड़ती है।'[2] श्री गुलाब खण्डेलवाल गांधी जी से बहुत अधिक प्रभावित हैं। जब गांधी जी की हत्या हुई तब कवि का मन चीत्कार कर उठा -----

महानाश के महाकाल में, जीवन की पतवार पकड़
पहुँचा दी जिसने स्वदेश की नौका सकुशल लक्ष्य-समीप
छुटे तीर-सी, दी उखाड़ चिर-सुदृढ़ राज-भवनों की जड़
आत्मिक बल से, बुझा फूँक से ही वह मानव-भाग्य-प्रदीप ![3]

मानवता की पक्षधरता लेकर कविता का व्रत मानों गांधी जी का प्रभाव हैं। कवि बड़े ही गर्व से गांधी जी की प्रशंसा करता है -

रवि न डूबते जहाँ कभी, उन साम्राज्यों की नाक कहाँ !
कालपुरुष से लोहा लें जो वे गाण्डीव, पिनाक कहाँ !
धन-धरती तो उसकी जिसने इनको हँस-हँस छोड़ दिया

---

1. कवि तबे उठे एसो - जदि थाके प्राण
   तबे ताइ लहो माथ, तबे ताइ करो आजि दान।
   बड़ो दुख, बड़ो व्यथा सम्मुख एतो कष्टेर संसार
   बड़ोई दरिद्र, शून्य, बड़ो क्षुद्र, बड़ो अन्धकार
   आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र : डॉ0 रामेश्वर दयाल मिश्र : पृ0 116.
2. 'आलोक-वृत्त' : गुलाब खण्डेलवाल (आशीर्वचन-महादेवी वर्मा) : पृ0 ख.
3. 'आलोक-वृत्त' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 83.

पानी जो दोनों बाँहों में रक्खे बाँध, तिराक कहाँ !
त्यागमंत्र सिखलाया जिसने विश्व उसीका चेला है'[1]

गुलाब खण्डेलवाल के काव्य में जहाँ-जहाँ मानवीय सम्वेदना, दीनों के प्रति दया, एकता, अखण्डता, सत्य, अहिंसा-नम्रता-ओज की भावना या भारतीय मूल्यों के प्रति सजगता दिखायी देती है वहाँ-वहाँ गांधी जी का सीधा-सीधा प्रभाव देखा जा सकता है। गांधीवाद को जन-जन तक पहुँचाने में ही मानो कवि अपनी मुक्ति मानता है।[2]

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' एक ऐसे मौलिक साहित्यकार का नाम है जिसने साहित्य के क्षेत्र में अपनी भागीदारी का निर्वाह करते हुये, न किसी की चिन्ता की और न लिखे हुये पर किसी की क्या प्रतिक्रिया होगी, इस पर ध्यान दिया। गुलाब खण्डेलवाल 'निराला' से काव्य-शैली के क्षेत्र में बहुत अधिक प्रभावित हैं। निराला ने उनकी जिस प्रथम कविता-पुस्तक 'कविता' की भूमिका लिखी, उसकी प्रारम्भिक कवितायें तो ऐसी प्रतीत होती हैं मानों निराला की कविताओं को सामने रखकर ही उन्हें लिखा गया हो। जैसे --

(1) वाणी का वर दो
विकच पँखुरियों से मेरे स्वर
दूर क्षितिज में फैल-फैलकर
छा लें दश दिशि, अवनी, अम्बर
ढँक ले गृह, तरु, मग, पराग जन, तुम प्रिय पग धर दो
('गुलाब-ग्रन्थावली' - प्रथम खण्ड-पृ0 5.)

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : (प्रथम खण्ड) : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 165.
2. हम तो गाकर मुक्त हुये
   तेरी थाती जन-जन तक पहुँचाकर मुक्त हुए
   -'गुलाब-ग्रन्थावली' : (प्रथम खण्ड, भाग-2) : पृ0 382.

(2) जीवन के कुसुमित कानन पर
किरणों के कमनीय चरण धर
उतरो अहे सत्य, शिव, सुन्दर !
मधु की स्वर्ण उँगलियों से छूकर उर्वर कर दो
('गुलाब-ग्रन्थावली' - प्रथम खण्ड - पृ0 6)

निराला की 'राम की शक्तिपूजा' हिन्दी साहित्य की विलक्षण रचना है। उस जैसी ओजस्वी, संस्कृत तत्सम-प्रधान, सामाजिक पदावली अन्यत्र मिलनी कठिन है। गुलाब खण्डेलवाल ने 'राम की शक्ति पूजा' के छन्द के आधार पर सामासिक पदावली को 'अहल्या' खण्डकाव्य में अपनाया है। जैसे -

कटि पर घट ले आलुलित-केश, सद्यःस्नाता
चल दी कौशिक-मख-भूमि जिधर थी विख्याता
थे जहाँ बसे सुरमुनि-सुख-दाता, भव-त्राता
युग अस्ति-नास्ति से गौर-श्याम, दोनों भ्राता
जन-सेवा-हित गृह-त्यागी
('अहल्या' - गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 47)

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पन्त से प्रभावित कवि की छायावादी और रहस्यवादी रचनायें हैं, तो प्रेमगीत रामधारी सिंह 'दिनकर' हरिवंश राय 'बच्चन' से प्रभावित हैं और इसी प्रकार कवि की प्रगतिवादी कवितायें नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुकल 'अंचल', शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि से प्रभावित हैं। और जो प्रयोगधर्मी रचनायें हैं, वे अज्ञेय, धर्मवीर भारती, नागार्जुन, गिरजा कुमार माथुर आदि से प्रभावित हैं। और यदि हम इस प्रभाव की श्रृंखला को पीछे खीचकर ले जायें तो संस्कृत के अनेक कवि, उर्दू के अनेक शायर तथा हिन्दी के सन्त कवियों के साथ-साथ हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, और 'वियोगी हरि' जैसे कवि भी प्रभावी घटक हैं। कवि ने यह प्रभाव कहीं अभिव्यक्ति की कला के रूप में, कहीं कथा को विकसित करने के रूप में, कहीं भाषा के प्रभाव के रूप में और कहीं छन्द आदि के रूप में ग्रहण किया है। कवि को यह गांधीवादी मनोवृत्ति स्वीकार है कि जहाँ से जो उचित और अनुपम मिले उसे सहर्ष ग्रहण करो। इसीलिये गुलाब खण्डेलवाल के काव्य में लगभग बीसों प्रकार की काव्य-शैलियाँ मिलती हैं।

प्रभाव के क्षेत्र में यदि वीर-भारती की चर्चा न की जाय तो यह चर्चा अधूरी मानी जायगी। डिंगल[1] साहित्य में बड़े ही ओजस्वी और प्रभावी दोहे लिखे गये हैं। गुलाब जी ने भी सन् 1962 (चीन-भारत युद्ध) के सन्दर्भ में एक सौ आठ दोहे लिखे जो डिंगल के सदृश ही है। जैसे -

(1) हिमकर पश्चिम से उगे, पूरब डूबे भानु
नभ लोटे भू पर भले, वीर न टेके जानु
(2) धँसा पंक में, विद्ध-शर, गरज रहा वनराज
तिल भर दया न माँगता, क्षणिक देह के काज
(मेरे भारत, मेरे स्वदेश - पृ0 28)

गुलाब खण्डेलवाल से पूर्व हिन्दी में इस कोटि के दोहे लिखने का श्रेय केवल 'वीर-सतसई' के रचयिता 'वियोगी हरि' को प्राप्त है।

गुलाब खण्डेलवाल का साहित्यिक व्यक्तित्व :

हिन्दी-साहित्य के विकास की दृष्टि से गुलाब खण्डेलवाल आधुनिक या जागरण-काल छायावादोत्तर काल में आते हैं। यह एक ऐसा सन्धिस्थल है जहाँ से हिन्दी-साहित्य (काव्य) विभिन्न धाराओं और उपधाराओं में प्रवहमान होता हुआ स्पष्ट रूप से दिखायी देता है। एक ओर छायावाद और रहस्यवाद में नये-नये तेवर दिखाई देते हैं, तो दूसरी ओर कार्लमार्क्स के विश्वव्यापी प्रभाव से हिन्दी में प्रगतिवादी कवियों की भी लम्बी कतार दिखती है और इसी काल में नयी कविता या प्रयोगवाद भी अपनी भूमि खोजता है। महाकवि गुलाब अपने लिये स्वयं पृथक्

---

1. डॉ0 हरप्रसाद शास्त्री के कथनानुसार प्रारम्भ में इसका नाम 'डंगल' अर्थात् मिट्टी का ढेला था, परन्तु अनन्तर पिंगल के साम्य पर इसका नाम डिंगल कर दिया गया था।

* * *

जंगल देश अर्थात मरुदेश की भाषा डिंगल कहलाती थी। अतः डिंगल भाषा नहीं वरन् कविता की शैली है।
-'डिंगल साहित्य' - लेखक जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव : पृ0 3.

से मार्ग खोज लेते हैं। न तो वे किसी खेमें में स्वयं जाते हैं और न वे किसीका विरोध करते हैं। कवि ने लिखा है- '1943 ई0 के आसपास, जब मैंने अनुभव किया कि छायावादी गीतों का बाहुल्य कविता को ही समाप्त किये दे रहा है तो मैंने नयी-नयी विधाओं का आश्रय ग्रहण किया। सॉनेट, सम्बोध-गीत, प्रतीक-काव्य, दोहे, गाथा-काव्य आदि में तो मेरे लिये विशेष उलझाव नहीं था परन्तु गीतों के घटाटोप के सम्मुख प्रबन्ध-काव्य और महाकाव्य लिखने में मुझे अनेक समस्याओं से निपटना पड़ा। गुप्त जी के प्रबन्धकाव्यों की शैली छायावाद की सूक्ष्म अनुभूति-मूलक रचनाओं के सम्मुख मुझे जँच नहीं पाती थी। इस दिशा में 'प्रसाद' की कामायनी और 'निराला' का 'तुलसीदास', हिन्दी की दो ही पुस्तकें ऐसी थीं जो कुछ दूर तक मेरा मार्गदर्शन कर सकती थीं। परन्तु कुछ ही दूर तक।'[1] इस उद्धरण से स्पष्ट है कि कवि ने रचना- धर्म के पालन से पूर्व स्वयं को मौलिकता से सम्पन्न करने का प्रयत्न किया है। इस प्रयत्न में कवि को पदे-पदे सफलता भी मिली है।

जब कोई कवि मौलिक प्रतिभा-सम्पन्न होता है तब वह काव्य-सृजन के माध्यम से समाज को न केवल कुछ दे पाता है बल्कि समाज का लम्बी यात्रा का सहयात्री भी बन पाता है। जो साहित्यकार खेमे, आचार्य, वर्ग, सम्प्रदाय, धर्म, धन, पत्र-पत्रिका आदि के द्वारा यदि किसी समय स्थापित भी हुए हैं तो यह भी हमें मालूम है कि उन्हें काल-कवलित होते हुए भी देर नहीं लगी है। जिस धूमधाम से उनके नाम की चर्चा उठी उसी धूमधाम से उनका नाम अस्ताचल-गामी भी हो गया है। गुलाब खण्डेलवाल ऐसे कवि हैं जिन्होंने अपनी तपस्या से स्वयं को शक्तिशाली बनाया है। कवि की रचनाओं के सम्पादक पद्मभूषण श्रीनारायण चतुर्वेदी ने लिखा है- 'श्री खण्डेलवाल की प्रायः आधी शती की काव्य-साधना में जो काव्य की विविधता और कही-कही उँचाई देखने में आती है, वह आश्चर्यजनक है। यद्यपि आज का भौतिक और अर्थ-प्रधान युग काव्य के लिये न तो उपयुक्त है और न अनुकूल, फिर भी जिस प्रकार वसन्त में कोकिल मदमत्त होकर आनन्द से कूजती है और इसकी परवाह नहीं करती कि उसे कोई सुन रहा है या नहीं और यदि सुनता भी है तो 'वाह-वाह' या 'वंस मोर' कहता है या नहीं, वह जब तक उल्लसित रहती है, गाती ही रहती है, उसी प्रकार भौतिक युग और आर्थिक समृद्धि में रहते हुए

---

1. 'आधुनिक कवि' : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 12-13.

भी श्री खण्डेलवाल उसी कोकिल की तरह गान करते रहे हैं। रसिक अर्थात् कवि-हृदय लोगों को उससे आनन्द मिला है, कुछ ने 'वाह, वाह, भी किया किन्तु आत्म-प्रेरणा के कारण ही वे कोकिल की तरह गाते रहे।'[1] निस्सन्देह श्री गुलाब खण्डेलवाल एकान्त कुटी के साहित्य-साधक हैं।

यदि हम विशिष्ट वर्ग-सम्बद्ध कवि-साहित्य-महारथियों के नाम को पृथक् कर दें तो देखते हैं कि सन् 1942 ई0 के आसपास से प्रायः प्रत्येक सहृदय साहित्यकार ने (कवि, समीक्षक, पाठक आदि) श्री गुलाब खण्डेलवाल के काव्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। स्मरण रहे कि यह प्रशंसा किसी राजदरबार की विरुदावली नहीं है बल्कि उनके कृतित्व ने उन्हें कुछ उत्तम कहने के लिये बाध्य किया है। कवि के साहित्यिक व्यक्तित्व से प्रभावित होकर श्री मानव ने लिखा है - 'सौन्दर्य, प्रकृति-प्रेम, राष्ट्रीय भावना, युद्ध, जीवन के उत्थान-पतन तथा मानवीय मनोविकारों के जैसे वर्णन इन्होंने किये हैं, वे इनकी प्रतिभा के परिचायक रहेंगे। भाव, भाषा, छन्द, अलंकरण की यह श्रेष्ठता प्रारम्भ से लेकर अन्त तक बनी हुई है। हृदय की सच्ची प्रेरणा, जीवन की गहरी अनुभूति, काव्य के प्रति अटूट लगन और श्रेष्ठ मानव मूल्यों में आस्था होने से ही ऐसे ग्रन्थों की रचना सम्भव होती है। प्रेम, त्याग और आदर्श के मूल्यों में विश्वास प्रकट करना, नये गीतकार को प्रयोगवादी कवियों से पृथक् कर भारतीय संस्कृति के वाहक कवियों की पंक्ति में ला खड़ा करता है।'[2] कविवर गुलाब खण्डेलवाल प्रति-पद मौलिकता से सम्पन्न साहित्यिकता का परिचय देते चले हैं।

साहित्य जगत् की ऊँचाइयों का स्पर्श करनेवाला कवि इस तथ्य से भली भाँति अवगत है कि कवि की कविता अब पढ़ता कौन है। 'बूँदें जो मोती बन गयीं' की भूमिका में कवि यथार्थ के धरातल पर उतर कर बताता है कि वर्तमान में काव्य की स्थिति क्या है -

आपको कौन पढ़ता होगा !
क्या वह माध्यमिक पाठ्शाला का अध्यापक
जिसे खाली समय काटने को साथी नहीं मिलते !

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी: भूमिका : पृ0 घ
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : काव्य पुस्तकों पर सम्मतियाँ : पृ0 च.

अथवा आराम कुर्सी पर अधलेटा वह पेंशनभोगी
जिसके अब हाथ-पाँव भी नहीं हिलते !
या तकादे को गया वह प्यादा
जो खाकर लेटे कर्जदार की प्रतीक्षा में झख मारता है !
कवियों के लिये तो
अपने किसी समकालीन को छूना भी पाप है,
यदि वे भूल से किसीकी कोई कृति देख भी लेते हैं
तो बस यही दिखाने को
कि कहाँ उसमें पुराने कवियों का भावापहरण है, त्रुटियाँ हैं,
कहाँ उस पर उनकी अपनी रचनाओं की छाप है।
विद्वानों की तो भली कही,
यहाँ विद्वान वही कहलाता है जो हर धनुषभंजक से
परशुराम की तरह भेंटता है,
हर मंजरित रसाल को देखकर
बार-बार कंधे पर कुठार ऐंठता है[1]

वास्तव में आज के आर्थिक और भोग-प्रधान युग में कविता की बड़ी दुर्दशा है। लेकिन कवि, सच्चा कवि अपने कर्म से विरत नहीं होता है और न होना चाहिए।

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने जहाँ गीत, नवगीत, गीत के विभिन्न रूप, दोहा, छन्द, नाटक, काव्य-नाटक, खण्डकाव्य, प्रबन्धकाव्य, महाकाव्य, गाथाकाव्य आदि विभिन्न परम्परागत शैलीगत रूप-प्रधान काव्यों की रचना करते हुये मौलिकता का परिचय दिया है वहीं कवि ने कविता के क्षेत्र में भी नितान्त मौलिकता का परिचय दिया है। श्री भवानी प्रसाद मिश्र के शब्दों में - 'गुलाब जी की रचनाओं में वाग्वैदग्ध्य सब जगह है। अनुभूति को अनुपात में और उसके योग्य साँचे में ढालकर कहना उनका आज का गुण नहीं है। यह प्रारम्भ से है और बराबर विकसित होता चला आ रहा है।[2]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 47-48.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली': तृतीय खण्ड : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 3.

सॉनेट, अंग्रेजी का छन्द, जिसका सूत्रपात करने का श्रेय हिन्दी में श्री गुलाब खण्डेलवाल को है, उसके विषय में स्वयं गुलाबजी ने लिखा है - 'मैंने हिन्दी में सॉनेट की शैली का सूत्रपात सन् 1941 ई0 में किया था। हिन्दी में या भारतीय भाषाओं में पाश्चात्य काव्य की इस विधा में किसी और ने भी लिखा है या नहीं इसका ज्ञान उस समय मुझे नहीं था।'[1] इसी छन्द में कवि ने आगे चलकर 'गांधी-भारती' की रचना की है -

'सीपी-रचित रेत' की भूमिका में कवि ने अपनी मौलिकता की ओर संकेत देते हुये लिखा - 'प्रस्तुत सॉनेट, छायावाद के चरम उत्कर्ष काल में छायावादी शैली से विद्रोह के रूप में उभरे थे। मैंने उस समय हिन्दी-काव्य के वर्ण्य-विषय की सीमाओं को विस्तृत करने तथा उसमें नवीन प्राण-शक्ति एवं यथार्थवाद भरने की चेष्टा भी की थी।'[2] इसी प्रकार की चेष्टा कवि ने 'वीर-भारती' (108 दोहे जो वीररस-प्रधान हैं), 'दोहा-शतदल' (श्रृंगारपरक दोहे) आदि में भी की है। काव्य में नाटक लिखना भी कवि की मौलिक सृजन-चेतना का ही पर्याय माना जायगा। गीतों के क्षेत्र में तो कवि ने असाधारण सोच का परिचय दिया है। कवि को नवीन सीढ़ियाँ गढ़ना और उन पर चढ़ना सर्वथा रुचिकर लगता है।

कवि श्री गुलाब खण्डेलवाल ने जो कुछ लिखा है, वह डूबकर लिखा है और प्रति पग मौलिकता का परिचय दिया है। उनके गीतों की संख्या पाँच सौ से ऊपर जा चुकी है जिनमें प्रेम, श्रृंगार, त्याग, बलिदान, वीरता, आत्मीयता, प्रकृति-चित्रण, योग, आस्था, साधना, पौराणिकता आदि की उच्चतम, शिल्प और कथ्य की दृष्टि से, विकासात्मक श्रेणियाँ हैं। इसी प्रकार से अतुकान्त और छन्दबद्ध कविताओं में भी कवि अभिव्यक्ति की ऊँचाइयाँ छूता चला है। देशी और विदेशी छंदों का प्रयोग कवि ने साधिकार किया है जबकि अच्छे-अच्छे कवियों को इस पथ पर चलते हुये डगमगाते देखा गया है।

सन् 1970 ई0 के आस पास कविवर गुलाब खण्डेलवाल की दृष्टि ग़ज़लों की ओर गयी। उन्होंने हिन्दी ग़ज़लों के सूत्रपात के लिये कमर कसी और इस सन्दर्भ में उन्होंने कहा - ग़ज़लों के इस प्रयोग को मैं अपने जीवन

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' तृतीय खंड : पृ0 4.
2. 'सीपी-रचित रेत' : गुलाब खण्डेलवाल : ये सॉनेट : पृ0 2।

का एक विशिष्ट मोड़ मानता हूँ। भाषा, भाव और अभिव्यक्ति की दृष्टि से नवीन और सभी परम्पराओं से मुक्त होते हुए भी ये ग़ज़लें जीवन की मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित हैं और काव्य की चिरन्तन भावभूमि से जुड़ी हुई हैं।[1] हिन्दी में ग़ज़लियत लाने के लिये तदनुरूप पद-योजना, मुहावरेदानी और कथन-वक्रता भी होनी चाहिए। इन बातों का ध्यान रखते हुये मैंने उर्दू-कविता की परम्परागत प्रतीक-योजना से अपने को यथा-सम्भव बचाया है और प्रकृति से सम्बद्ध मानव-हृदय के चिरन्तन प्रतीकों तक ही अपने को सीमित रखा है। इस पुस्तक के द्वारा हिन्दी-ग़ज़ल के परम्परा-स्थापन का विनम्र प्रयास किया गया है।'[2] इस विनम्र प्रयास का श्री नथमल केडिया ने स्वागत करते हुये कहा - 'हमें खुशी है कि कविवर गुलाब की इन ग़ज़लों के रूप में हिन्दी-काव्य को नयी चेतना, नया सन्दर्भ, एवं नया मोड़ मिला है। हमें विश्वास है, पुराने प्रतीकों से अलग होकर हिन्दी की भावभूमि पर ग़ज़ल को स्थापित करने का यह प्रयास सफल होगा।'[3] 'अनुवचन' लिखते हुये श्री त्रिलोचन शास्त्री ने लिखा है - 'मैं समझता हूँ कि इन कविताओं (ग़ज़लों) द्वारा उन्होंने अपने स्वभाव को नया करने की चेष्टा की है। इस चेष्टा का प्रतिफल उनकी भावी रचनाओं में देखना है।'[4] गुलाब खण्डेलवाल जी योजनाबद्ध ढंग से हिन्दी ग़ज़लों को लेकर आये हैं और उन्होंने एक परम्परा का उद्भव किया है। मुंशी प्रेमचन्द के शब्दों में वे वास्तव में साहित्य-सर्जक कहलाने के अधिकारी हैं - 'जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हममें गति और शान्ति पैदा न हो, हमारा सौन्दर्य-प्रेम न जाग्रत हो, जो हममें सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे, वह आज हमारे लिये बेकार है, वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं है।'[5] वास्तव में श्री गुलाब जी ने ऐसा ही ग़ज़ल-साहित्य (संख्या 365) हिन्दी-जगत् को भेंट किया है।

---

1. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 ख.
2. वही : पृ0 ग.
3. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : दो शब्द--नथमल केडिया : पृ0 छ.
4. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : अनुवचन : त्रिलोचन शास्त्री : पृ0 थ.
5. 'सूक्ति-सागर' : श्री रमाशंकर गुप्त : 548.

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की काव्ययात्रा 'कविता' प्रकाशन-वर्ष 1941 ई0 से प्रारम्भ होकर नवीनतम कृति 'सीता-वनवास', प्रकाशन वर्ष 1993 ई0 के पड़ाव तक आ चुकी है। यात्रा के प्रमुख तीर्थस्थल के रूप में अनेक कविता-संग्रह, गीत-संग्रह, खण्डकाव्य, महाकाव्य, काव्य-नाटक, नाटक, सॉनेट, ग़ज़ल-संग्रह हैं जिनके अवलोकन से यह कहना पड़ता है कि गुलाब खण्डेलवाल के बहुआयामी साहित्य से मानवीय सम्वेदना, सात्विक आस्वाद्यिता, और जीवनोपयोगी गुणवत्ता मूल्यांकित होती है। वास्तव में गुलाब जी जैसे साहित्यकार उस प्रज्ज्वलित दीपक के समान हैं जो जलते स्वयं हैं और प्रकाश बिखेर कर दूसरों का पथ सुगम और स्वच्छ बनाते हैं।

द्वितीय अध्याय

कवि गुलाब खण्डेलवाल की कृतियों का परिचय

कवि गुलाब खण्डेलवाल की कृतियों का परिचय

साहित्य-साधना के क्षेत्र में अप्रतिम साधक श्री गुलाब खण्डेलवाल महाकाव्य, खण्ड-काव्य, नाटक, काव्य-नाटक, गीत, प्रगीत, दोहे, ग़ज़ल, रुबाई चतुर्दशपदी आदि विभिन्न विधाओं में अभिनव प्रयोग करते आगे बढ़ रहे हैं। उनके द्वारा सृजित साहित्यिक सोपान आनेवाली पीढ़ियों की यात्रा में नितान्त सहायक होंगे। वैज्ञानिक दृष्टि से श्री गुलाब के रचना-संसार से परिचित होने के लिये रचनाओं को चार भागों में विभाजित किया गया है। गुलाब जी की रचनाएँ (1992 ई0 तक) पुस्तकाकार प्रकाशित हैं। अतः कृतियों का ही अपेक्षित विस्तार से परिचय दिया जा रहा है।

(क) गीत-काव्यों का परिचय—रचनाकाल, विषय-वस्तु एवं प्रकाशन :

छायावाद के उत्तरकालीन कवियों में श्री गुलाब खण्डेलवाल का नाम सर्वाधिक चर्चित है। उन्होंने छायावादी संस्कारों को परिष्कृत और विकासात्मक दृष्टि से ग्रहण किया है। छायावादी कवियों ने मुक्तक-काव्य को प्रमुखता प्रदान की है। हमारे आलोच्य कवि गुलाब खण्डेलवाल ने भी मुक्तक (गीत आदि) को प्रमुखता प्रदान की है। गुलाब जी के गीतों के अब तक दस संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। यहाँ उनका परिचय दिया जा रहा है। देखा यह जाता है कि कवि जीवन के प्रथम प्रहर में गीत लिखता है और बाद में गद्य पर उतरता चला जाता है। परंतु प्रसन्नता का विषय यह है कि श्री गुलाब खण्डेलवाल प्रारभ से आज तक गीत-विधा के नये-नये आयाम छूते जा रहे हैं।

गीत-काव्य (एक) 'चाँदनी' :

कविवर गुलाब खण्डेलवाल की गणना छायावाद के उत्तरकालीन कवियों में की जाती है। श्री गुलाब खण्डेलवाल की रचनाओं का प्रथम संग्रह 'कविता' शीर्षक से प्रकाशित हुआ जिसमें अधिकांश रचनाएँ छायावादी सोच की देन हैं।

उनमें कुछ गीत भी हैं जो छायावादी होने की पुष्टि करते हैं। प्रस्तुत गीत-संग्रह 'चाँदनी'[1] कवि गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का प्रथम संग्रह है। इस संग्रह का समर्पण प्रिय सहधर्मिणी कृष्णा को है, 'भूमिका' लिखी है श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड़ (बेढब बनारसी) ने और टिप्पणी की है श्री अर्जुन चौबे काश्यप ने।

'चाँदनी' के गीतों की रचना 1939 ई0 से 1943 ई0 के मध्य की गई है और बड़ी सज-धज के साथ इनका पुस्तकाकार प्रकाशन सन् 1945 ई0 में हुआ है। इन गीतों की संख्या 48 है। इन दिनों कवि अपनी पहचान बनाने में लगा है और अपने समकालीनों से पृथक् दिखने के लिये प्रयत्नशील है। 'कविता' और 'चाँदनी' की रचनाओं में छायावादी कवि झाँक-झाँक कर अपनी छवि, भाषा-गठन, अभिव्यक्ति, शैली और विषय-वस्तु के रूप में दिखा जाते हैं। परंतु बादलों में चन्द्रमा का अपना अस्तित्व पृथक् ही झलकता है। इसी प्रकार चाँदनी के गीतों में गीतकार गुलाब खण्डेलवाल उनसे पृथक् ही दिखायी पड़ते हैं।

चाँदनी-काव्य की विषय-वस्तु :

'चाँदनी' गीत-संग्रह की विषयवस्तु चाँदनी के इर्द-गिर्द ही चक्रित है। विश्व का कदाचित ही कोई ऐसा कवि हो जिसने चाँदनी पर अपनी लेखनी न उठायी हो। गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने चाँदनी को बड़ी विशदता से देखा है। आकाश से उतरती चाँदनी, वर्षा या बादलों में मिली, सिमटी चाँदनी, सरोवर में रात भर नहायी चाँदनी, वनप्रान्तों, घरद्वारों पर बिखरी चाँदनी, मधुयामिनी में चाँदनी, प्रकृति के साथ-साथ जीवन के विभिन्न रूपों में घुली चाँदनी को कवि ने बड़ी व्यापकता से चित्रित किया है। एक प्रकार से जीवन की सौन्दर्यमयी दृष्टि से चाँदनी को सुखात्मक रूप में देखते हुये कवि ने मानों जीवन के विविध रूपों को देखा है। भूमिका में श्री गौड़ लिखते हैं - 'यद्यपि चाँदनी एक ही है तथापि भावों का पिष्ट-पेषण नहीं हुआ है। एक ही चित्र उलट-पुलटकर दूसरी बार नहीं आया है। चित्रों में सजीवता तो है ही, गति भी है। चाँदनी का स्वरूप

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी : 'चाँदनी' पृ0 39 से 72 तक (संग्रहीत) : प्रकाशन : कमल-प्रकाशन : 105, मकुंद्रीगंज, प्रतापगढ़।

यदि सजीव न हो तो कपास और चाँदनी में अन्तर ही क्या हो।'[1] स्पष्ट है कि गीतकार ने प्रत्येक गीत के लिये अलग से कथावस्तु चुनी है।

छायावादी स्वभाव के अनुरूप चाँदनी का नायिका-रूप सर्वथा अवलोकनीय है -

अंग रँगे तारों की झलकें
नत चितवन, निद्रालस पलकें
पगतल-चुम्बित श्यामल अलकें
आधी रात, विचरती जूही-वन में बाला कोई
चाँदनी खिली दूध को धोई[2]

चाँदनी प्रियतम के निकट मुग्धा नायिका की भाँति प्रथमतः प्रणय के लिये आयी है। कवि की मनोरम शब्दावली द्रष्टव्य है -

चन्द्रमुखी तुम चाँद बनी, मैं तृषित चकोर-समाज
नील बसन कृश गोरे तन पर, श्रम-कण रहे विराज
भू पर ज्यों उतरी स्वर्गंगा, तारों का पट साज
मद से भरी, झुकी चितवन में प्रथम प्रणय की लाज[3]

इसी प्रकार की विषय-वस्तु से 'चाँदनी' गीत-संग्रह का कलेवर सजाया गया है।

गीत-काव्य (दो) नूपुर-बँधे चरण :

गीत-काव्य 'नूपुर-बँधे चरण'[4] श्री गुलाब खण्डेलवाल की विभिन्न प्रकार की रचनाओं का संग्रह है। प्रस्तुत संग्रह में गीत 45 और लम्बी कविताएँ 6 संग्रहीत हैं। अतः गीत बहुसंख्यक होने के कारण इस संग्रह को गीत-काव्य कहना उचित होगा। गीतों की दिशा में कवि अपना दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : 'चाँदनी' , भूमिका : कृष्णदेव प्रसाद गौड़ : पृ0 41.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 46. 3. वही : पृ0 65.
4. 'नूँपुर-बंधे चरण' : प्रथम सं0 1978 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक-कमल प्रकाशन : चौक, प्रतापगढ़।

कर चुका है। प्रस्तुत गीत-संकलन के सन्दर्भ में कविवर गुलाब खण्डेलवाल का कथन है - 'प्रस्तुत पुस्तक मेरे कुछ नये काव्य-प्रयोगों का संग्रह है। इनका रचनाकाल 1940 ई0 से लेकर 1961 ई0 तक फैला है अर्थात् मेरे कवि-जीवन की 16 वर्ष की अवस्था से लेकर 35-36 वर्ष की अवस्था तक की अनुभूतियाँ इस पुस्तक में संग्रहीत हैं।[1] प्रस्तुत पुस्तक विविधता लिये हुये है।

प्रस्तुत संग्रह की कविताएँ विविधता के लिये प्रसिद्ध हैं। इनका रचनाकाल 20 वर्ष की परिधि है जो एक प्रकार से अत्यन्त विशद है। प्रस्तावना में लिखा गया है - 'कवि जब यौवन की पंखुरियाँ खोल रहा था तब वह किस स्तर की काव्य-रचना कर रहा था और उस के साथ-साथ उसका चिन्तन किन ऊँचाइयों को छू रहा था ! वैसे 20 वर्ष की सृजन-काल की अवधि अपने में बहुत लम्बी अवधि है। इस बीच कवि, सुख-दुख, हर्ष-उल्लास, अपेक्षा-उपेक्षा, हास-रुदन और न जाने मन की किन-किन अनुभूतियों से प्रभावित हुआ है। सम्भव है कभी उसकी मनःस्थिति अपने किसी प्रिय के द्वारा उपेक्षित होने पर उद्वेलित हुई हो और कभी उसने स्वयं किसी की उपेक्षा की हो और पश्चाताप की मनःस्थिति में समय बिताया हो।[3]

'नूपुर-बँधे चरण' की रचनाओं में भविष्य के प्रबन्धकार कवि की छवि दिखायी देती है। एक ही विषय को लेकर कवि विविध ढंग से विस्तार और व्यापकता देते हुए अपनी प्रतिभा और कल्पना-शक्ति को परखता है जैसे कोई बाल-पक्षी अपने डैनों के बल की, उड़ने से पूर्व, थाह ले रहा हो। गड़ेरिये के गीत - 12, शोक-गीत - 8, श्रद्धासुमन - 5 आदि के रूप में कवि की बहुआयामी उड़ान देखी जा सकती है।

'नूपुर-बँधे चरण' की विषय-वस्तु :

'नुपूर-बँधे चरण' मे कवि गीतों के लिये एक बिन्दु चुनता है और फिर उसी बिन्दु पर गीत लिखता है। 'गीत-गुच्छ' (गीत संख्या 11) के गीतों की विषय-वस्तु रोमाण्टिकता के इर्द- गिर्द घूमती है और 'गड़ेरिये के गीत' में

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 103.
2. वही : पृ0 205 से 212 तक।
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 205.

'गड़ेरिये को केन्द्र बना कर जीवन की व्यापकता को समेटा गया है। इसी प्रकार शोक-गीत लिखते समय गीतकार परिजन और प्रियजनों को केन्द्र बनाता है। पीड़ा को विभाजित करना बेमानी होगा। 'स्मृति की रेखाएँ', उपशीर्षक के अन्तर्गत जो गीत लिखे गये हैं उनकी विषय-वस्तु प्रिय के स्मरण से सम्बन्धित है। अन्त मे कवि पूरी तरह जीवन के प्रति आश्वस्त और आशावान है, यथा-

मेरी आयु चुराकर क्षण-क्षण काल अमरता पाता
मर-मरकर जीता जाता मैं मिट-मिटकर मुस्काता
अमृत-मूल फल-फूल-विवर्जित मेरा वृन्त न होगा
मेरा अन्त न होगा। [1]

'एक कुम्हार-बाला के प्रति' (पृ0 40), 'हवा का राजकुमार और रात की रानी' (पृ0 19), 'मृग-तृष्णा' (पृ0 12), 'जादू का देश' (पृ0 18), 'पानी बरस कर खुल गया' (पृ0 6), और 'परशुराम का पश्चाताप' (पृ0 10) जैसी लम्बी रचनाएँ इस कल्पना को द्योतित करती हैं कि कवि निकट भविष्य में कोई प्रबन्धात्मक रचना लिखने की मानसिकता में है। लम्बी कविताओं को ध्यान से देखने से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि कवि स्थूल या प्रसिद्ध कथानक को लेकर कविता नहीं लिखता है बल्कि श्री जयशंकर प्रसाद की भाँति नाम मात्र की कथा-वस्तु लेकर कल्पना से विस्तार देता हुआ अभिलषित को अभिव्यक्ति देता है, जैसे 'परसुराम का पश्चाताप' में परशुराम अपनी माता की स्मृति करके कहते हैं —

आह दीन नारी ! भावनाओं का तुम्हारा पुष्प
काल के चरण से बना था ध्वस्त होने को !
पति जिसे देव-तुल्य पूजती सदा थी तुम !
फेंकता यों जीर्ण पादुका-सा तुम्हें क्षण में ! [2]

स्थूलकाय कविताओं की कथावस्तु काल्पनिक हैं लेकिन गीतों में जो भावगत गाम्भीर्य है उसके साथ इन विस्तृत कविताओं की कोई तुक समझ में नहीं आती जैसा कि प्रस्तावना में लिखा भी है - 'अच्छा होता कि ये 5-6

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : प्रस्तावना : नथमल केडिया : पृ0 110.
2. 'नूपुर-बँधे चरण' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 107.

कविताएँ इस पुस्तक में सम्मिलित नहीं करके अलग पुस्तिका के रूप में प्रकाशित होतीं।'[1] श्री नथमल केडिया का ऐसा इसलिए लिखना है कि 'श्रद्धा-सुमन' अर्पित करते समय कवि स्थूल धरातल पर उतर आया है जिससे कवि की समय-सापेक्षता अधिक बलवती हो उठी है। कवि विनोबा के साथ महात्मा गांधी का भी स्मरण कर लेता है जिससे गीतों की उच्चाशयता बाधित होती है। यहाँ दिये जा रहे कतिपय अंशों से ज्ञात होगा कि गीतों के मध्य इन कविताओं का औचित्य नहीं लगता है -

(1) सत्य-अहिंसा शस्त्र न छूटे सत्याग्रह-संग्रामी से
आज गरीबी से लड़ना है जैसे लड़े गुलामी से
आज नये बलिदान माँगता, नव युग पाँखें खोल रहा
बापू की वाणी में फिर से, सन्त विनोबा बोल रहा
जन-जन के अन्तर को छूता, साम्य-समीरण डोल रहा
मनुज-हृदय के जुड़ जाते ही एक निखिल भूगोल रहा।
बदल रही धारा जीवन की शान्ति क्रांति-परिणामी से[2]

(2) गाँव-गाँव में गाता कोई बापू का सन्देश चला
छ्यासठ कोटि पगों से उठकर, यह लो, सारा देश चला
कोटि-कोटि हलधर के जोड़े चले नील घनमाला-संग
भूमि चली, नभ चला, चराचर चले, स्वयं सर्वेश चला [3]

युवावस्था में जैसे विविधता होती है ठीक उसी प्रकार 'नूपुर-बँधे चरण' की कथावस्तु विविधता लिये हुये है। इसीलिए कवि कभी जीवन को कभी कुम्हार की बालिका के माध्यम से, कभी गड़ेरिये के गीतों के माध्यम से और कभी परशुराम के माध्यम से अपने विविध रूपों में व्यक्त करता है।

---

1. 'नूपुर बँधे चरण' : पृ0 109.
2. 'नूपुर-बँधे चरण' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 107
3. वही : पृ0 109

गीत-काव्य (तीन) 'ऊसर का फूल' :

प्रस्तुत कविता-संग्रह 'ऊसर का फूल'[1] में गुलाब खण्डेलवाल के 17 गीत और 11 कविताएँ संग्रहीत है। अतः इस संग्रह को कविता-संग्रह कहने की अपेक्षा गीत-संग्रह कहना अधिक उचित प्रतीत हो रहा है। ये गीत पूर्व गीतों की भाँति ही हैं। छायावादी प्रभाव यहाँ कम होता दिखायी देता है। प्रकाशन-क्रम की दृष्टि से इसे 'नूपुर-बँधे चरण' के पहले ही आना चाहिए। चूँकि 'ऊसर का फूल' में 1940 ई0 से 1950 ई0 तक की रचनाएँ संग्रहीत है, अतः सम्पादक ने इसे क्रमबद्धता में वरीयता प्रदान की है। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा हैं - 'प्रस्तुत संग्रह में 1941 ई0 से 1950 ई0 के बीच मेरे कुछ काव्य-प्रयोगो की बानगी है। यह एक प्रकार से मेरी अन्य पुस्तक 'नूपुर-बँधे चरण' का पूरक है।'[2] इस संग्रह का 'प्राक्कथन' श्री इम्तियाजुद्दीन खाँ ने लिखा है तथा 'समर्पण' 'कितने दिन के बाद' शीर्षक कविता की रहस्यमयी को किया गया है --

'ऊसर का फूल' की विषयवस्तु

प्रस्तुत संग्रह में प्रकाशित बहुसंख्यक गीतों की विषयवस्तु के सन्दर्भ में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि जब कवि की सोलह से छब्बीस वर्ष की आयु में गीत लिखे जायेंगे तब स्वाभाविक रूप से उनकी विषय-वस्तु रोमाण्टिक होगी। रूप-सौन्दर्य, सुकुमारता, मनुहार, प्रथम प्रणय, प्रथम परिचय, प्रिय की स्मृति, आकांक्षा आदि के भाव इस संग्रह के गीतों में बड़ी मांसलता से बिखरे हुए हैं।[3] स्थान-स्थान पर संस्कार भी अपना रंग जमाये हुए हैं -

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक- श्रीनारायण चतुर्वेदी : ऊसर का फूल, पृ0 73-102 (संग्रहीत).
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : गुलाब खण्डेलवाल की टिप्पणी : पृ0 74.
3. **रोम-रोम से फूट प्रेम की सरिता बह चलती है**
   मेरी आँखों में आँसू बन भावुकता पलती हैं
   ईश्वर है सौन्दर्य, प्रेम ही एक धर्म है मेरा
   -'गुलाब-ग्रन्थावली' : (प्रथम खण्ड) : पृ0 81.

वसन द्रुम, कलि, किसलय शतरंग
प्रतनु-उर, पीत-वदन, कृश-अंग
मन्द-स्मित, लघु-पद, नत-भ्रू-भंग
श्याम अंचल-प्रसारिका
चली संध्याभिसारिका [1]

गीतकार ने सम्वेदना और प्रेमानुभूतियों को बड़े कौशल से इन गीतों में उतार दिया है, इसीलिए ये गीत इतने मार्मिक बन पड़े हैं।

'पतझड़ और तितली', 'तारक-शिशु', 'प्रथम दर्शन', 'तीन चित्र', 'राजस्थान की प्रेमकथा' आदि ग्यारह कविताओं में प्रेम और प्रेम-सम्बन्धों को लेकर प्रकृति के उपादानों को साथ रखते हुये प्रतीकों के माध्यम से कवि अन्तर्मन की बात कहता गया है। 'राजस्थान की प्रेमकथा' 'ऊसर का फूल' की सबसे लम्बी कविता है जिसमें एक राजा एक कृषक-ललना का अपहरण करना चाहता है। उसका प्रेमी राजा के सैनिकों के आने के पूर्व उसे उस राजा के राज्य की सीमा से बाहर ले जाने के लिए आता है, परंतु वह अपनी माँ को छोड़कर नहीं जाना चाहती है। इसी बीच राजा के सैनिक पहुँच जाते हैं और उसके प्रेमी की हत्या करके उसे राजा के अंतःपुर में पहुँचा देते हैं।[2] 'कितने दिन के बाद तुम्हें देखा मैंने सुकुमारी' कवि की सर्वाधिक प्रिय कविता है। इस रचना में कवि प्रिय से पुनर्मिलन को रेखांकित करता है। निरन्तर पास रहनेवाली प्रिया चिर-स्मृतियों का विषय बन जाती है और पास रह जाती हैं गीत की ये पंक्तियाँ -

दिखती भी अब नहीं कभी जो दृग की हीरकनी थी
तिल भर भी अधिकार न उस पर जो मेरी अपनी थी
अन्य किसी-हित वे बाँहें, ग्रीवा वह चिबुक बनी थी
खेल रही मुझसे तुम तकती जिसकी आगमनी थी
मेरी सकल कमाई
पल में हुई पराई [3]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 87.
2. वह बोला 'वे सब जान चुके
   द्रुत भाग चलो, पर हाय !
   वह बढ़ती कैसे ! पाँव रुके
   'छोड़ूँ माँ को असहाय !' : 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 90.
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 18.

स्फुट कविताओं के विषय अलग-अलग होते हुए भी प्रेमिल और सौन्दर्य के मांसल रूप से सम्बन्धित हैं।

गीत-काव्य (चार) आयु बनी प्रस्तावना :

यशस्वी गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के प्रेम-सम्बन्धी गीतों का 'आयु बनी प्रस्तावना'[1] महत्त्वपूर्ण संग्रह है। प्रस्तुत संग्रह में 43 गीत हैं जो 88 पृष्ठों में फैले हुये हैं। इस गीत-पुस्तक का समर्पण प्रसिद्ध गीतकार हरिवंश राय 'बच्चन' के लिये किया गया है और आमुख स्वयं गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा है। डॉ0 रामकुमार वर्मा ने इन गीतों की प्रशंसा में लिखा है - 'जब गहरे साहित्य की चर्चा चलती है तो मैं गुलाब जी के गीत सुना-सुनाकर लोगों को चमत्कृत कर देता हूँ। मैं गुलाब जी को अपनी पीढ़ी का सर्वश्रेष्ठ कवि मानता हूँ'[2] 'आयु बनी प्रस्तावना' को 'गुलाब-ग्रन्थावली' के प्रथम खण्ड में संग्रहीत किया गया है। मूल पुस्तक में 43 गीत हैं जबकि ग्रन्थावली में संग्रहीत करते समय 44 वाँ गीत (रचना 1983 ई0) बढ़ा दिया गया है। आमुख लिखते हुये गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा है - 'आयु बनी प्रस्तवाना' 1948 ई0 से 1960 ई0 के बीच लिखे गये शताधिक अन्य गीत मैं अपने विविध संकलनों में दे चुका हूँ। उनके साथ प्रस्तुत संग्रह के गीतों को मिलाकर देखने से मेरे कवि-जीवन की प्रस्तावना उपलब्ध हो सकेगी।[3] वास्तव में इस संकलन के गीतों का रंगढंग बिल्कुल भिन्न प्रकार का है।

'आयु बनी प्रस्तावना' की विषय-वस्तु :

'आमुख' में गीतकार ने स्वयं विषय-वस्तु की ओर प्रेम-गीत के रूप में संकेत कर दिया है। इन गीतों में मांसल प्रेम (अभिसार-भोग आदि) का चित्रण कम और वास्तविक प्रेम की ओर जाने की बात बहुत जोर देकर कही गयी है। प्रेम एक तड़पन है जिसे शब्दों के वसन पहनाना बहुत कठिन है -

---

1. 'आयु बनी प्रस्तवाना' : प्रथम संस्करण - 1981 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक - कमल प्रकाशन, प्रतापगढ़।
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 188.
3. 'आयु बनी प्रस्तावना' : आमुख : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0

शब्दों से, लय से, कंचन से अथवा ताजमहल से
मन से, प्राणों से, आत्मा से, या अनात्म के तल से
गिरि को चीर मरुस्थल में सागर की धार बहाकर
कैसे बाहर करुँ प्रेम की तड़पन अन्तस्तल से ![1]

प्रेम में शंका दोनों ओर से बनी रहती है। अतः प्रेमी-युगल चिन्तित रहते हैं। अतः वे एक दूसरे को कहते हैं -

हृदय के स्पन्दनों को किन्तु कैसे आज समझाऊँ
मुझे तो एक ही तुम हो निखिल संसार के सच है
किरण में उड़ रही जो वह सुनहली डोर मत देखो
किसीकी ओर मत देखो, किसीकी ओर मत देखो
कि मेरा जी दहलता है[2]

संसार में प्रेम विचित्र होता है। प्रिय की निरन्तर एकान्तता ही इसमें मान्य होती है। इसके अतिरिक्त प्रेमियों को संसार में कुछ भी रुचिकर नहीं लगता है। प्रेम या प्रिय के निकट होने पर सब कुछ आनन्ददायक होता है -

जब से तुम से प्यार हो गया,
मुझे न कुछ अच्छा लगता है
सरिता-तट संध्या का तारा,
गीली धरती, सागर खारा
अपना आनन प्यारा प्यारा
जब से तुमसे प्यार हो गया
मुझे बहुत अच्छा लगता है[3]

'आयु बनी प्रस्तावना' के गीत प्रेम, मनुहार, संयोग-वियोग, मान-मनौवल और अनुराग की ऐसी सुन्दर माला गूँथते हैं कि जो भी इसका नैकट्य पाता है, इसकी स्नेहमयी सुगन्ध से स्वयं को सुवासित पाता है। इन गीतों में भोगे हुए जीवन की सच्चाई की झलक दिखायी देती है।

---

1. 'आयु बनी प्रस्तावना' : पृ0 9.
2. वही : पृ0 18-19.
3. 'आयु बनी प्रस्तवाना' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 60.

गीत-काव्य (पाँच) 'सब कुछ कृष्णार्पणम्' :

यद्यपि कविवर गुलाब खण्डेलवाल के गीत-लेखन की परम्परा का उद्भव 'कविता' (काव्य-संग्रह) से होता है तथापि 'सब कुछ कृष्णार्पणम्'[1] नामक कृति से गेय गीतों का सिलसिला वर्तमान (1993 ई0) तक बना हुआ है। प्रथम गीत-संग्रह 'सब कुछ कृष्णार्पणम्' देश और समाज के गौरव श्री गौरी शंकर जी डालमिया को समर्पित किया गया है। इस गीत-संग्रह के गीतों का रचना-काल कृति में 1983-85 ई0 में दिया गया है जबकि कुछ गीत आगे-पीछे के भी समायोजित कर दिये गये हैं। जैसे तिरपनवाँ, चौव्वनवाँ, और अठ्ठावनवाँ गीत 1987 ई0 का है तो पचपनवाँ, छप्पनवाँ एवं सत्तावनवां गीत 1948 ई0 का है। ये छवों गीत ग्रन्थावली के समय संग्रहीत किये गये होंगे। अन्यथा 1987 ई0 के प्रथम संस्करण 1985 ई0 में सम्मिलित नहीं हो सकते थे। इस गीत-संग्रह में कुल अठ्ठावन गीत हैं। इन गीतों के सन्दर्भ में गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा है - 'प्रस्तुत गीत, कुछ को छोड़कर, मैंने 1985 के दौरान अपने द्वितीय अमेरिका-प्रवास की अवधि में लिखे थे। इनमें मैंने अपने 'स्व' को परम विराट् के चरणों में समर्पित करने का प्रयास किया है।[2] इस गीत-संग्रह की भूमिका 'शरणागति की सहज वाणी' शीर्षक से श्री विष्णुकान्त शास्त्री ने लिखी है।

'सब कुछ कृष्णार्पणम्' की कथावस्तु :

यौवन के चन्द्रमा को जब ग्रहण लगता है तब वह अपनी शक्ति के आदि स्रोत सूर्य का पवित्र स्मरण करता है और अपने परिवेश की यथार्थता भी उसके सामने आ जाती है। इसी प्रकार गुलाब खण्डेलवाल ने जीवन का छठा दशक जिया और वे कवि से गीतकार हो गये। वे कह उठे -

अब यह नव प्रभात मधुमय हो
मंगलमय, द्युतिमय, शोभामय, पावन अरुणोदय हो[3]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : गीत सं0 सोलह : पृ0 375.
2. देखिए - 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 318 से 359 तक (संग्रहीत) :
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 320.

प्रबन्ध-काव्य की भाँति गीतों में कथावस्तु नहीं होती हैं। यहाँ तो एक-एक ससांर की क्षणभंगुरता, दुखों की अधिकता, यौवन और सौन्दर्य का क्षणिक आकर्षण, परिणाम में असन्तोष और दुख से गुलाब के गीतों का जन्म हुआ है। प्रभु में सर्वोच्च संज्ञा है। उसका आश्रय सहजबुद्धि से ही पाया जा सकता है। जब तक जीव परमात्मा के समक्ष आत्म-समर्पण नहीं कर देता तब तक उसका कल्याण नहीं है। तभी तो कवि सर्वशक्तिमान प्रभु से आत्म-निवेदन करता है -

आया चरण-शरण में बेसुध,
थककर चारों ओर से
दिन-दिन दुर्बल मन यह बाँधों
प्रभु ! करुणा की डोर से[2]

तन, मन, मिट्टी, वसन्त, नदी, माया, आकर्षण आदि अनेक बिन्दुओं को लेकर कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने कभी स्वयं को प्रबोधित किया है और कभी कदली के पौधे की भाँति संसार की वास्तविकता से लोक को आलोकित किया है। अपने प्रभु को किस प्रकार अपनी ओर आकर्षित किया जाय, इस भेद को जानने के लिए भी कवि ने अनेक गीत लिखे हैं, जैसे --

कैसे रूप तुम्हारा देखूँ !
इन चिर-चंचल आवर्तों में कैसे अचल सहारा देखूँ !
देखूँ नाव कि देखूँ डाँड़े, जल या जल की धारा देखूँ !
तुम्ही बता दो इस हलचल में कैसे पार किनारा देखूँ
क्या होगा, यदि भू-मंडल भी मैं सारा का सारा देखूँ !
दर्शन तो तब है जब तुमको इन नयनों के द्वारा देखूँ[3]

'सब कुछ कृष्णार्पणम्' के गीतों की कथावस्तु भक्ति, प्रेम, अनुनय और संसार की क्षण-भंगुरता है और कवि सांसारिकता से मुक्ति चाहता है।

---

1. हम तो गाकर मुक्त हुए : गीत सं0 तीन : पृ0 331.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : गीत संख्या पांच : पृ0 33।
3. सब कुछ कृष्णार्पणम : गीत सं0 तीन : पृ0 37.

गीत-काव्य (छः) 'हम तो गाकर मुक्त हुए' :

'हम तो गाकर मुक्त हुए' गीतकार गुलाब खण्डेलवाल का, गेय गीतों का द्वितीय गीत-संग्रह है।[1] इस संग्रह के गीतों की रचना 1986 ई0 से 1987 ई0 में हुई है। 'हम तो गाकर मुक्त हुए, गीत-संग्रह का प्रथम प्रकाशन 1987 ई0 में हुआ है। इसमें मात्र 65 गीत हैं। इन गीतों की 'भूमिका' लिखी है हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि और समीक्षक डॉ0 कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने और पुस्तकाकार गीतों का समर्पन किया गया है अमेरिका में हिन्दी की पताका फहराने वाले डॉ0 रविप्रकाश सिंह को। ये गीत श्री गुलाब खण्डेलवाल के अन्य गीतों से भिन्न हैं। इस सन्दर्भ में डॉ0 सिंह ने लिखा है - 'गुलाब जी के काव्य-उपवन में खिले हुये ताज़ातर गुलाबों का स्तवक है - 'हम तो गाकर मुक्त हुए'। इस स्तवक के गुलाब पूर्ववर्ती गुलाबों से रूप, रंग, रस, गंध आदि में भिन्न हैं। यदि सर्वथा भिन्न कहूँ तो भी अत्युक्ति नहीं है।'[2] यदि प्रति पग नाविन्य न होता तो कौन श्री गुलाब खण्डेलवाल को सशक्त कवि मानता !

ग्रन्थावली-सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी ने 'हम तो गाकर मुक्त हुए' के सन्दर्भ में लिखा है - 'इस पुस्तक में सब कुछ कृष्णार्पणम् के बाद के गीत संकलित हैं और ये गीत एक प्रकार से उन गीतों के पूरक हैं। इनमें भी वही समर्पण, वहीं भक्ति-भावना और वही आत्म-निवेदन के भाव हैं जो 'सब कुछ कृष्णार्पणम्' के गीतों में हैं परन्तु स्वर और अभिव्यक्ति के प्रकार में कुछ अन्तर है। इनकी विषय-वस्तु में भी पहले से अधिक विविधता है।[3] सब कुछ कृष्णार्पणम्' में कवि सब कुछ अन्तर्यामी को समर्पित कर चुका, लेकिन शायद गीतकार को यह लगा कि समर्पण में कहीं कुछ शेष रह गया है। अतः यह कहना- 'हम तो गाकर मुक्त हुए' समीचीन प्रतीत होता है। क्योंकि भक्ति-भावना से अभिभूत कवि इस प्रकार की वाणी का उपयोग प्रायः करते रहे हैं। यथा --

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक श्री नारायण चतुर्वेदी : 'हम तो गाकर मुक्त हुए : पृ0 360 से 399 तक संग्रहीत : प्रकाशक - कमल प्रकाशन : 105, मकुंद्रीगंज, प्रतापगढ़।
2. गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : भूमिका : डॉ0 कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह पृ0 363.
3. वही : भूमिका : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 ण।

थककर चूर-चूर तन मेरा
पर न पराजित है मन मेरा
जिसको सब कुछ अर्पण मेरा
उसकी जय के लिये काल से भी दो हाथ लड़ेगा।
अब यह ध्वजा कौन पकड़ेगा ?[1]

'हम तो गाकर मुक्त हुए' की कथावस्तु :

प्रबंध-काव्य की भाँति गीतों में कथा वस्तु नहीं होती यहाँ तो गीत रूपी मोती को भावना, शब्द और अभ्यासरूपी कसौटी पर बार-बार कसा जाता है। अतः प्रत्येक गीत की कथावस्तु भी पृथक्-पृथक् होती है। यह स्थिति होते हुए भी 'हम तो गाकर मुक्त हुए' गीत-संग्रह की कथावस्तु में एकात्म-भाव-तन्तु है। जीवात्मा को जब यह अनुभव हो जाता है कि अब उसके वश में कुछ भी नहीं है तो वह स्वयं की स्थिति से अवगत हो जाती है और तब वह केवल उसी शक्ति के सम्बल से आगे बढ़ना चाहती है--

ओ सहचर अनजाने !
मुझको तो गतिमय रखा है तेरी ही करुणा ने
जब तक हाथ शीश पर तेरा
कोई क्या कर लेगा मेरा !
फटता जाता आप अँधेरा
कटते जाते हैं भय-संशय के कुल ताने-बाने

गीत-काव्य (सात) 'कितने जीवन, कितनी बार' :

'कितने जीवन, कितनी बार'[2] गीतकार श्री गुलाब खण्डेलवाल की रचना का नामकरण अज्ञेय की ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित 'कितनी नावों में कितनी बार' के आधार पर रखा गया प्रतीत होता है। श्री गुलाब खण्डेलवाल को हिन्दी-साहित्य की कोई विधा बाँध कर नहीं रख सकी है। उन्होंने कभी कवि, कभी ग़ज़लकार, कभी नाटककार, कभी गीतकार और कभी अंग्रेजी कवि

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 320.
2. 'कितने जीवन, कितनी बार' : 1988 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक वाणी-मन्दिर : प्रतापगढ़ :

के रूप में अपने को प्रस्तुत किया है। यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यान देने की है कि उन्होंने हिन्दी की विभिन्न विधाओ में लेखनी को आजमाया नहीं है बल्कि साधिकार सृजन किया है। जिस क्षेत्र में भी गुलाब खण्डेलवाल का भावुक मन गया है, उसने बुद्धि को बड़ी सजगता से अपने साथ रखा है। यही कारण है कि वे जो कुछ भी कहते गये हैं उससे हिंदी साहित्य की श्री-वृद्धि होती गई है।

'कितने जीवन, कितनी बार' गीत-संग्रह में श्री गुलाब खण्डेलवाल के 80 गीत हैं जो अस्सी पृष्ठों में सुसज्जित किये गये हैं। अन्य चार पृष्ठों सहित गीत-संग्रह में 84 पृष्ठ हैं। दो शब्द लिखते हुये गीतकार ने लिखा है - 'प्रस्तुत गीतों में से अधिकांश मैंने सन् 1988 के अपने अमेरिका-प्रवास के दौरान लिखे हैं। प्रस्तुत संग्रह के गीतों में मेरी सम्वेदना विविध आलम्बन-फलकों से परावर्तित होकर अनेक रूप-रंगों में फूट पड़ी है।'[1] इन गीतों में गीतकार गुलाब खण्डेलवाल की विलक्षणता यह है कि भावगत, शब्दगत एवं रूपगत एकरूपता प्रायः नहीं देखी जाती है। अर्थात् शिल्पगत वैविध्य है जो पाठकों को सम्मोहित कर देता है।

'कितने जीवन, कितनी बार' की विषय-वस्तु :

इस गीत-संग्रह का प्रथम गीत विषय-वस्तु का द्वार इन शब्दों में खोलता है--

कितने जीवन, कितनी बार
तुमने दिये एक जीवन में, मेरे सिरजनहार ![1]

वास्तव में मनुष्य को कहने को तो एक जीवन मिलता है लेकिन इस जीवन में उसे राग-विराग सुख-दुख, हर्ष-विषाद, उत्थान-पतन, विश्वास-अविश्वास, द्वेष-घृणा और आस्तिकता-नास्तिकता जैसे विरोधी समीकरणों का अनुभव होता है। यदि वह संवेदनशील हैं तो इनमें भी अपने लिये सुख के पल खोज लेता है और क्षणानन्द में सुखी होता है। गीतकार गुलाब की भावुकता जीवन-यात्रा पर निकलती रही है और प्रत्येक प्रकार के अनुभूत सत्य को शब्दायित करके लोक को गीत का उपहार देती रही है। इस गीतराशि की विषयवस्तु

---

1. 'कितने जीवन, कितनी बार' : गीत संख्या - : पृ0 1.

संसार की रहस्यमयता, संयोग-वियोग, प्रिय से आत्म-निवेदन, आत्मतोष, आत्म-निर्णय, आत्म-निरीक्षण और आत्मानन्द है। आस्था की डोर कवि नहीं छोड़ना चाहता है।[1]

'कितने जीवन, कितनी बार' के गीतों में जीवन-दर्शन के भाव परम्परागत आदर्शों एवं मौलिक चिन्तन के रूप में ऐसे घुले-मिले हैं मानों दूध और पानी को मिलाकर एकाकार कर दिया गया हो। जीवन का चक्र निरन्तर चल रहा है। चिर-नूतनता इस चक्र की अपनी विशेषता है। इस रहस्य को सदैव से जानने की प्रक्रिया चल रही है।[2] इस लिए वह कभी अभेद-बुद्धि चाहता है, कभी निवेदन तो कभी मनुहार करता है और कभी उसे अपनी अल्पज्ञता, अल्प शक्ति और अल्प साधना पर खेद होता है। जैसे भी हो, गीतकार अपने प्रियतम-रूपी परमात्मा को अपनी ओर आकर्षित करना चाहता है और इस लिए कभी लौकिक भावों की माला पिरोता है तो कभी अलौकिक परिसर में विचरण करता है।

इन गीतों की विषय-वस्तु जीवन, जगत और आनन्द से सम्बन्धित है और निरन्तर आनंद की उपलब्धि गीतकार का अभिलषित है।

गीत-काव्य (आठ) 'नाव सिन्धु में छोड़ी' :

प्रौढ़ कवि गुलाब खण्डेलवाल का 'नाव सिन्धु में छोड़ी'[3] शीर्षक से चौथा गीत-संग्रह है। इस गीत संग्रह में सत्तर गीत, एक कविता (पतझड़), तीन मुक्तक और अन्त में एक अंग्रेजी कविता है। प्रस्तुत गीत-संग्रह का कलेवर

---

1. **यह संसार भले ही छूटे, आस्था की दृढ़ डोर न टूटे।**
   'कितने जीवन, कितनी बार' : गीत - 4.
2. **चक्कर में है बुद्धि, चेतना थककर बैठ गई है,**
   चिर-पुराण होकर भी मेरी यात्रा नित्य नई है,
   चालक को तो क्या, मैंने निज को न अभी पहचाना
   मार्ग अनदेखा, लक्ष्य अजाना
   'कितने जीवन, कितनी बार' : गीत-36.
3. 'नाव सिन्धु में छोड़ी' : प्रथम संस्करण : 1991 : ई0 गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक - वाणी मन्दिर : कचहरी रोड़ : प्रतापगढ़ : (उ0 प्र0)।

आकर्षक तथा उत्तम है। गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने दो शब्द और श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' (पद्मश्री) ने अपेक्षित विस्तार से भूमिका लिखी है। गीत-पुस्तक के खुलते ही डॉ0 रामकुमार वर्मा (पद्मश्री) का आशीर्वचन है। डॉ0 वर्मा ने लिखा है - 'मैं गुलाब जी को, उनकी काव्य-प्रतिभा का हार्दिक अभिनन्दन करते हुये, हार्दिक साधुवाद और बधाई देना चाहता हूँ कि उनकी प्रतिभा निरन्तर अग्रसर होती रहे कि वह सारे विश्व में फैल जाय कि वह हमारे साहित्य का प्रतिनिधित्व इस देश में तो है ही, विदेशों में भी जाकर करे। इससे हिन्दी का कल्याण और उनकी प्रतिभा का समादर होगा।'[1] वास्तव में गुलाब जी के गीत कुछ इस प्रकार के ही हैं कि उन्हें जो पढ़ता है वही उन्हें आत्मीयता से सरोबर पाता है।

प्रतिष्ठित साहित्यकार गुलाब खण्डेलवाल की सभी पुस्तकें भले ही वे आकार-प्रकार में कैसी ही हों, लेकिन 'नाव सिन्धु में छोड़ी' की भाँति मुद्रण-दोषपूर्ण नहीं हैं। लगता है कि इस पुस्तक के प्रकाशन का भार जिसे भी दिया गया है, उसने इस कार्य को गम्भीरता से नहीं लिया है। सूची पूरी तरह से अव्यवस्थित है। पुस्तक में गीतों की संख्या 70 है और यहाँ 60 दी गयी है। पुस्तक में कुल 74 पृष्ठ हैं जबकि 'कौन आता है सपना बन के' पृष्ठ सं0 80 पर दर्शाया गया है। इसी प्रकार सूची में पृष्ठ सं0 9 और 29 आदि हैं ही नहीं। इससे तो यही उत्तम होता कि सूची न दी जाती। श्रम और समय दोनों की बचत होती। जो बात पाठकों को खलती है उसका कारण यह है कि गीत की प्रथम पंक्ति को लेकर जो अकारादि क्रम देने का प्रयास किया गया है उसीसे उलझन उत्पन्न हो गयी है। शीघ्रतावश ऐसी त्रुटियाँ प्रायः हो जाती हैं। परंतु पाठक को अवश्य यह सब खलता है।

'नाव सिन्धु में छोड़ी' की कथावस्तु :

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने गीतों की रचना की ओर संकेत देते हुए लिखा है - 'प्रस्तुत संग्रह 'नाव सिन्धु में छोड़ी के गीत सन् 1990 ई0 में अमेरिका में लिखे गये थे। इसे मेरी समय-समय पर बदलती मनस्थितियों का गीत-अलबम कहा जा सकता है। राधा-कृष्ण और सीता-राम के प्रेम पारावार में से कुछ अनबिँधे मुक्ताकण भी मैंने इसमें बटोरे हैं। मुझे आशा है, भक्ति,

---

1. 'नाव सिन्धु में छोड़ी' : आशीर्वचन : डॉ0 रामकुमार वर्मा : पृ0 3.

विनय और प्रेम की इस त्रिवेणी का अवगाहन रसिकों को रुचिकर लगेगा।'[1] गीतकार के कथन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत संग्रह के गीत किसी एक विषय को लेकर नहीं लिखे गये हैं बल्कि मन और बुद्धि के भावुक मेघों को लेकर निकलते रहे हैं तथा गीतों की वर्षा करते रहे हैं। प्रधान रूप से इन गीतों में भक्ति, प्रेम और विनय है।[2] नाव सिन्धु में छोड़ी की कथावस्तु के सन्दर्भ में भूमिका में लेखक श्री क्षेमचन्द 'सुमन' ने लिखा है - 'जीवन की अनेक मीठी-तीखी, अनुभूतियों को छोटे-छोटे गीतों और मुक्तकों में रूपायित करने की जो अद्भुत क्षमता कवि गुलाब में है वह कदाचित् अन्यत्र विरल ही दृष्टिगत होगी।'[3] राधाकृष्ण और सीताराम से सम्बन्धित जो गीत हैं वही पल्लवित होकर क्रमशः 'गीत-वृन्दावन' और 'सीता-वनवास' के रूप में पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं। प्रस्तुत गीत-संग्रह के गीतों की विषय-वस्तु विश्रृंखलित है।

गीत-काव्य (नौ) 'गीत-वृन्दावन' :

छायावादोत्तर गीत-कवियों में स्वनामधन्य श्री गुलाब खण्डेलवाल की राधाकृष्ण के प्रेम सम्बन्धों को लेकर लिखी गयी नवीनतम और प्रौढ़तम रचना 'गीत-वृन्दावन'[4] की रचना 1991 ई0 के अन्तर्गत अमेरिका-प्रवास के मध्य की गयी है। इन गीतों की संख्या 61 है जो 61 पृष्ठों की कृति में प्रसारित हैं। 'गीत-वृन्दावन' की भूमिका श्री शम्भुशरण सिन्हा (प्राचार्य) कामर्स कॉलेज, पटना ने लिखी है और अपनी बात श्री गुलाब खण्डेलवाल ने स्वयं लिखी है। गीतकार गुलाब ने इन गीतों के सन्दर्भ में लिखा है-- 'राधा कृष्ण की जिस मर्मस्पर्शी विरह-कथा पर सूर से लेकर रत्नाकर तक हिन्दी के अनेक मूर्धन्य कवियों की लेखनी से अजस्र रस का स्रोत प्रवाहित होता रहा है, उस पर मैंने भी अपनी ओर से कुछ कहने की चेष्टा क्यों की है, वह इस कृति को पढ़कर ही समझा जा सकेगा। मैं तो यही कहना चाहूँगा कि मैंने उस महान काव्य-परम्परा में

---

1. 'नाव सिन्धु में छोड़ी' : दो शब्द : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 13.
2. **कहाँ तक उड़ती जाय पतंग ?**
   चार हाथ की डोर, तुनुक हैं धागे, कच्चे रंग।
   'नाव सिन्धु में छोड़ी' गीत संख्या - 4 : पृ0 4.
3. 'गीत-वृन्दावन' (प्रथम संस्करण 1993 ई0) गुलाब खण्डेलवाल।
4. 'गीत-वृन्दावन' : अपनी बात : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 3.

प्रस्तुत रचना द्वारा कुछ नवीन पृष्ठ जोड़ने का विनम्र प्रयास किया है।' वास्तव में यह विनम्र प्रयास कृष्ण-काव्य-परम्परा की महत्त्वपूर्ण कड़ी है।

राधा और कृष्ण अलौकिक शक्ति के सगुण अवतार हैं। इन दोनों का प्रेम अद्वितीय है। राधा कृष्ण की अनन्य उपासिका हैं। प्रेम की जो उत्कृष्टता और तल्लीनता राधा के प्रेम में दिखायी देती है वह कृष्ण-कथा के किसी अन्य नारी-पात्र में नहीं दिखायी देती है। भक्तिकाल से लेकर वर्तमान तक राधा के प्रेम अथवा राधा के प्रेमिल व्यक्तित्व को लेकर कवियों ने अलग-अलग ढंग से प्रस्तुति दी है जैसे - सूर की राधा अत्यन्त शान्त, संयत और गम्भीर हैं, नन्ददास की राधा एकदम इससे विपरीत स्वभाव की है जबकि रीतिकालीन कवियों ने राधा को एक साधारण प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है और आधुनिक युग के कवि जगन्नाथ रत्नाकार ने राधा को अपने युग से पूर्व की राधा से एक भिन्न ही रूप में प्रस्तुत किया है। डॉ0 शम्भु शरण सिन्हा ने लिखा है - 'गीत-वृन्दावन' की राधा का आदर्श सूर की राधा है। एक ओर वह अबुध किशोरी है वहीं दूसरी ओर उसमें निरुत्तर कर देने वाली वाग्विदग्धता भी है। एक ओर वह मानिनी है तो दूसरी ओर पूर्व-समर्पिता भी है। उसके स्वभाव के परस्पर विरोधी रूपों का अन्तःसंघर्ष उसके व्यक्तित्व को अप्रतिम सौन्दर्य से मण्डित कर देता है।[1] स्पष्ट है कि गीत-वृन्दावन' की राधा बुद्धि-कुशला है और कृष्ण को एक मात्र समर्पिता हैं।

'गीत-वृन्दावन' की विषय-वस्तु :

'गीत-वृन्दावन' के गीतों की विषयवस्तु का यदि आकलन किया जाय तो वह वृन्दावन की सघन स्मृतियों, मथुरा में कृष्ण की व्यस्तताओं और प्रेमिल स्मृतियों तथा द्वारिका में राधा के कृष्ण से मिलन से सम्बन्धित है। कृष्ण चाहे मथुरा की राजनीति में रम गये हों और चाहे रूक्मिणी से परिणय-सूत्र में बँध गयें हों अथवा द्वारिकाधीश हो गये हों लेकिन उनका राधा के प्रति किसी भी दशा में प्रेम कम नहीं हुआ है। इसी प्रकार, राधा आजीवन एक मात्र कृष्ण की चेरी है, उसे कृष्ण के अतिरिक्त तीनों लोक में कुछ भी और नहीं चाहिए। प्रेमिका होते हुए भी राधा प्रेम का मान चाहती है, यथा -

---

1. 'गीत-वृन्दावन' : भूमिका : शम्भु शरण सिन्हा : पृ0 8.

अब तो छोड़ नहीं जायेंगे
अब की बिछुड़ी फिर न मिलूँगी लाख यहाँ आयेंगे
भले द्वारिकाधीश कहायें
इस दुखिया को छोड़ न जायें
नाथ ! साथ वृन्दावन आयें
मुझे तभी पायेंगे[1]

इन गीतों में राधा के अतिरिक्त अनेक और पात्र भी हैं जिनमें रूक्मिणी भारतीय पतिव्रता नारी के रूप में और नन्द तथा यशोदा परम्परागत रूप में दिखाये गये हैं। उद्धव का नाम तो अनेक पदो में आया है लेकिन रूप भी परम्परागत ही है। प्रमुख रूप से कवि का अभिलषित राधा और कृष्ण का अप्रतिम प्रेम ही है।

गीत-काव्य (दस) 'सीता-वनवास'

'सीता-वनवास'[1] बीसवीं सदी के मध्य में प्रसिद्ध गीतकार श्री गुलाब खण्डेलवाल की प्रौढ़ गीत-कृति है। सीता-वनवास की प्रौढ़तम ऊँचाइयों को छूनेवाली कृति है महाकवि भवभूति की 'उत्तररामचरितम्' जो कवि गुलाब को उपलब्ध नहीं हो सकी है- 'मेरे पूर्व महाकवि भवभूति अपने प्रसिद्ध नाटक 'उत्तर रामचरितम्' में इस प्रसंग पर कलम चला चुके हैं किन्तु मैंने उन्हें नहीं पढ़ा और लिखने के पूर्व यदि पढ़ना चाहता भी तो मुझे अमेरिका में उनका नाटक सहज ही उपलब्ध नहीं हो पाता; अतः यदि भवभूति के उक्त नाटक से प्रस्तुत रचना में कहीं कोई भाव-साम्य दिखायी पड़े तो मुझे उनके समानधर्मा होने का गौरव ही मिलना चाहिए, भावापहरण का लांछन नहीं।'[2] श्री खण्डेलवाल के इस कथन से यह बात स्पष्ट है कि 'सीता-वनवास' की रचना अमेरिका में हुई है। कवि ने स्वीकार भी किया है - 'सीता-वनवास' की रचना दिसम्बर 1991 से जून 1992 के बीच हुई है।[3] इस कृति के गीतों में कवि का

---

1. 'सीता-वनवास' : प्रथम संस्करण - 1993 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशन, कमल प्रकाशन, 105 मकंदूगंज, चौक - प्रतापगढ़ (उ0 प्र0)।
2. 'सीता-वनवास' : अपनी ओर से : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 3.
3. वही : पृ0 3.

आत्म-विश्वास अधिक ओजस्वी हो उठा है। 'सीता-वनवास' के सन्दर्भ में कवि का आत्मकथन है - 'तुलसी की कलम ने लाँघा मत हो, परन्तु 'गीतावलि' में उसे थाहने का प्रयत्न अवश्य किया है। प्रस्तुत पुस्तक में गोस्वामी जी से हटकर सीता के आँसुओं के उस महासागर को अपने ढंग से थाहने का प्रयत्न मैंने भी किया है।'[1]

'सीता-वनवास' की विषय-वस्तु :

'सीता-वनवास' मात्र 67 पृष्ठों की गीत-पुस्तक है जिसमें 62 गीत हैं। ये गीत गेय-तत्त्व-प्रधान हैं। इन गीतों की भाषा की सर्वमान्य विशेषता यह है कि भाषा सरल, स्पष्ट, सुबोध एवं सुरुचिपूर्ण है। इन गीतों की भाषा में हृदय के गुरु, गम्भीरतम भावों को उतारने की कला गुलाब खण्डेलवाल जैसे कुशल और अनवरत साधक से ही सम्भव हुई है।

कौशल्या 'सीता-वनवास' की बात सुनकर अत्यन्त दुखी हैं। उन्हें गत चौदह वर्षों का वनवास-काल स्मरण हो आता है। जब सीता नगर-परित्याग करती है तब इन शब्दों को सुनकर नर और नारी विकल हो उठते हैं। सीता की वाणी में अद्वितीय करुणा है -

उतर चुकी हूँ सिंहासन से,
स्वामी ! पर न उतारें मन से,
पा न सकी जो कुछ इस तन से,
नये जन्म में पाऊँ।[2]

सीता-वनवास का समाचार सुग्रीव को अच्छा नहीं लगा। रथवाह स्वयं लक्ष्मण ने हृदय पर शिला रख उन्हें वन तक पहुँचाया तथा स्वर्गस्थ इन्द्र की सभा भी रो पड़ी। सीता वाल्मीकि-आश्रम में पहुँच जाती हैं। उन्हें जनकपुरी, विवाहोत्सव, वन-गमन, लंकावास, हनुमान की मातृभक्ति और राम का राज्याभिषेक याद आता है। इधर राम भी पूरी-पूरी रात जागते रहते हैं। सीता की सुधि उन्हें बेसुध कर जाती है। सीता ने लव-कुश को जन्म दिया है। लेकिन उन्हें राम का स्मरण प्रतिपल बना रहता है। दोनों भाइ रामकथा को लीला-रूप

---

1. 'सीता-वनवास' : पृ0 4.
2. 'सीता-वनवास' : गीत सं0 - 5 : पृ0 11.

में परिवर्तित करते हैं, मानों वे इस प्रकार माँ की पीड़ा को कम कर देते हैं -

पुतला कभी बना रावण का
विकट ठाठ रच देते रण का
धनु-शर कसे राम-लक्ष्मण का
रूप मनोहर धरते।[1]

राम के अश्वमेध का घोड़ा लव-कुश द्वारा न केवल रोक लिया जाता है प्रत्युत सभी योद्धा परास्त होते हैं। राम को स्वयं आना पड़ता है। यज्ञ की शुभ समाप्ति के पश्चात् राम सभी सभासदों, गुरू वशिष्ट, स्वसुर जनक और उनकी पत्नी, विश्वामित्र आदि के साथ सीता को अवध लौटाने के लिए जाते हैं परंतु सीता लौटना स्वीकार नहीं करती और यज्ञ-कुंड में कूदकर प्राण त्याग देती है। जब सीता भूमिष्ठ हो जाती हैं तब सभी विकल होते हैं । कवि इक्यावनवें गीत में सीता का सामान्यीकरण कर देता है -

नित्य देनी है अग्नि-परीक्षा
यही एक नारी के जीवन की है सच्ची शिक्षा[2]

'सीता-वनवास' की संक्षेप में यही विषय-वस्तु है।

(ख) प्रबन्ध-काव्यों का परिचय, रचना-काल, विषयवस्तु एवं प्रकाशन :

समुद्र के तट पर शैवालों का पर्वत खड़ा करना विशेष महत्त्व की बात नहीं है, विशेष बात तो तब होती जब कोई गोताखोर अपार जलराशि को चीरता हुआ हाथ में कुछ मोती लेकर बाहर आता है। गुलाब खण्डेलवाल एक ऐसे साहित्यकार हैं जो सागर से अलौकिक दीप्तिवाले काव्य-मौक्तिक लोक के हाथों में अर्पित करते हैं। उन्होंने प्रबन्ध-काव्य के रूप में छः प्रबन्ध-काव्य दिये हैं। 'उषा' महाकाव्य काल्पनिक किन्तु जीवन के यथार्थ पर आधारित है जो छायावाद का उल्लेख्य काव्य है और 'कच-देवयानी' तथा 'अहल्या' पौराणिक कथानक पर आधारित खण्डकाव्य हैं जिनमें प्रत्येक पग पर मौलिकता का परिचय दिया गया है। 'आलोक-वृत्त' के अतिरिक्त महात्मा गांधी के लोक-व्यापी जीवन के प्रभाव

---

1. 'सीता-वनवास' : गीत संख्या 71 : पृ0 27.
2. 'कच-देवयानी' : तृतीय संस्करण : गुलाब खण्डेलवाल ।

को लेकर श्री गुलाब ने 'गांधी भारती' की रचना की है। यहाँ गुलाब जी के सभी प्रबन्धकाव्यों का परिचय दिया जा रहा है-

प्रबन्ध-काव्य (एक) 'कच-देवयानी' (खण्डकाव्य) :

प्रतिभाशाली कवि गुलाब खण्डेलवाल द्वारा रचित 'कच-देवयानी'[1] उनका प्रथम खण्डकाव्य है। यह खण्डकाव्य प्रिय पुत्री शकुन्तला की पुण्य स्मृति में समर्पित है जो मात्र साढ़े तीन वर्ष की अल्पायु में दिवंगत हो गई। स्वयं भूमिका लिखते हुए गुलाब जी ने कहा है - 'कच-देवयानी' मेरी 1945 ई0 की रचना है, साथ ही साथ मेरे काव्य-विकास की एक सीमा-रेखा भी। इसका कथानक महाभारत पर आधारित है। इस काव्य-रचना में मैंने कच और देवयानी के चरित्रों के पारस्परिक विरोधों का निरूपण किया है। यह विरोध न केवल संस्कृतिगत और जातिगत है बल्कि स्त्री-पुरुष की प्रवृत्ति और प्रकृतिगत भिन्नता का भी सूचक हैं। यही पारस्परिक विरोध पुस्तक के दोनो सर्गो में कच और देवयानी की सम्वेदनाओं और मनःस्थितियों के अलगाव को चित्रित करता है।'[2] कच और देवयानी का प्रसंग लोक-ख्यति-प्राप्त है। कवि की प्रस्तुति बड़ी ही भावपूर्ण और मनोहारी है।

'कच-देवयानी' (खण्ड-काव्य) की विषय-वस्तु :

कच-देवयानी खण्ड-काव्य में कुल 80 पृष्ठ हैं। कवि ने एक ही प्रकार के छन्द में कच और देवयानी की प्रेम-कथा दो सर्गों में विभक्त करके प्रस्तुत की है। पुस्तक के अन्त में कच-देवयानी-अध्ययन-सूत्र शीर्षक से कठिन पंक्तियों के अर्थ-संकेत दे दिये गये हैं जिससे छात्रों को समझने में सुगमता

---

1. कच-देवयानी : भूमिका : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 3.
2. **उस पर यह भगिनी का नाता, वासना क्षुधा से ऊपर जो**
   आत्मा का परिणय नर-नारी-सम्बन्ध श्रेष्ठतम भू पर जो
   जो इसे कलंकित करते निज, कामना-पूर्ति के साधन में
   वे रौरव-भागी, बहन बना, जो भर लेते आलिंगन में
   -'कच-देवयानी' : पृ0 58.

रहे क्योंकि यह खण्डकाव्य मगध विश्वविद्यालय में इंटरमीडियेट के छात्रों को पाठ्यक्रम में दिया गया है।

दानवों के गुरु शुक्राचार्य के आश्रम में कच संजीवनी-विद्या प्राप्त करने आया है। अपनी गुरुभक्ति एवं श्रृद्धा से गुरुवर से संजीवनी-विद्या प्राप्त कर विदा की अंतिम रात में गुरुपुत्री देवयानी को आते देखकर वह उससे परिचय पूछता है। देवयानी प्रांरभ से ही कच पर अनुरक्त थी पर वह उसके सम्मुख आकर कभी अपने प्रेम की बात नहीं कह सकी थी यद्यपि शुक्राचार्य ने उसके कहने से तीन बार राक्षसों द्वारा मारे गये कच को जीवित कर दिया था

देवयानी के मुख से अपने प्रति उसके प्रेम की बात सुनकर कच सहर्ष उसे स्वीकार कर लेता है परंतु विदा होते समय प्रभात में अपने भविष्य का ध्यान करके कच-देवयानी को गुरुपुत्री होने के कारण अपनी बहन घोषित कर देता है। बहुत अनुनय करने पर भी जब कच उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करने से मुँह मोड़ लेता है तो देवयानी खीझकर उसे शाप देती है कि उसकी संजीवनी विद्या विफल हो जायगी।

प्रत्युत्तर में कच भी देवयानी को शाप देता है कि उसका विवाह किसी ब्राह्मणेतर पुरुष से ही हो सकेगा। कोई ब्राह्मण-कुमार उसे स्वीकार नहीं करेगा। वास्तव में कच और देवयानी की प्रेम-कथा बड़ी मार्मिक है जिसे कवि ने बड़े ही मनोयोग से लिखा है। देवयानी का प्रेम इसलिये असफल रहा कि वह कच के समक्ष प्रारंभ में कभी उसे मुखरित नहीं कर सकी और शुक्राचार्य भी संकोचवश उसे अभिव्यक्ति का विषय नहीं बना सके। पहले सर्ग में कच द्वारा देवयानी को प्रेमिका के रूप में स्वीकार करना तथा दूसरे सर्ग में अपने भावी यश के लिए तथा बाधा स्वरूप में समझकर बहन मानकर उससे पिंड छुड़ाने का प्रयत्न करना, कवि द्वारा बड़ी कुशलता से चित्रित किया गया है। इस प्रबंध में अभिव्यक्ति की चारुता तथा चित्रमत्ता पंक्ति-पंक्ति से झलकती है और कवि का यह कथन कि यह उसके काव्य-विकास की सीमा रेखा है, उपयुक्त लगता है।

---

1. **अंचल पसार कर भिक्षा में, लूँगी न स्नेह यह आधा मैं**
   साधन अब नहीं बनूँगी उन देवों के पथ की बाधा मैं
   स्वातंत्र्य न खोयेगा स्वदेश, चढ़ प्रेम-तुला पर नारी की
   संजीवन-शक्ति विफल होगी, तुम-से निर्मम अधिकारी की
   'कच-देवयानी' : पृ0 60-61.

प्रबन्ध-काव्य (दो) 'उषा' (महाकाव्य) :

कविता की व्यापक साधना महाकाव्य को जन्म देती है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने सन् 1936 ई0 से काव्य-जगत में प्रवेश किया और तब से निरन्तर कविता का अभ्यास करते हुये वर्तमान समय तक अपनी लेखनी को धन्य बना रहे हैं। गुलाब जी का 'उषा'[1] महाकाव्य उनकी सतत उठती ऊँचाईयों का परिणाम है। 'उषा' की रचना सन् 1946 ई0 से लेकर 1950 ई0 के बीच हुई है। प्राक्कथन लिखा है श्री सुमित्रानन्दन पन्त ने और आर्शीवचन लिखा है आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (मगध विश्वविद्यालय, गया) ने। कवि ने अपने साहित्य-गुरु श्रीयुत् कृष्णदेव प्रसाद जी गौड़ 'बेढब बनारसी' को 'उषा' महाकाव्य समर्पित किया है और कवि-निवेदन के अन्तर्गत महाकाव्य का काल्पनिक कथानक भी दे दिया है।

कवि-श्रेष्ठ पन्त ने उषा का प्राक्कथन प्रारम्भ करते हुये लिखा है - श्री गुलाब खण्डेलवाल हिन्दी के रस-सिद्ध कवि हैं। उनकी प्रतिभा तथा प्रसिद्धि के सौरभ से हिन्दी-संसार परिचित है। उषा उनका महाकाव्य है जो अपने अनति-दीर्घ कलेवर में मानव-जीवन की व्यापक अनुभूतियों के विश्व को सँजोये है।'[2] प्रबन्ध-परक काव्यों के क्षेत्र में जिस स्वच्छन्दता का शुभारम्भ श्री रामनरेश त्रिपाठी ने किया था उसको आगे बढ़ाने का श्रेयस्कर प्रयास श्री गुलाब खण्डेलवाल ने किया है। इसी सन्दर्भ में आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने लिखा है - 'श्री गुलाब के इस नये प्रयोग को स्वच्छन्दतावाद की हठधर्मिता मैं नहीं मानता। इसका हेतु यही है कि वर्णना और भावगत चर्वणा से वे कहीं पराङ्मुख नहीं हैं।'[3] गुलाब खण्डेलवाल का प्रस्तुत महाकाव्य 'उषा' हिन्दी साहित्य की अनूठी धरोहर है।

---

1. 'उषा' महाकाव्य (प्रथम संस्करण- 1965 ई0) : गुलाब खण्डेलवाल, पृ0. 152.
2. 'उषा' (महाकाव्य): प्राक्कथन : सुमित्रानन्दन पन्तः पृ0 क.
3. 'उषा' (महाकाव्य): आर्शीर्वचन : आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्रः प्र0 च.

'उषा' महाकाव्य की विषय-वस्तु :

उषा की कथा आधुनिक युग के जीवन पर आधारित है तथा इसके सभी पात्र काल्पनिक हैं। कथावस्तु इस प्रकार है --

उषा प्रयाग के सामान्य श्रेणी के परिवार की किशोरी है। वह अपने सहपाठी प्रभात से प्रेम करती है। लेकिन उषा का विवाह काशी में राजीव के साथ हो जाता है। उषा प्रारंभ में राजीव को पूरी तरह समर्पित नहीं हो पाती पर अंत में वह पूर्णतः पति को समर्पित हो जाती है। उषा एक पुत्र को जन्म देती है। वह पुत्र जब तीन-चार वर्षों का होता है तो एक दिन राजीव प्रभात को घर ले आता है और उषा से उसका परिचय कराता है। प्रभात जब-तब घर आने लगता है। एक दिन-राजीव की अनुपस्थिति में प्रभात उषा को गणतंत्र दिवस के समारोह में ले जाता है जहाँ स्वतंत्रता-संग्राम के नेता होने के कारण प्रभात का सम्मान होता है। दूर से दोनों को एक साथ देखकर राजीव के हृदय में उषा के प्रति संदेह उत्पन्न हो जाता है। उसके व्यंग्य करने पर प्रभात उसे उषा से अपने पूर्व प्रेम का वृत्तांत कह देता है जिसको सुनकर वह क्रुद्ध होकर घर से निकल जाता है। उसके चले जाने पर प्रभात के बारबार अनुरोध करने पर भी उषा उससे पुनः प्रेम-संबंध स्थापित करना अस्वीकार कर देती है। वह पति की याद में डूबी रहती है। कुछ दिनों बाद उसके पुत्र मुकुल की मृत्यु हो जाती है और उषा अकेली रह जाती है। इधर राजीव एक जहाज पर विदेश जाने को सवार होता है पर समुद्र में जहाज के डूब जाने से वह किसी प्रकार बचकर एक द्वीप पर किनारे लग जाता है जहाँ उसे किरण नामक एक मातृ-पितृ-हीन युवती अपने घर ले जाती है। कालांतर में उन दोनों में प्रेम-सम्बन्ध स्थापित हो जाता है और वे पति-पत्नी की तरह रहने लगते हैं[1] तथा उन्हें एक पुत्र प्राप्त होता है। एक पड़ोसी देश से युद्ध में असाधारण वीरता दिखाने के कारण राजीव उस देश का सेनानायक बन जाता है। मलय द्वीप में राजीव नामक किसी युवक का वर्णन प्रभात से सुनकर उषा राजीव को ढूँढ़ने जहाज से रवाना हो जाती है। प्रभात छिपकर उसका पीछा करता है। उस द्वीप में पहुँचकर जब उषा

---

1. सुधाकर-सा वह सुंदर रूप, सुधा-सी शीतल यह मुस्कान
   स्वर्ग-सी वसुधा पर तुम, देवि ! मृतक को करती जीवन-दान
   - उषा (महाकाव्य) : पृ0 62.

राजीव, किरण और उनके पुत्र को देखती है तो उनकी सुखी गृहस्थी में बाधा न डालकर समुद्र में डूबकर आत्महत्या कर लेती है।

प्रभात भी उसके साथ ही डूब जाता है। संध्या समय दोनों का शव किरण समुद्र के किनारे देखकर राजीव को यह बताती है कि समुद्र के किनारे एक भारतवासी पुरुष और स्त्री का शव दिखाई दिया था, पता नहीं वे कौन थे। राजीव यह सुनकर अपनी पत्नी की स्मृति में विकल हो जाता है और किरण उसे सांत्वना देती है। महाकाव्य यहीं समाप्त हो जाता है।

'उषा' (महाकाव्य) की कथा-वस्तु आद्योपान्त काल्पनिक है। जीवन की संगतियों और विसंगतियों को साथ रखते हुये नर-नारी-सम्बन्धों के मध्य प्रेम की क्या यथार्थ स्थिति है और प्रेम में किस सीमा तक बलिदान किया जाता है इस रहस्य को यदि जानना है तो 'उषा' महाकाव्य का अवलोकन यथेष्ट है।

प्रबन्ध-काव्य (तीन) 'अहल्या' (खण्डकाव्य) :

'अहल्या'[1] श्री गुलाब खण्डेलवाल का कथ्य और शिल्प की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट काव्य है। प्रस्तुत खण्डकाव्य के प्रकाशन पर आशीर्वचन देते हुये श्रीनारायण चतुर्वेदी ने लिखा है - 'कथा की दृष्टि से कवि ने अहल्या की पारम्परिक कथा में उसके शिला होने की बात को प्रतीक रूप में लिया है। शायद इस बुद्धिवाद के युग में वह बुद्धिवादियों के लिये इस कथा को ग्राह्य बनाने के लिये इस प्रकार की व्याख्या करने को विवश था।[2] श्री गंगाशरण सिंह ने 'अहल्या' खण्ड-काव्य की भूमिका लिखते हुये कहा है - 'अहल्या, गुलाब जी की एक बहुत ही सशक्त कृति है। जिस विषय पर पुराणों से लेकर आधुनिक काल तक अनेक महान कलाकारों ने लिखा है, उस पर कुछ नया या नये ढंग से लिखना आसान नहीं है। लेकिन इस दुष्कर कार्य का सम्पादन गुलाब जी ने बहुत सफलता के साथ किया है।[3] 'अहल्या' खण्डकाव्य का समर्पण श्री भगीरथ जी कानोडिया (कलकत्ता) को किया गया है। प्रस्तुत कृति कलेवर में लघु किन्तु प्रभाव में बहुआयामी है।

---

1. 'अहल्या' (प्रथम संस्करण-1978 ई0) : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक : अर्चना प्रकाशन, 55 जमनाला बजाज स्ट्रीट, कलकत्ता - 7.
2. 'अहल्या' : (खण्ड-काव्य) : आशीर्वचन : श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 3.
3. 'अहल्या' (खण्ड-काव्य) : भूमिका : श्री गंगाशरण सिंह : पृ0 5.

'अहल्या' (खण्ड-काव्य) की विषय-वस्तु :

'अहल्या' खण्डकाव्य की रचना 1947 ई0 से 1956 ई0 के मध्य हुई है।[1] इस खण्ड-काव्य पर कवि को हनुमान मन्दिर ट्रस्ट (कलकत्ता) का 5000 रुपये का अखिल भारतीय पुरस्कार भी मिला है। 'अहल्या' खण्डकाव्य का कलेवर मात्र 60 पृष्ठों में है। विषय-वस्तु को दो भागों में विभाजित करके दो सर्गों में एक ही प्रकार के छन्द में प्रस्तुति दी गयी है। विषय-वस्तु निम्नवत् है

अहल्या के प्रथम और द्वितीय खंड की कथा :

अहल्या को उसके पिता ब्रह्मा ने किशोरावस्था में महर्षि गौतम के पास पत्नी बनकर रहने के लिए भेज दिया था। प्रारंभ में मुनिवर ने अपनी तपस्या और वृद्धावस्था के कारण उसे स्वीकार करने में असमर्थता प्रकट की परंतु अहल्या के तर्कों से और उसकी सुंदरता से वे आकर्षित हो गये और आकाशवाणी द्वारा भी उसे स्वीकार कर लेने का अनुरोध सुनकर उन्होंने उसे पत्नी के रूप में वरण कर लिया।

एक दिन आकाशमार्ग से जाते हुए इंद्र ने अहल्या को देखा और वे उसके रूप पर मुग्ध हो गये। उन्होंने कामदेव की सहायता से रात में प्रभात का भ्रम उत्पन्न कर मुनि को अहल्या के पास से हटवा दिया और स्वयं मुनि का वेष धारण कर उसके साथ रमण किया। यद्यपि अहल्या इस छल को जान गयी थी परंतु वह भी पहले इंद्र को देखकर उनकी तरफ थोड़ी-थोड़ी आकर्षित हो चुकी थी और अपने मन की सहज दुर्बलता से उसने आत्म-समपर्ण कर दिया। मुनि ने लौटकर यह छल जान लिया और उन्होंने अहल्या को पत्थर की तरह जड़ता का जीवन बिताने का शाप दे दिया तथा उसे छोड़कर चले गये।[2] इंद्र भी उन के शाप से नहीं बच सके।

---

1. महाकवि गुलाब और उनकी कृतियाँ : पृ0 ख.
2. **'जीवन के जड़ सुख-भोग भोग जो इष्ट तुझे**
   पत्थर-सी आत्मा-रहित, न जिसकी प्यास बुझे
   दे मुक्ति, चला मैं, अब मत देना दोष मुझे
   स्वर हुये अगोचर मुक्ताकण पर बिना रुझे
   -अहल्या-खण्ड-काव्य : पृ0 29.

अहल्या के दूसरे खंड की कथा : कुशिक-नन्दन विश्वामित्र यज्ञ-रक्षा हेतु राम और लक्ष्मण को नृपति दशरथ से माँगते हैं। राम-लक्ष्मण वन में जाकर यज्ञ-रक्षा के साथ-साथ धनुर्विद्या मुनिवर से प्राप्त करते हैं। मुनि का यज्ञ विधि-विधान से सम्पन्न हुआ और अनेक दानव मारे गये। तत्पश्चात् राम की प्रशंसा सुन, एक दिन अहल्या उन्हें देखने को आयी। राम के दर्शन से उसके भाव सात्विक हो गये और वह राम के चरणों पर पड़ गयी।[1] राम ने उसे दोषमुक्त करके उसका उद्धार कर दिया तथा पुनः गौतम ने उसे स्वीकार कर लिया।

अहल्या के जीवन के जो तन्तु बिखर गये थे, कवि ने उन्हें एकत्र कर सुन्दर कथा-रूप में पिरोकर खण्ड-काव्य के रूप में प्रस्तुति दी है जो कवि की कल्पना एवं सूझ-बूझ से विश्वसनीय बन पड़ा है। कथानक भले ही पौराणिक हो लेकिन कवि ने उसे आधुनिकता का बाना पहना दिया है।

प्रबन्ध-काव्य (चार) 'आलोक-वृत्त' (खण्ड-काव्य) :

लेखनी के धनी कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 'आलोकवृत्त'[2] खण्डकाव्य की रचना ऐतिहासिक विषय-वस्तु लेकर की है। इस खण्डकाव्य के सन्दर्भ में कवि का कथन है - 'आलोक-वृत्त' की रचना सन् 1969 ई0 और 1971 ई0 के बीच हुई थी। अंतिम अंश 1975 लिखा गया था। गांधी जी के जीवन को जानना और उनके संदेशों से परिचित होना प्रत्येक पीढ़ी के लिए आवश्यक होगा, क्योंकि उनमें जीवन के शाश्वत (मूल्य) सत्य निहित हैं। वह व्यक्ति-जीवन की सर्वाधिक पूर्ण आचार-संहिता है।'[3] वास्तव में महात्मा गांधी का कृतित्व-काल,

---

1. जो तिल-तिल जलता गया, किन्तु बुझ सका नहीं
   जो पल-पल लड़ता गया, कष्ट से झुका नहीं
   जो रुका न पथ पर, भय विघ्नों से थका नहीं
   जो चूक गया फिर भी निज को खो चुका नहीं
   जन वही मुझे है प्यारा
   -'अहल्या' खण्ड-काव्य : पृ0 52.
2. 'आलोक-वृत्त' (प्रथम सं0 - 1975) : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 78.
3. 'आलोक-वृत्त' (खण्डकाव्य) : अपनी ओर से : गुलाब खण्डेलवाल।

बीसवीं सदी, उनसे सर्वथा आलोकित है।

'आलोक-वृत्त' खण्ड-काव्य का समर्पण गांधी-युग के गौरव-स्तम्भ, पद्मभूषण श्रद्धेय श्री सीताराम जी सेकसरिया को किया गया है। कवि ने जहाँ एक ओर 'अपनी ओर से' लिखकर आभार व्यक्त किया है वहीं दूसरी ओर प्रधानमंत्री 'अर्चना', श्री नथमल केडिया ने भी दो शब्द लिखे हैं तथा स्वनामधन्या सुश्री महादेवी वर्मा ने कवि के लिए आशीर्वचन लिखते हुये टिप्पणी की हैं ' कृति कवि गुलाब खण्डेलवाल ने 'आलोक-वृत्त' में उसी साकार आलोक की कथा को छन्दायित किया है। यह गांधी युग का अभिलेख भी है और युगपुरुष गांधी का स्मृत्यर्चन भी। कवि गुलाब जी छायावाद युग के कृती हैं। अतः उनकी रचना में तथ्य, भाव-समुद्र की तंरग के समान आते हैं। कहीं-कहीं कामायनी की पंक्तियों का स्मरण हो आना भी स्वाभाविक है।'[1] निस्सन्देह, गुलाब जी पर छायावाद का प्रभाव है। लेकिन उन्होंने इतिहास और पुराण-साहित्य से बहुत कुछ ग्रहण किया है तथा उसे साहित्य की भिन्न-भिन्न विधाओं में प्रस्तुति देकर स्वान्तःसुखाय और लोकहिताय महान कार्य किया है।

'आलोक-वृत्त' (खण्ड-काव्य) की विषय-वस्तु :

'आलोक-वृत्त' खण्ड-काव्य में 13 सर्ग हैं। यदि इन्हें 13 क्रमबद्ध कविताएँ कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं मानी जायगी। गांधी जी के अत्यन्त व्यापक जीवन को मात्र 13 सर्गों में विभाजित किया गया है। यहाँ 'आलोक-वृत्त' की विषय-वस्तु दी जा रही है —

महात्मा गांधी के जन्म से पूर्व भारत के श्वेत-श्याम तन्तुओं से बुने इतिहास पट को काव्य में प्रस्तुति देते हुये उनके जीवन के शुभारम्भ, पिता की मृत्यु, कस्तूरबा के साथ विवाह, प्रारम्भिक शिक्षा, उच्च शिक्षा के लिये विलायत जाते समय माता की चिन्ता, शिक्षा प्राप्त कर स्वदेश लौटना, दक्षिण अफ्रीका-गमन, अफ्रीका में आन्दोलन की स्थिति, भारत प्रत्यागमन, तिलक से मिलन, राजनीति में प्रवेश, प्रथम विश्व-युद्ध, असहयोग-आन्दोलन, 'भारत छोड़ो' आन्दोलन, द्वितीय विश्व-युद्ध, स्वतन्त्रता-प्राप्ति और गांधी जी की हार्दिक इच्छा जैसे विषयों को लेकर कवि ने यह रचना की है।

---

1. 'आलोक-वृत्त' (खण्ड काव्य) : आशीर्वचन : महादेवी।

निस्सन्देह कथा-फलक अत्यन्त विशाल है जबकि उसके अनुरूप अभिव्यक्ति के लिये काव्य का कलेवर लघु है। फिर भी कवि ने मानवता के सार्वभौम चिंतन और आदर्शों को काव्य की वाणी देने की अपनी मूल भावना को रूपायित कर दिया है। गांधी जी चंपारन में अधिकारी के समक्ष अपना परिचय देते हुये बयान देते हैं -

लिखने बैठा अधिकारी जब उनका बयान
बोले गांधी मैं भारत का बुनकर, किसान
हूँ कर्मचन्द-सुत, मोहन दास, जाति गांधी
पर नहीं जाति-कुल ने मेरी सीमा बाँधी
मैं नंगी-भूखी भारतीय जनता का स्वर
अत्याचारों का शान्ति-अहिंसामय उत्तर
मैं मंत्र अभय का, न्याय-भावना का प्रतीक
बस यही चाहता, सभी सत्य की चलें लीक
शासक या शासित, गोरे हों या काले हों
सब मर्यादा का पालन करनेवाले हों[1]

प्रबन्ध-काव्य (पाँच) 'गांधी-भारती' :

सुप्रसिद्ध कवि गुलाब खण्डेलवाल द्वारा रचित 'गांधी-भारती'[2] आलोक-वृत्त से पूर्व की रचना है। यह पहले अलग से भी प्रकाशित हो चुकी है। यहाँ इसका पुस्तकाकार प्रकाशन आलोक-वृत्त के परिशिष्ट के रूप में हुआ है। कवि ने लिखा है - 'आलोक-वृत्त' में गांधी जी के जीवन का 1921 ई0 तक का चिंतन आ जाता है। उनके विचारों का तथा सिद्धातों का ध्रुवीकरण उस समय तक प्रायः पूर्ण हो चुका था। 'गांधी-भारती' में भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में गांधी जी के व्यक्तित्व तथा गांधीवाद का काव्याकलन किया गया है। इस प्रकार 'गांधी-भारती' को 'आलोक-वृत्त' महाकाव्य का शान्तिपर्व समझना चाहिए।'[3]

---

1. 'आलोक-वृत्त' : पृ0 44.
2. 'गांधी-भारती' : प्रथम संस्करण-1975 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 27. प्रकाशक : अर्चना प्रकाशन - 105, मुकुंद्रीगंज, प्रतापगढ़।
3. 'गांधी-भारती' गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 81.

इस कथन से स्पष्ट है कि गुलाब खण्डेलवाल जी गांधी जी पर महाकाव्य लिखने की योजना बनाये हुये थे लेकिन 'आलोक-वृत्त' और 'गांधी-भारती' के रूप में उसे लिखकर उन्हें संतोष करना पड़ा है।

जैसे ही गांधी जी की निर्मम हत्या हुई वैसे ही समूचा भारत यदि रो उठा तो समूचा विश्व भी कराह उठा। लेखकों, कवियों, शायरों, पत्रकारों, कलाकारों आदि ने गांधी जी को लक्ष्य करके बहुत कुछ लिख डाला। श्री गुलाब खण्डेलवाल भी महात्मा गांधी से बहुत अधिक प्रभावित थे। अतः आपने भी मात्र एक-दो दिनों की अवधि में 46 सानेट लिख दिये। इनके सन्दर्भ में कवि लिखता है - 'ये सॉनेट महात्मा गांधी के देहावसान के तुरन्त बाद लिखे गये थे। सॉनेट अंग्रेजी का विशिष्ट काव्य-रूप है जिसमें कुल 14 पंक्तियाँ होती हैं। एक सॉनेट में एक भाव या विचार की ही सांगोपाँग अभिव्यक्ति होती है। प्रारम्भ की 8 पंक्तियों में वह भाव समुद्र के ज्वार की तरह आगे बढ़ता है और अन्त की 6 पंक्तियों में समाहित हो जाता है। अंत की दो पंक्तियों में, जो समतुकांत होती हैं, पूरे सॉनेट का निचोड़ आ जाता है।

'गांधी-भारती' की विषयवस्तु :

महात्मा गांधी का जीवन भारतीय आदर्शों और आकांक्षाओं का प्रतीक होने के कारण अत्यन्त व्यापक और प्रभावशाली था। उन्होंने भारत के पूर्व गौरव और शाश्वत जीवन-मूल्यों को सात्विकता के साथ उतारने के लिए जीवन भर प्रयत्न किया था। अन्याय और अत्याचार के समक्ष उन्होंने कभी सिर नहीं झुकाया। यही कारण है कि वे मरकर भी वास्तव में जी उठे।[2] गांधी जी का प्रभाव लोक-व्यापी ही नहीं विश्वव्यापी था। भारतीय मनीषा ने उन्हें अवतार की संज्ञा से अभिहित किया।[3] वास्तव में गांधी एक ऐसी आँधी का नाम है जिसने

---

1. वही : पृ0 81.
2. **मरकर भी जी उठा मसीहा, पहन रक्त सुमनों का साज**
   भूमि-स्वर्ग का परिणय होता, देखो इन लपटों में आज
   - गांधी-भारती : पृ0 84.
3. **जब-जब धर्म मार्ग रुँध जाता, बढ़ते दुर्दम अत्याचार**
   तब-तब साधु-जनों के रक्षण-हित मैं लेता हूँ अवतार
   - गांधी- भारती : पृ0 99.

युग-युग से बाँधी गयी परतंत्रता की बेड़ियों को काट दिया था।[1] भारत को आलोक-पथ दिखानेवाले गांधी को इतिहास कभी नहीं भुला पायेगा।

'गांधी-भारती' की विषय-वस्तु गांधी के जीवन का प्रभावपक्ष है जिसे कवि ने वाणी प्रदान की है।

प्रबन्ध-काव्य (तेरह) 'दानवीर बलि' (बलि-निर्वास) (काव्य-नाटक) :

बहुआयामी प्रतिभा के धनी गुलाब खण्डेलवाल ने 'दानवीर बलि'[2] काव्यनाटक की रचना 1942-43 में की थी। मैथिलीशरण गुप्त ने इस काव्य-नाटक को पढ़कर कवि को लिखा - 'आप जन्मजात कवि हैं। बलि-निर्वास की प्रथम पंक्ति ही 'यदि स्वर्ग कहीं है त्रिभुवन में, तो वह मेरे ही उर में हैं' आपकी अद्भुत काव्य-प्रतिभा का परिचय देती है तथा 'पद-विन्यास मात्रेण' की उक्ति को चरितार्थ करती है।'[3] 'बलि-निर्वास' ही आगे चलकर 'दानवीर बलि' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। आमुख में गुलाब जी भी लिखते हैं - 'यह हिन्दी का प्रथम दुःखान्त नाटक है। इसमें दानव-सम्राट् बलि का चरित्र त्रासदी के नायक के रूप में चित्रित किया गया है।'[4] प्रस्तुत 'दानवीर बलि' का विस्तार मात्र 64 पृष्ठों में सीमित है। समर्पण श्रद्धेय रामकुमार जी भुवालका को किया गया है।

'दानवीर बलि' (काव्य-नाटक) की विषय-वस्तु :

श्री गुलाब खण्डेलवाल के प्रस्तुत नाटक में पाँच अंक है और प्रत्येक अंक में तीन दृश्य हैं। देव, दानव पात्रों की संख्या सोलह तथा अप्सराओं की संख्या मात्र पाँच है। चर आदि अनेक और भी पात्र हैं। यह नाटक 'बलि-निर्वास' के

---

1. **टूट गयी तड़-तड़ करके बेड़ियाँ युगों की बाँधी थीं**
   महाक्रांति बन कर आयी जब वह गांधी की आँधी थी
   गांधी-भारती : पृ0 88.
2. 'दानवीर बलि' : प्रकाशन वर्ष नहीं दिया गया है : गुलाब खण्डेलवाल।
3. महाकवि गुलाब की कालजयी कृतियों का परिचय : कमल प्रकाशन, प्रतापगढ़ पृ0 8.
4. 'दानवीर बलि' : आमुख : गुलाब खण्डेलवाल।

नाम से 1945 ई0 में प्रकाशित हो चुका है।

सुरराज इन्द्र अपनी सभा में सगर्व विराजमान हैं। देवताओं सहित देव-गुरु बृहस्पति भी विराज रहे हैं। उर्वशी का नृत्य हो रहा है। सहसा दूत बलि के आक्रमण की सूचना देता है। बृहस्पति इंद्र को सावधान करते हैं। अप्सरायें नंदनवन में मोद-मग्न हैं। दैत्यगुरु शुक्राचार्य, बलि (प्रह्लाद का वंशज) को तपोबल और भुजबल से स्वर्ग लोक जीतने को प्रेरित करते हैं।

विजयोपरान्त कालनेमि, बाणासुर, प्रहलाद, मय को स्वर्ग राज्य के पृथक्-पृथक् विभाग सौंपे जाते हैं। देवगण ब्रह्मा के पास जाते हैं और उनकी सम्मति से विष्णु की शरण में जाते हैं। भगवान विष्णु वामन के छद्म वेश में आकर बलि से तीन पग भूमि का दान माँगते हैं। वामन भगवान दो ही पगों से आकाश और भूमि नाप लेते हैं और तीसरा पग बलि के सिर पर रख कर वे उसे पाताल पहुँचा देते हैं। इन्द्र के व्यंग्य करने पर वामन-वेशधारी विष्णु अपने असली रूप में आकर उसे फटकारते हैं और बलि की प्रशंसा करते हुए उसे स्वर्ग के स्थान पर पाताल का राज्य देते हैं।

'दानवीर बलि' का कथानक पौराणिक एवं बहुचर्चित होते हुये भी कवि ने अपनी अनूठी सूझ-बूझ से उसमें ऐसी रोचकता उत्पन्न कर दी है कि कथावस्तु मौलिक-सी लगने लगती है। निरन्तर त्रासित रहने पर भी बलि आत्म-विश्वास और धैर्य नही खोता है।

---

1. बस करो देवराज!
   शोभा नहीं देता यह मिथ्या अभिमान तुम्हें
   दान लिये राज्य पर, विजय मिली जो आज
   सत्य कह दूँ तो है पराजय सुरत्व की।
   स्वर्ग के भले ही कहलाओ सम्राट् तुम,
   किन्तु बसा स्वर्ग जो मनुष्य के हृदय में,
   बलि का वहाँ पर प्रेम-राज्य अविजेय है।
   धर्म पर हजारों इन्द्रलोक न्यौछावर हैं
   हार वीरता की है, वरेण्य कोटि जीतों से।
   -दानवीर बलि (काव्य-नाटक) : पृ0 60.

(ग) ग़ज़ल-संग्रहों का परिचय-रचनाकाल, विषय-वस्तु एवं प्रकाशन :

श्री गुलाब खण्डेलवाल साहित्य जगत् में विशिष्ठ मौलिक प्रतिभा लेकर अवतरित हुए हैं। उन्होंने काव्य की अनेक विधाओं में प्रवेश कर अपनी लेखनी को धन्य किया है। जैसे हिन्दी में सर्वप्रथम सॉनेट (चतुर्दशपदी) लिखने का श्रेय उन्हें दिया जाता है ठीक उसी प्रकार हिन्दी ग़ज़ल-लेखन के क्षेत्र में भी प्रारंभकर्ता के रूप में गुलाब जी का नाम लिया जाता है। श्री गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों को देखकर यह कहा जा सकता है कि वे हिन्दी की भूमि पर उस उगते हुये दीर्घजीवी पौधे के समान हैं जिसे ऐसी उपजाऊ भूमि पर उगाया गया है जहाँ हवा और प्रकाश की कोई कमी नहीं है। उर्दू के क्षितिज से प्रकाश-रेखा की भांति गुलाब की गुलाबी छटा बिखेरती ग़ज़लें उतर रही हैं। गुलाब जी की ग़ज़लों के चार संग्रह प्रकाशित हुये हैं। यहाँ सभी संग्रहों का परिचय दिया जा रहा है।

ग़ज़ल-संग्रह (प्रथम) 'सौ गुलाब खिले' :

काव्य-जगत् के अनेक प्रदेशों में भ्रमण करते हुये कविवर गुलाब ने ग़ज़ल के क्षेत्र में प्रवेश किया है और 1970 ई0 से 1973 ई0 के मध्य श्री गुलाब की लिखी 109 ग़ज़लों का संग्रह 'सौ गुलाब खिले' शीर्षक से प्रकाशित किया गया।

इस संग्रह को समर्पित किया गया है श्री विश्वनाथ सिंह को और विस्तृत अनुवचन लिखा श्री त्रिलोचन शास्त्री ने जबकि 'ये ग़ज़लें' शीर्षक से गुलाब जी ने स्वंय एक छोटा-सा वक्तव्य दिया है और दो शब्द लिखे हैं श्री नथमल केडिया (मंत्री, अर्चना-प्रकाशन) ने। श्री केडिया ने स्वागत करते हुये लिखा है - हमें ख़ुशी है कि कविवर गुलाब की इन ग़ज़लों के रूप में हिन्दी-काव्य को नयी चेतना, नया सन्दर्भ एवं नया मोड़ मिला है। हमें विश्वास है, पुराने प्रतीकों से अलग होकर हिन्दी की भाव-भूमि पर ग़ज़ल को स्थापित करने का यह प्रयास सफल होगा'[1] लगभग यही बात श्री गुलाब ने भी कही है - 'मेरा विश्वास है कि इन हिन्दी-ग़ज़लों के द्वारा साहित्य और संगीत का टूटा हुआ सूत्र तो जुड़ेगा ही, हिन्दी-काव्य को एक नयी दिशा और एक नया आयाम भी मिलेगा। इस

---

1. 'सौ गुलाब खिले' : दो शब्द : नथमल केडिया : पृ0 7.

पुस्तक के द्वारा हिन्दी ग़ज़ल के परम्परा-स्थापन का विनम्र प्रयास किया गया है।[1]

'सौ गुलाब खिले' की विषय-वस्तु :

हिन्दी ग़ज़ल के पुरोधा कवि गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों का विषय प्रेम है। प्रेम का संसार आकाश के समान विशाल और विस्तृत तथा समुद्र की भाँति गम्भीर और मोतियों से भरा हुआ है, तभी तो लोग युग-युगान्तरों से प्रेमिल जगत को अपनी-अपनी दृष्टि से देखते चले आ रहे हैं यद्यपि उसको भली भाँति देखने में असमर्थ ही रहे हैं। गुलाब खण्डेलवाल ने प्रेम के केन्द्र-बिन्दु प्रिय के रूप को, प्रिय की निष्ठुरता को, प्रिय के बाँकपन को, प्रिय की सम्मोहक छवि को, प्रिय के द्वारा की गयी उपेक्षा को और प्रिय के बहुरूपिये रूप को बड़ी गम्भीरता से देखा है और देखने के अनुभव को बड़ी शालीनता, गम्भीरता और मार्मिकता से ग़ज़लों में उतार दिया है -

बहुत ही सीधे हैं, सादे हैं आप, और आगे
कहेंगे हम तो नही, दूसरा कहे तो कहे
हमें तो ख़ूब है मालूम अपनी कमजोरी
भले ही हमको कोई देवता कहे तो कहे।[2]

कुछ ग़ज़लों की विषय-वस्तु व्यक्तिगत अनुभवों से जीवन और जगत् की सीढ़ियाँ चढ़ती हुयी दर्शन के मन्दिर में भी जा विराजी है, जैसे -

(1) **इस तरफ का किनारा तो है,**
उस तरफ का किनारा नहीं।[3]

(2) **हमें वो आँख दो, परदे के पार देख सकें**
जो सामने से ये परदा उठा नहीं सकते।[4]

कहीं-कहीं गुलाब खण्डेलवाल ने कृत्रिम जीवन, संसार की आदि विसंगतियों, बुद्धि की अहंता तथा उन ग़ज़लकारों पर भी व्यंग्य किये हैं जो अपनी तुलना मीर और ग़ालिब से करने में अपने पर फ़क्र करते हैं -

---

1. 'सौ गुलाब खिले' : ये ग़ज़लें : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 4.
2. 'सौ गुलाब खिले' : पृ0 60. 3. वही : पृ0 39.
4. वही : पृ0 40.

(1) कहाँ मीरग़ालिब कि ग़ज़लें, कहाँ मैं!
बनाने से थोड़ी हवा बन गई है[1]

(2) ग़ज़ल न पूरी हुयी थी अभी कि उसने कहा
बहुत है, ख़ूब है, ग़ालिब भी मात, चुप भी रहो[2]

कहने का आशय यह है कि 'सौ गुलाब खिले' की ग़ज़लों की विषय-वस्तु जीवन के विविध प्रसंगों से सन्दर्भित है।

ग़ज़ल-संग्रह (द्वितीय) 'पँखुरियाँ गुलाब की' :

श्री गुलाब खण्डेलवाल की 360 ग़ज़लों में सबसे अधिक एक सौ ग्यारह ग़ज़लें प्रस्तुत ग़ज़ल-संग्रह 'पँखुरियाँ गुलाब की'[3] में संग्रहीत हैं। प्रस्तुत संग्रह का समर्पण श्री नथमल केडिया को किया गया है। दो शब्द स्वयं श्री गुलाब खण्डेलवाल ने लिखे हैं - ये कुछ ग़ज़लें दो ग़ज़लों को छोड़कर सन् 1974 ई0 और सन् 1977 ई0 के बीच लिखी गयी हैं। 'सौ गुलाब खिले' के बाद पुनः मैंने इसी विधा में लिखने की जरूरत क्यों समझी, यह इनको पढ़कर ही समझा जा सकेगा। मैं तो केवल इतना ही कह सकता हूँ कि इनमें मात्र संख्या का ही नहीं, गुणों का भी विस्तार है। ये ग़ज़लें बहुआयामी हैं। इनमें मेरी आत्माभिव्यक्ति ही नहीं, आत्म-समर्पण भी है।'[4]

'पँखुरियाँ गुलाब की' की विषय-वस्तु :

प्रस्तुत ग़ज़ल संग्रह में ग़ज़लों का तेवर अन्य ग़ज़लों से कुछ भिन्न है। कवि ने पूर्ववर्ती सूफी और ज्ञानमार्गी कवियों की भाँति लौकिक प्रेमानुभूति को अलौकिक प्रेम में परिवर्तित कर भावांजलि प्रस्तुत की है। स्पष्ट है कि यह मार्ग

---

1. सौ गुलाब खिले : पृ0 40.
2. 'सौ गुलाब खिले' : पृ0 34
3. 'पँखुरियाँ गुलाब की' : : प्रकाशक, अर्चना कलकत्ता
4. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : दो शब्द: गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 259.

अथवा अभिव्यक्ति का ढंग नया भले ही न सही फिर भी रुचिकर और प्रभावशाली अवश्य ही है। देखिए कवि जाने से पूर्व क्या कहता है –

(1) धूप अँधेरा है सुनसान राहें हैं ये,
कोई आहट कहीं से भी आती नहीं,
खाये ठोकर न हम-सा कोई फिर यहाँ
एक दीपक जलाकर तो धर जाँयें हम।
('गुलाब-ग्रन्थावली : तृतीय खण्ड : पृ0 261

(2) वही लौ इधर भी, वही लौ उधर भी,
दिये से दिये को जलाओं तो क्या है!
नजर आइना, रूप भी आइना है,
मगर बीच में यह बताओं तो क्या है !

इतना ही नहीं, प्रेमी तो प्रेम-मन्दिर का पुजारी हो चुका है। प्रिया और देवमन्दिर की प्रतिमा में उसके लिए अब कोई अन्तर नहीं रह गया है। वास्तव में यह प्रेम की पराकाष्ठा है। कुछ पंक्तियाँ और —

रात काँटों पे करवट बदलते कटी,
हमको दुनिया ने पल भर न खिलने दिया
आयेंगे कल नये रंग में फिर गुलाब,
आज चरणों में उनके बिखर जायँ हम।

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अपनी इन ग़ज़लों में प्रीति, प्रतीक्षा, लौकिक अनुभव, प्रेम की सर्वोपरिता, रूप-सौन्दर्य की प्रशंसा विस्तार से किन्तु कथन में संक्षिप्तता से की है। प्रिय की उपेक्षा का वर्णन है किन्तु निरन्तर उसकी अपेक्षा से भी कुछ ग़ज़लें लबरेज हैं। बहुत सादगी से बात कहना ही गुलाब जी को रुचिकर लगता है। विषय-वस्तु सहजता में ही बिखरती चली गयी है। जैसे —

जहाँ भी होती है चर्चा तेरी रंगीनी की
हमारा नाम भी लेते हैं सादगी के लिए

बीच की दूरियों, मजबूरियों, असफलता, प्रेमिल उमंगों और प्रेम की सहजताओं के साथ प्रिय की निष्ठुरताओं को कवि अपनी ग़ज़लों में बड़ी शालीनता से पिरोता चला है।

ग़ज़ल-संग्रह (तृतीय) 'कुछ और गुलाब'

ग़ज़ल-विधा के निष्णात पण्डित गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों का 'कुछ और गुलाब'[1] शीर्षक से 86 गजलों का संग्रह है। प्रस्तुत संग्रह के सन्दर्भ में श्री गुलाब ने लिखा है - 'कुछ और गुलाब' मेरी ग़ज़लों का तीसरा और नवीनतम संग्रह है। मैने अनुभव किया है कि ग़ज़ल की विधा जीवन की सभी प्रकार की अनुभूतियों को व्यक्त करने में सक्षम है और इसीलिए 1970 ई0 से लेकर अब तक की बदलती हुई अनुभूतियों को मैं इसमें वाणी दे सका हूँ। हाँ, ग़ज़ल के प्रतीकों की अवश्य अपनी मर्यादा है और मेरा प्रयास रहा है कि वे नवीन हों, मौलिक हों, कलात्मक हों, तथा ग़ज़ल की परम्परा के अनुरूप हों। यों, अपनी ग़ज़लों का प्रधान प्रतीक तो मैं स्वयं ही हूँ।'[2] प्रस्तावना लिखते समय न्यायमूर्ति महेश नारायण शुक्ल (प्रयाग) ने नाम की सार्थकता को स्पष्ट किया - 'उर्दू कवियों की भाँति गुलाब जी ने अपनी कविता में अपने नाम का भरपूर फायदा उठाया है।'[3] श्री गंगाशरण सिंह ने आशीर्वचन लिखते हुये कहा - 'गुलाब जी ने ग़ज़ल की आत्मा को पहचाना है और न केवल उर्दू ग़ज़लों का-सा शब्द-विन्यास, बाँकपन और तेवर उनकी ग़ज़लों में मिलता है, ग़ज़ल के अनुरूप वर्ण्य विषय देने में तथा सम्प्रेषणीयता और भाव-प्रवाह उत्पन्न करने में भी वे खरे उतरे हैं।'[4] प्रस्तुत संग्रह का समर्पण सोने-चाँदी की दुनिया में रहकर भी कविता की अनन्य भक्त और गुलाब की रचनाओं की सहृदय पाठिका और प्रशंसिका श्रीमती उषा केजरीवाल को किया गया है।

'कुछ और गुलाब' की विषय-वस्तु :

सौ पृष्ठों की डलिया में सजे 'कुछ और गुलाब, की विषय-वस्तु की प्रस्तुति प्रेम के आकाश से कुछ सितारे चुन कर की गयी है। प्रिय के मादक रूप और स्नेहिल दृष्टि की गुलाब जी को प्रति-पग अपेक्षा है। प्रिय की प्रतीक्षा

---

1. 'कुछ और गुलाब' : प्रथम सं0 1979 : गुलाब खण्डेलवाल।
2. 'कुछ और गुलाब': प्रस्तावना : न्यायमूर्ति महेश नारायण शुक्लः पृ0 स.
3. 'कुछ और गुलाब' : कवि की ओर से : गुलाब खण्डेलवाल ' पृ0 4.
4. 'कुछ और गुलाब' : आशीर्वचन : गंगाशरण सिंह : पृ0 5-6.

में जीवन की रात व्यतीत होने को है, लेकिन प्रिय की निष्ठुरता तो देखिए -

ख़ात्म रंगों से भरी रात हुयी जाती है,
ज़िन्दगी भोर की बारात हुयी जाती है
उनको छुट्टी नहीं मेंहदी के लगाने से उधर
और इधर अपनी मुलाक़ात हुई जाती है
('गुलाब ग्रंथावली', खंड 3, पृ0. 31)

प्रेम में समर्पण का सबसे अधिक महत्त्व होता है। यह समर्पण तभी होता है जब दोनों में परस्पर विश्वास जनम चुका हो। प्रेम या प्यार शब्द कहने में कितना भी सहज और सरल लगता हो उसकी वास्तविकता तभी प्रकट होती है जब वह किसीके जीवन में उतरता है। प्यार की कीमत भी तभी समझ में आती है। कवि ने इन भावों को अनेक ग़ज़लों में उतारा है, जैसे --

प्यार का रंग हजारों से अलग होता है
यह इशारा कभी यारों से अलग होता है

गुलाब जी ने रीतिकालीन स्वच्छन्द कवियों की भाँति श्रृंगार और प्रेम की बात कहते-कहते कविताओं में दर्शन का पुट भी लगा दिया है। कविता में दर्शन के आने से कविता जहाँ एक ओर गम्भीर हो जाती है वहीं दूसरी ओर रचना में भावनाओं का सामान्यीकरण भी हो जाता है। इस कोटि की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

हम से यह बीच का परदा भी उठाया न गया
उनको बढ़कर कभी सीने से लगाया न गया
दर्द वह दिल को मिला, उम्र की हद तक हमसे
चुप भी रहते न बना, कहके बताया न गया
(पँखुरियाँ गुलाब की पृ0 - 14)

जिसमें हम-तुम भी छूटते पीछे
प्यार में ऐसा एक मुकाम भी है
(कुछ और गुलाब : पृ0 99)

आज दुलहन को बुलावा है घर पे साजन के
माँग परियों ने सँवारी है, इसे कुछ न कहो
(कुछ और गुलाब : पृ0 92)

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने साधारण-से लगनेवाले भावों को ग़ज़लों में ढाल कर उन्हें रंग से सरोबर कर दिया है जिसका पाठकों पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

ग़ज़ल-संग्रह - (चतुर्थ) 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब :

श्री गुलाब खण्डेलवाल के नवीनतम ग़ज़ल संग्रह 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब'[1] में संग्रहीत चौवन ग़ज़लों के साथ कुल ग़ज़लों की संख्या तीन सौ छप्पन हो जाती है। प्रस्तुत संग्रह की गजलों की रचना 1981 ई0 से 1983 ई0 के बीच हुयी है। इस संग्रह की भूमिका स्वयं कवि ने लिखी है तथा इसका समर्पण, हृदय से कवि, कविताओं के सहृदय श्रोता, प्रेम और सौजन्य की मूर्ति परम आत्मीय बन्धु श्री राय वागेश्वरी प्रसाद को किया गया है। भूमिका में कवि ने लिखा है - 'ग़ज़ल एक छन्द मात्र नहीं है। यह अभिव्यक्ति की एक अत्यन्त नाजुक विधा है जिसमें सपाटबयानी नहीं चलती। ग़ज़ल के पुराने प्रतीकों में से कुछ को स्वीकार करते हुये मैंने अपनी ओर से कुछ नये प्रतीक भी जोड़े हैं जिनमें गुलाब का प्रतीक भी एक है। नये और पुराने के बीच संतुलन कायम रखते हुये मैंने एक नयी राह, अपनी एक अलग पहचान बनाने की कोशिश की है।'

'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' की विषय-वस्तु :

श्री गुलाब खण्डेलवाल के पूर्व प्रकाशित ग़ज़ल संग्रहों से 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' की ग़ज़लों की विषय-वस्तु मिलती-जुलती है। प्रस्तुत संग्रह के फोलियों पर आचार्य विश्वनाथ सिंह ने लिखा है -'कला में नित्य नवता काव्य की उस रमणीयता से आती है जिसकी अनन्त भंगिमाओं का उद्घाटन एक बारगी न होकर क्रमशः ही होता है, शिल्प की उस प्रयोग-धर्मिता से आती है जिसकी विच्छिति का झलमल काव्य का परिच्छद नहीं, उसका शरीर बनकर सार्थक होता है। कथ्य एवं शिल्प का यह परस्पर गुलाब की ग़ज़लों की विशेषता : इन ग़ज़लों की सामान्यता है। स्पष्ट है कि इन ग़ज़लों की विषय-वस्तु

---

1. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब : गुलाब खण्डेलवाल : पृ00 7-8.

भी अन्य ग़ज़ल-संग्रहों की भाँति ही हैं लेकिन कथ्य और शिल्प दोनों में ही प्रतिपग नवीनता है।

इस संग्रह में भी पूर्व ग़ज़ल-संग्रहों की भाँति ही प्रेम, मिलन-वियोग, अनुनय, मान-मनौती, पीड़ा, प्रतीक्षा, आदि को बड़े करीने से सजाकर प्रस्तुति दी गयी है। यथा--

(1) यों तो मंजिल पे पहुँचने की खुशी है, ऐ दोस्त !
ख़ात्म हो जाय सफर, हमने ये कब चाहा था[2]

(2) जब तू न रहेगा तो तेरी याद रहेगी
कागज रहे सादे, कभी ऐसा नहीं होगा।[1]

(3) यहाँ हर तरफ है, धुआँ-धुआँ, रहें हम तो कैसे रहें यहाँ !
थी हसीन जिनसे ये बस्तियाँ, वे गुलाब आज किधर गये ![2]

(घ) अन्य काव्य-कृतियों का परिचय-रचना-काल, विषय-वस्तु एवं प्रकाशन :

श्री गुलाब खण्डेलवाल प्रयोगधर्मी कवि हैं। उन्होंने अपने साहित्यिक जीवन में विभिन्न प्रकार के सफल प्रयोग किये हैं। यही कारण है कि उनका साहित्यिक व्यक्तित्व निरन्तर बहुआयामी होता चला गया है। उन्होंने जीवन, जगत, भक्ति, ज्ञान, दर्शन, देश-भक्ति, जातीय गौरव, प्रेम, त्याग, बलिदान, यथार्थ जीवन, देशी-विदेशी मानसिकता, साहित्य की स्थिति आदि को लेकर विपुल साहित्य सृजित किया है। संयोग की बात है कि सभी पुस्तकाकार प्रकाशित भी है। यहाँ परिचय देने से पूर्व यह बतलाना समीचीन प्रतीत होता है कि गुलाब जी के गद्य में लिखे नाटकों और काव्य-नाटक को भी इस क्रम के अन्तर्गत लिया गया है। अन्य काव्य-कृतियों की संख्या तीस है।

---

1. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : प्रथम सं0 1984 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक-लोकभारती प्रकाशन : 15-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद।
2. वही : पृ0 23.

अन्य काव्य (एक) 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' :

काव्य-जगत में नित्य नवीनता का परिचय देनेवाले श्री गुलाब खण्डेलवाल ने भारत पर चीन के आक्रमण (1962 ई0) के समय कुछ रचनाएँ लिखीं जो 'मेरे भारत,, मेरे स्वदेश'[1] संग्रह में संग्रहीत हैं। स्पष्ट है इन रचनाओं का रचनाकाल 1962-63 ई0 के आस पास है। कवि ने आमुख में लिखा है - 'इन कविताओं के विषय में किसी प्रकार के स्पष्टीकरण की अपेक्षा नहीं है। आज की संकटकालीन परिस्थिति ने साहित्यकार को भी वीणा छोड़कर शंखघोष करने के लिए विवश कर दिया है। मैं तो केवल इतना ही कह सकता हूँ कि मैंने हृदय के स्वाभाविक आवेश से प्रेरित होकर ये रचनाएँ की हैं। इनका साहित्य में क्या स्थान होगा या ये कितने अंश तक समाज में प्रेरणा और अनुभूति भर सकेंगी, यह जाँचना मेरा काम नहीं।'[2] प्रस्तुत काव्यरत्न का समर्पण श्री कामता प्रसाद सिंह 'काम' की पुण्य स्मृति को किया गया है। पुस्तक का कलेवर मात्र 50 पृष्ठों में है।

'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' की विषय-वस्तु :

प्रस्तुत काव्य-संग्रह में मात्र 8 रचनाएँ हैं जिनकी विषयवस्तु का अनुमान उनके शीर्षकों से ही लग जाता है, यथा - 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', 'आज हिमालय के शिखरों से, 'प्रयाण-गीत', 'हमने बचपन से चीनी के', 'वीर-भारती', जागो भारतवासी', 'भारत-वंदना-।' और 'भारत-वंदना-2, 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' की रचनाएँ चीन को लक्ष्य करके संयोजित की गयी हैं। कवि ने भारतीय स्वभाव, आदर्श, बलिदान और त्याग की भावना को ध्यान में रखते हुए और पूर्व वीरों और त्यागियों का स्मरण करते हुये, इन कविताओं की रचना की है। रचनाओं में आद्योपान्त प्रेरणा की सरिता प्रवहमान है —

बढ़ो कि आज मोड़नी, तुम्हें लहर अनन्त की
बढ़ो कि आज तोड़नी, अनी दिगन्त-दन्त की

---

1. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 55.
2. वही: पृ0 62.

बढ़ो कि आज रावणी कलंक मेटना तुम्हें
बढ़ो कि आज कुम्भकर्ण को समेटना तुम्हें
('मेरे भारत, मेरे स्वदेश' - पृ0 9)

पाँचवी रचना का नाम है 'वीर-भारती'। इस रचना में 108 दोहे हैं जो वीररस और ओज से परिपूर्ण हैं। कवि गुलाब खण्डेलवाल ने स्वयं लिखा है - 'हाँ 'वीर-भारती' के नाम से जो मेरे कुछ दोहों का संग्रह इस पुस्तक में है उस पर मुझे विशेष अनुराग और आस्था है। इन दोहों में मैंनें देश और काल से प्रेरणा ग्रहण करके भी उनका अतिक्रमण करने का प्रयास किया है।'[1] 'वीर-भारती' के दोहों की विषयवस्तु त्याग, बलिदान, प्रेरणा, मातृभूमि-प्रेम, शान्ति और अहिंसा का विशिष्ट अर्थ आदि हैं। कवि ने इस कोटि के काव्य को ही उत्कृष्ट कहा है -

शोणित-मसि, असि-लेखनी, रण-भू कोरे पृष्ठ
प्रति अक्षर शिर शत्रु का, काव्य वही उत्कृष्ट।[2]

पति को विदा करते समय को लक्ष्य करके जो दोहे कवि ने कहे हैं वे भी उत्कृष्ट हैं। वास्तव में इस रचना को और विस्तार देकर पृथक् से प्रकाशित करना चाहिए था जिससे यह रचना-संग्रह वीर-काव्य-परम्परा के अन्तर्गत आ जाता।

अन्य काव्य (दो) 'रूप की धूप' :

आकार प्रकार की दृष्टि से श्री गुलाब खण्डेलवाल की मुक्तक-रचनाओं के अन्य संकलनों की तुलना में 'रूप की धूप' सबसे विशाल संग्रह है। यह संकलन पुस्तकाकार सर्वप्रथम 1971 ई0 में प्रकाशित हुआ है और 'ग्रन्थावली (तृतीय खण्ड) में पृ0 सं0 89 से 193 तक संग्रहीत हैं। रूप की धूप का समर्पण पुरुषोत्तम जी केजरीवाल और नथमल केडिया जी को किया गया है

---

1. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश': प्रथम सं0 1963 : गुलाब खण्डेलवाल।
2. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश : आमुख : गुलाब खण्डेलवाल।
3. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 38.

भूमिका लिखकर सुसज्जित किया है श्री सीताराम चतुर्वेदी ने। पं0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस कृति पर टिप्पणी करते हुये लिखा है - 'रूप की धूप मुझे बहुत पसन्द आई। इसमें उर्दू के समान, प्रायः उसीके छन्दों में, सहज ही प्रभाव डालनेवाली बेधक उक्तियाँ हैं जो बहुत ही आकर्षक और प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त हैं।'[1] भूमिका में श्री चतुर्वेदी जी लिखते हैं -'यशस्वी कवि श्री गुलाब ने 'रूप की धूप' नाम के अपने इस मुक्तक-संग्रह में सौ से अधिक दोहों और लगभग पाँच सौ चौपदों का संग्रह प्रस्तुत किया है। यद्यपि चार चरणों के छन्द लिखने की पद्धति संस्कृत में भी विद्यमान थी, किन्तु जिस पद्धति पर इन मुक्तकों की रचना की गयी है उसका आगम फारसी काव्य-पद्धति से है जिस को प्रथम प्रभावशाली रूप से हरिऔध जी ने हिन्दी मुहावरों का आश्रय लेकर 'चोखे चौपदे' और 'चुभते चौपदे' के रूप में प्रस्तुत किया है।[2] वास्तव में 'रूप की धूप' की रचनाएँ गुलाब जी की मौलिक प्रतिभा की द्योतिका है।

'रूप की धूप' की विषय-वस्तु :

'रूप की धूप' की रचनाएँ मुक्तक रूप में हैं। अतः स्वभावतः, मुक्तकों की विषय-वस्तु भी पृथक्-पृथक् भाव-भंगिमा लिये हुए है। 'अस्मिता' शीर्षक से नब्बे मुक्तक हैं जिनमें विवशता, तेजस्विता, आत्मबल, अहंकार, खीज, विफलता, आत्म-विश्वास, मनस्ताप, मनोमन्थन, खट्टे-मीठे अनुभव, आशा, निराशा, चिन्ता, वेदना, धैर्य आदि को लक्ष्य किया गया है। 'रूप की धूप' शीर्षक से इकसठ मुक्तक लिखे गये हैं जिनमें रूप-दर्शन, योग, भोग, विभावन, संस्कार, निर्वेद, क्षोभ आदि का निर्विकार भाव से चित्रन किया गया है। मरण में भी प्रिय की धड़कनें पीते रहने की बात भी मुक्तकों के कलेवर में समाहित है। कवि ने भारतीयता को प्रत्येक पग पर अपने साथ रखा है। 'कुँआरी दृष्टि' में ग्यारह और 'योग-वियोग' में पच्चीस मुक्तक हैं। भावों की सहज सम्प्रेषणीयता इन मुक्तकों की अपनी विशेषता है -

प्रेम में सब प्रतीप होता है
दूर जितना समीप होता है

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : पृ0 90.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : भूमिका : सीताराम चतुर्वेदी : पृ0 91.

छेड़ता तार आप वादक को
तम सुलगकर प्रदीप होता है

'उमर खय्याम' शीर्षक से कवि ने सड़सठ मुक्तक कहे हैं। इन मुक्तकों में उमरखय्याम की मानसिकता को बड़ी सादगी से प्रस्तुति दी गयी है। 'खाओ, पिओ और मस्त रहो' के सिद्धान्त में भी कवि ने करुणादि भावों का समावेश किया है। एक मुक्तक से कुछ अनुमान लगाया जा सकता है -

मैं रहूँगा न जहाँ कौन सुरालय होगा !
किस प्रिया का न मुझे रूप झलक जायेगा !
कौन यौवन कि जहाँ प्यास न होगी मेरी !
अंश मेरा कि भरा पात्र छलक जायेगा।
(गुलाब-ग्रंथावली - तृतीय खण्ड-उमर खय्याम - पृ0 157)

'विविधा' शीर्षक से छोटी बड़ी सत्तरह कविताएँ संग्रहीत की गयी हैं। इनमें कवि का उच्छ्खल मन यहाँ-वहा कुलाँचे भरता रहा है। जैसे -

रात है, बयावान है, तुम हो
चाँद है, आसमान है, तुम हो
कल जो होगा, सो देखा जायेगा
आज तो दिल जवान है, तुम हो
(गुलाब-ग्रंन्थावली - तृतीय खण्ड - विविधा - 'तुम हो' - पृ0 161)

'दोहा-शतदल' में मात्र सत्तासी दोहे हैं। इन दोहों को खड़ी बोली में प्रस्तुति दी गयी है। गुलाब के दोहे श्रृंगार-प्रधान हैं। इन पर प्रसिद्ध कवि बिहारीलाल आदि रीतिकालीन कवियों का प्रभाव है। 'रूप की धूप' का 'दोहा-शतदल' एक ऐसा मनोरम उपवन है जहाँ पाठक का मन भली भाँति रम सकता हैं।

अन्य काव्य (तीन) 'कविता' :

नवोदित कवि गुलाब खण्डेलवाल की कविताओं का प्रथम संग्रह सर्वप्रथम 1941 ई0 में प्रकाशित हुआ। इस प्रकाशनोत्सव पर कवि की आयु मात्र 17

वर्ष की थी। अपने समय के यशस्वी कवि निराला जी ने 'कविता'[1] नामक इस संग्रह की भूमिका लिखी और बेढब बनारसी ने अपना आशीर्वाद दिया। कदाचित इसीलिए कवि कविता की सीढ़ियाँ चढ़ता गया और प्रसिद्धि उसके पग चूमने लगी। निराला जी ने लिखा - 'कविता के प्रूफ मैंने देखे। कवि गुलाब की रचनाएँ पहले भी सुन चुका हूँ, उन्हींकी जुबानी। उनकी तारीफ भी कर चुका हूँ। आज छपे आकार में देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता है। बहुत सी रचनाएँ, जो कविता की कोटि में आसानी से गुलाब की तरह अपने दल खोल चुकी हैं, खुशबू से उन्मद, स्निग्ध कर देती हैं।'[2] और बेढव बनारसी ने लिखा - 'गुलाब कविता कानन के नव विकसित कुसुम हैं। सत्तरह अट्ठारह वर्ष की अल्पावस्था में अपनी रचनाओं में ऐसी अनुभूति का परिचय आपकी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचायक है। भाव और भाषा का इतना सुन्दर सामंजस्य कदाचित् ही हिन्दी के किसी कवि ने इस अवस्था में ऐसा किया हो।'[3] होनहार बिरवान के होत चीकने पात, जैसी कहावत श्री गुलाब खण्डेलवाल पर जीवन के प्रथम चरण पर ही चरितार्थ होने लगी थी। भविष्य मानो झाँकने लगा था।

प्रस्तुत संग्रह में 118 पृष्ठ हैं जिनमें 'कविता' शीर्षक के अन्तर्गत 52 रचनाएँ दी गयी हैं। आकार-प्रकार की दृष्टि से इनमें विविधता है। तीस रचनाएँ ऐसी हैं जिन्हें गीत-विधा के अन्तर्गत और शेष 22 रचनाओं को कविता की श्रेणी में रखा जा सकता है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल की रचनाओं का भले ही यह प्रथम संग्रह हो लेकिन काव्य-शिल्प उत्कृष्टता की सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ लगता है।

'कविता' की विषयवस्तु :

'कविता' संकलन में कवि की प्रारम्भिक रचनाएँ (1939 ई0 से 1940 ई0 के मध्य) संग्रहीत हैं। इन रचनाओं पर पन्त, निराला और बच्चन का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकने के कारण विषयवस्तु भी इन कवियों से प्रभावित है। पहली रचना में माँ भारती से कवि निवेदन करता है। आगेकी कविताओं में

---

1. 'कविता' : द्वितीय संस्करण - 1976 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक-वाणी मन्दिर, चौक, प्रतापगढ़।
2. 'कविता' : आमुख : निराला : पृ0 5.
3. 'कविता': आर्शीर्वचन : कृष्णदेव प्रसाद गौड़ : बेढब बनारसी : पृ. 4.

कवि का परिवेश-बोध, यथार्थ का अंकन, सौन्दर्य-बोध और भावुकता प्रसरित होती चली गयी है। कर्मबोध को लक्षित रचना की कुछ पंक्तियाँ देखिए -

किस महान सुख की कर आशा
बैठा है चुपचाप ठगा-सा
सम्मुख मधु का सिन्धु उमड़ता, तू प्यासा का प्यासा !
तेरी यह अनन्त अभिलाषा।[1]

कुछ कविताओं में कवि आशान्वित और उत्साही दिखायी देता है तो कुछ कविताओं में भाग्यवादी और निराश भी दिखता है। अल्पवय के अनुभव बतलाता हुआ कवि कहता है -

बतला दूँ मैंने जीवन में क्या देखा
असफलता है अभिलाषाओं का लेखा
हम मिटें, मिटे जग, जीवन भी मिट जाये
पर अमिट रहेगी यहाँ भाग्य की रेखा [2]

कवि की कल्पना नदियों की लहरों पर, फूलों, पँखुरियों पर, दीपक की लौ पर, कलियों की मुस्कान पर, संसार के क्षणिक और क्षीण अवसाद पर कभी उत्साह से, कभी आनन्द से, कभी अनुराग से और कभी आशा से उन्मुक्त हो उठती है और इसके परिणाम-स्वरूप कविता की सुन्दर सृष्टि होती है। जहाँ कवि को प्रकृति के मनोरम रूप कुछ गाने के लिये उद्वेलित करते हैं वहीं 'माँझी', शीर्षक से कवि युगपुरुष रवीन्द्रनाथ को भी स्मरण करता है तथा उनके कार्य को आगे बढ़ाने का संकल्प लेता है। कवि अपने समस्त परिवेश को अपनी रचनाओं में समाहित कर लेना चाहता है।

अन्य काव्य (चार) 'सीपी-रचित रेत' :

'सीपी-रचित रेत'[3] में प्रतिभाशाली कवि गुलाब खण्डेलवाल के सॉनेट संग्रहित हैं। उन्होंने लिखा भी है - 'मैंने हिन्दी में सॉनेट की शैली का सूत्रपात

---

1. 'कविता' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 5.
2. वही : पृ0 41. किये गये हैं।

सन् 1941 ई0 में किया था। प्रस्तुत संग्रह के अधिकांश सॉनेट उसी काल के आसपास लिखे गये थे। हिन्दी में या अन्य भारतीय भाषाओं में पाश्चात्य काव्य की इस विधा में किसी और ने भी लिखा है या नहीं, इसका ज्ञान उस समय मुझे नहीं था।"[1] प्रस्तुत संग्रह में मात्र 57 सॉनेट (अंग्रेजी छन्द) हैं। इस संकलन का समर्पण तेलगू के महान साहित्यकार दम्पति कविवर श्री शेषेन्द्र शर्मा तथा राजकुमारी इन्दिरा धनराज गिरि को किया गया है। 'सीपी-रचित रेत' में मात्र 67 पृष्ठ हैं।

'सीपी-रचित रेत' की विषय-वस्तु :

कवि ने भूमिका में कहा है "प्रस्तुत सॉनेट, छायावाद के चरम उत्कर्ष-काल में छायावाद शैली से विद्रोह के रूप में उभरे थे। मैंने उस समय हिन्दी-काव्य के वर्ण्य विषय की सीमितता को विस्तृत करने तथा उसमें नवीन प्राण-शक्ति एवं यथार्थवाद को भरने की चेष्टा की थी।"[2] इन विशिष्ट छन्दों में कहीं किशोर प्रेम की अभिव्यक्ति है तो कहीं प्रिय की विकल प्रतीक्षा है, कहीं कवियों को सम्बोधित किया गया है तो कहीं सपनों के राजकुमार को शब्दों में उतारा गया है, कहीं अपराध के लिये क्षमा याचना की गयी है तो कहीं प्रिय को असाधारण रूप से रूपायित किया गया है, कहीं प्रकृति के रूप में प्रिय की छवि का अवलोकन किया गया है तो कहीं प्रकृति के उपमानों में प्रिय निवसित दिखा है और कहीं स्वप्न और यथार्थ का अंतर चित्रित है तो कहीं शिशु की शव-यात्रा देखकर कवि करुणार्द्र हो गया है।

प्रेम, रूप-माधुर्य, रूप-प्रशंसा, स्मृति, कल्पना, प्रिय की प्रतीक्षा, प्रिय की देह-यष्टि, पद-निक्षेप, मुस्कान, भू-संचालन आदि जैसे मनोरम, मनोहर और मोहक विषय लेकर ये सॉनेट रचे गये हैं। जैसे -

रूप-दर्शन -

जितना प्यार तुम्हें करता मैं, रानी ! उतना दीपक को

---

1. 'सीपी-रचित रेत', : प्रथम सं0 - 1979 : गुलाब खण्डेलवाल।
2. 'सीपी-रचित रेत, : ये सॉनेट : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 1.

करता नहीं पतंग, न उतना करता शशि को प्यार चकोर
तरु की सबसे ऊँची शाखा पर से निशि पर अपलक हो
देखा करता है जो अपने प्रिय के सुन्दर मुख की ओर
('सीपी-रचित रेत' : पृ0 57)

प्रेम

कोई हँसे प्रेम को मानव की, दुर्बलता कह-कहकर
मैं तो मानव जीवन की सार्थकता उसे मानता हूँ
बुद्-बुद् से उठ गिरनेवाले अन्य भाव जितने भू पर
थोथापन कितना है उनमें, अच्छी तरह जानता हूँ
('सीपी-रचित रेत : पृ0 57)

अन्य काव्य (पाँच) 'शब्दों से परे'

कविवर गुलाब खण्डेलवाल की 1941 ई0 से 1982 ई0 तक की रचनाओं में से कुछ चुनी हुयी रचनाओं का संग्रह 'शब्दों से परे' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। चयनित 61 रचनाओं में अधिसंख्य गीत की सीमा में आते हैं। कुछ रचनाएँ अतुकान्त-सी लगती हैं लेकिन उन्हें ध्यान से देखने पर उनमें लयबद्धता का क्रम पकड़ में आ जाता है। इन गीतों तथा कविताओं का आमुख डॉ0 राजेश्वर सहाय त्रिपाठी, ऐडवोकेट, प्रधान मंत्री, उत्तर प्रदेश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने लिखा है और समर्पण भूतपूर्व संसद-सदस्य श्री गंगाशरण सिंह जी को किया गया है। प्रस्तुत काव्यकृति के सन्दर्भ में डॉ0 त्रिपाठी का कथन है - 'महाकवि गुलाब ने मुक्तक काव्य के इस लघु ग्रन्थ में चित्रों, रूपकों, फूल, नदी आदि के जीवन-प्रतीकों से गुम्फित मानव-जीवन के उत्थान-पतन, सृष्टि के रचना-प्रलय आदि को सजाकर उनसे निःसृत रस-चषक

---

1. 'सीपी-रचित रेत' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 2.
2. 'शब्दों से परे' : प्रथम संस्करण : 1982 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक -वाणी मन्दिर, कचहरी रोड, चौक, प्रतापगढ़।

प्रस्तुत किया है, जो हिन्दी-गीतों के भाव-जगत की मणि है।'[1]

'शब्दों से परे' की विषय-वस्तु :

डॉ0 त्रिपाठी के उक्त कथन में विषय-वस्तु की ओर संकेत किया गया है। कवि संसार की वास्तविकता से परिचित हो चला है।'[2] अतः वह इस माया से अभिभूत संसार की सीमा से परे जाने के लिये साधना का मार्ग चुनता है और अनुभव करता है कि यह संसार विषधर है, जो इसे पालता है उसे ही डँस लेता है। जब किसी सांसारिक से यह प्रश्न पूछा जाय तो वह यही कहेगा कि इसके अतिरिक्त उपाय क्या है ? वास्वतव में मनुष्य की स्थिति बड़ी ही विचित्र-सी है, यथा -

मैं फण पकड़े काँप रहा हूँ
भीड़ से घिरा हाँफ रहा हूँ
नीले पड़े होंठ, नेत्र पथराये, पीड़ा से अंग-अंग अँकड़ा है।
मैंने यह साँप क्यों पकड़ा है ![3]

मनुष्य को यह मायावी संसार भी रूचिकर नहीं लगता है क्योंकि इसमें कही भी सुख, शान्ति और सन्तोष की छाया नहीं है। संसार की ऐसी विचित्र रचना है कि देखिए और मौन होकर रह जाइये। यदि एक ओर जगत विकासमय दिख रहा है तो दूसरी ओर विनाश-लीला अपना कोप दिखा रही है और मनुष्य यह सब देखने के लिये विवश है। श्मसान के निम्न चित्रण द्वारा जैसे गुलाब जी ने संसार की नाशवान और सारहीन स्थिति का ही चित्र खींच दिया है -

कहीं पर ढेर है टूटे घटों का, भग्न प्यालों का,
कहीं अम्बार फूटी चूड़ियों, चूनर, दुशालों का,
पहाड़ों-से इकट्ठे हो रहे तलवार-भालों का,
कहीं है ठट्ट पट, आभूषणों, पक्वान्न, थालों का,

---

1. 'शब्दों से परे' : आमुख : डॉ0 राजेश्वर सहाय त्रिपाठी : पृ0 ठ.
2. **फिरे सब फिरे**
   लहरों के बीच हम अकेले ही तिरे। - शब्दों से परे : पृ0 5.
3. 'शब्दों से परे' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 21.

सभी सामान दिखाते हैं,
भवन-सोपान दिखाते हैं,
न जीवन का कहीं, पर चिह्न,
सब निष्प्राण दिखाते हैं,
न क्रेता है न विक्रेता न बोली बोलनेवाला
नहीं कोई कहीं से आ रहा पट खोलनेवाला।[1]

अतः इस दृश्यमान जगत से परे, जहाँ शब्द भी नहीं हैं, वैराग्य की स्थिति में जब तक साधक नहीं पहुँच जाता है तब तक उसे यह मायावी लोक अपने बाहुपाश में लिये ही रहेगा। ऐसे भावों की स्थितिवाले स्थल वेद-वाणी की भाँति अस्पष्ट-से हो गये हैं अर्थात् इनको समझाना सहज नहीं है। शब्द की महत्ता प्रतिपादित करता हुआ कवि कहता है -

जब कुछ भी नही था तब भी शब्द थे।
जब कुछ भी नहीं रहेगा तब भी शब्द रहेंगे।
अनुभव के पूर्व और अनुभव के बाद
चाहे उन्माद कहें चाहे अवसाद
एक मात्र शब्द ही रहेंगे निर्विवाद।[2]

जहाँ अध्यात्म, दर्शन, साधना से सम्बन्धित कविताएँ हैं वहीं बेढब बनारसी के निधन पर, अपनी चालीसवी वर्षगाँठ पर, मृत्यु आदि पर भी कविताएँ हैं। संघर्ष की जीवन में अनिवार्यता को कई गीतों में स्वीकारा गया है और अनेक रचनाओं में जीवन और जगत के रहस्यों को समझने और समझाने जैसे विषय भी चुने गये हैं।

अन्य काव्य (छः) 'व्यक्ति बनकर आ' :

प्रस्तुत काव्यसंग्रह 'व्यक्ति बनकर आ'[3] मुक्तककार श्री गुलाब खण्डेलवाल

---

1. 'शब्दों से परे' : पृ0 25.
2. 'शब्दों से परे' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 38..
3. 'व्यक्ति बनकर आ' : प्रथम सं0 1982 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 15+86=101 : प्रकाशक - कमल प्रकाशन, चौक, प्रतापगढ़।

की 1981 ई0 से 1982 ई0 के बीच लिखी गयी 71 रचनाओं से सुसज्जित है जिसकी भूमिका डॉ0 जगदीश पाण्डेय, रीडर एवं अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग (हर प्रसाद दास जैन कालेज, आरा) ने लिखी है तथा समर्पण उत्तर प्रदेश के गौरव, प्रतापगढ़ की कुहाच्छन्न धरती के चारों ओर ज्ञान के भव्य आलोक-स्तम्भ खड़े कर देनेवाले, शत-शत संघर्षों के अजेय सेनानी, साहित्य-महारथी डॉ0 राजेश्वर सहाय त्रिपाठी को किया गया है। अपनी बात में श्री गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा है - 'शब्दों से परे' के बाद अशब्द को शब्दायित करने का मेरा यह विनम्र प्रयास है। भाषा, भाव एवं छन्द-योजना की दृष्टि से मेरी अन्य पुस्तकों से यह नवीन प्रयोग अलग दिखायी दे सकता है परन्तु सूक्ष्म निरीक्षण करने पर यह सर्वथा अप्रत्याशित नहीं लगेगा। बल्कि एक प्रकार से 'शब्दों के परे' की परिणति ही इसमें मिलेगी।'[1] 'व्यक्ति बनकर आ' की रचनाओं में काव्य-शिल्प से कम, भाव-शिल्प के अधिकतम उत्कृष्ट नमूने देखने को मिलते हैं।

'व्यक्ति बनकर आ' की विषय-वस्तु :

'व्यक्ति बनकर आ' में श्री गुलाब खण्डेलवाल की अन्तर्यात्रा की कविताएँ हैं जो आकार-प्रकार में भारी-भरकम नहीं हैं। अभिव्यक्ति की सहजता और स्पष्टता पाठक को अपनी ओर आकर्षित करती है। निम्नांकित कविता विषयवस्तुका दिशा-बोध कराने में समर्थ है -

मुझसे मेरे कवि ने कहा -
कविता लिखनी है तो शब्दों का मोह छोड़ दे
कागज फाड़ दे और कलम तोड़ दे।
मूढ़ ! वह जो तुझे दिखा है,
क्या कभी किसी ने कहा है !
क्या कभी किसी ने लिखा है !

स्पष्ट है कि कविताओं की विषयवस्तु का चयन यथार्थ की भावभूमि से किया गया है। यथार्थ में मनुष्य के जीवन की संगतियों और विसंगतियों को

---

1. 'व्यक्ति बनकर आ' : अपनी बात : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 झ.

न केवल देखा है बल्कि उन्हें शब्दायित भी किया है। मनुष्य यथार्थ का चिंत्य बिन्दु है और मनुष्यता या मानवता की उदारता से प्रस्तुति ही आदर्श है। कवि ने इसीलिए इन कविताओं में स्वयं को मानवता का पक्षधर कहा है। कवि कभी सजीव-निर्जीव के मध्य विचरता है तो कभी सृष्टि के रहस्यों को कौतूहल से निहारता है, कभी उस अलौकिक और अदृश्य शक्ति को शब्दायित करना चाहता है जो विस्मय का कारण है तो कभी सुख-दुख के पालने में झूलती सृष्टि को दृष्टि प्रदान करता है -

कभी वह स्वयं में चकित होने लगता है कि क्या करूँ और क्या न करूँ तो कभी अपने और विधाता के निर्मम सम्बन्धों पर विचार करता है। कतिपय पंक्तियों से विषय-वस्तु की यथार्थ जानकारी दी जा सकती है -

1. **मैं तुझे किस नाम से पुकारूँ ?**
   क्या कहकर संसार को तेरा परिचय दूँ ?
   क्या मैं तुझे चिर-रहस्यमय ही कहूँ ?
   तेरी ओर बस खोया-खोया देखता रहूँ ?[1]
   (व्यक्ति बनकर आ : पृ0 44.)

2. **मेरे आगे नये-नये क्षितिज तैरते आ रहे हैं**
   यह सारा ब्रह्माण्ड अब मेरे लिये हस्तामलक है
   मेरी कविता में अनजाने लोकों की छवि है
   मेरा कवि नयी मानवता का कवि है।
   ('व्यक्ति बनकर आ' : पृ0 5.)

अन्य काव्य (सात) 'बूँदें : जो मोती बन गयीं' :

श्रेष्ठ विचारक एवं कविश्री गुलाब खण्डेलवाल की 1981 ई0 से 1982 ई0 के बीच लिखी गयी विभिन्न आकार-प्रकार वाली 70 रचनाओं का संग्रह 'बूदें : जो मोती बन गयीं'[2] शीर्षक से सन् 1983 ई0 में प्रकाशित हुआ है। इस संकलन का समर्पण कवि-बन्धु डॉ0 शिवमंगल सिह 'सुमन' को किया गया है। 'अपनी ओर से' गद्य में 'आमुख' 'पद्य (अतुकान्त) कविवर गुलाब जी ने स्वयं

---

1. 'व्यक्ति बनकर आ' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 60.
2. 'बूँदें : जो मोती बन गयीं' : प्रथम सं0 19883 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 82, प्रकाशक-वाणी प्रकाशन : कचहरी रोड़, प्रतापगढ़।

लिखा है। पुस्तक के आवरण-पृष्ठ पर मुद्रित आचार्य विश्वनाथ सिंह की प्रस्तुत पंक्तियाँ बड़ी ही सार्थक हैं - 'प्रेम की विभिन्न मनोदशाओं में कवि के अन्तर्मन में जो भाव-बिन्दु उगते हैं उनमें से कुछ ही मुक्तावस्था को उपलब्ध हो पाते हैं। प्रस्तुत संकलन ऐसी ही बूँदों का है, जो मोती बन गयी हैं - प्राणों की मधुर प्रेम की पीर, जो शब्दों की सीपी में प्रवेश करके सहज ही शुभ और भास्कर हो उठती हैं, होंहिं कबित मुक्तामनि चारू' प्रेम के परिणत स्वरूप की उज्ज्वलता इन मोतियों में अपने अनेक-अनेक आयामों को उद्भासित करती है।' इन संकलित रचनाओं में प्रति पग नवीनता का उन्मेष तो देखते ही बनता है। कवि का स्वयं का कथन है - 'इनकी अभिव्यंजना-शैली मेरी पूर्व कविताओं से सर्वथा भिन्न है।'[1]

'बूँदें: जो मोती बन गयीं' की विषय-वस्तु :

प्रेम मनुष्य के जीवन भर चलनेवाली प्रक्रिया है। प्रेमिल मन के लिये भावुकता अनिवार्य है। कवि संसार की प्रत्येक वस्तु को प्रेमिल दृष्टि से देखता है। कवि गुलाब ने भी सृष्टि को बड़े प्रेम से, विशेषकर नारी को बड़े प्रेम से देखा है। नारी मनुष्य के जीवन की पूरक और प्रेरक दोनों ही है। कवि विदा लेने से पूर्व कहता है -

जब मुझे जाना ही है तो फिर हँसकर विदा करो
मन क्यों अनमना करो !
राही तो प्रतिपल नये मिलते हैं, बिछुड़ते हैं,
दुनिया के रिश्ते यों ही टूटते हैं, जुड़ते हैं,
जिसका कोई विकल्प नहीं, मुस्कुराकर उसका सामना करो।
मन क्यों अनमना करो ![2]

प्रारम्भिक रचनाओं में भावुकता प्रधान है तो शेष कविताओं में भावुकता को बुद्धि ने दूसरे स्थान पर लगा दिया है। कवि कहीं तो सृष्टि के रहस्यों पर दृष्टिपात करता है और कहीं प्रकृति उसे सम्मोहित कर लेती है। कवि जब संध्या के झुटपुटे में प्रिय के साथ किये गये स्वच्छन्द विहार का स्मरण करता है तो उसे वर्तमान की विवशताएँ क्षुब्ध कर देती हैं। जिस प्रकार मन सम्मोहित

---

1. 'बूँदें: जो मोती बन गयीं': अपनी ओर से : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 च.
2. वही : पृ0 10.

करनेवाले पुष्प जब प्रिया की केशराशि में गुँथ जाते हैं तो उनकी सुंदरता और भी बढ़ जाती है उसी प्रकार कवि अनुभव करता है कि जब उसकी प्रिया उसके गीतों को गाती है तो वे और भी मधुर हो उठते हैं।

यह सच है कि फूल डालों पर ही शोभा पाते हैं
पर तुम्हारे जूड़े में पहुँचकर तो वे और भी सुंदर बन जाते हैं
और मेरे गीत भी कागज पर छपे हुए चाहे जितने अच्छे लगते हों
सार्थक तभी होते हैं
जब तुम्हारें ओंठ इन्हें गुनगुनाते हैं

कवि को अपने और अपनी प्रेयसी के बीच कभी कोई तीसरा दिखाई देता है तो कभी वह अनुभव करता है कि उसकी और उसकी प्रियतमा की नौका जीवन की संध्या में एक साथ किनारे पर पहुँच गयी है परंतु उनका टूटा हुआ संपर्क नहीं जुड़ पाया है। गुलाब जी प्रेमी मनों को आश्वस्त भी करते हैं -

प्रेम कभी मरता नहीं है,
वह जितना डूबता है, उतना उभरता है,
जितना टूटता है, उतना जुड़ता है,
जितना बिखरता है, उतना सँवरता है,
सच्ची बात तो यह है कि
प्रेम हो जाता है
कोई प्रेम करता नहीं है।'[1]

संकलन के अन्त में देवयानी, ऊर्वशी रत्नावली आदि को प्रतीक बनाकर भी अनेक रचनाएँ कवि ने लिखी हैं। एक कविता 'वाह गुलाब जी' सम्बोधन से लिखकर कवि ने सतही समीक्षकों पर व्यंग्य किया है।

अन्य काव्य (आठ) 'रेत पर चमकती मणियाँ' :

'रेत पर चमकती मणियाँ'[2] श्री गुलाब खण्डेलवाल की 73 छोटी-छोटी

---

1. 'बूँदें: जो मोती बन गयीं' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 44.
2. गुलाब-ग्रन्थावली : द्वितीय खण्ड - 1988 ई0 : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी : 'रेत पर चमकती मणियाँ : पृ0 195-219 तक संग्रहीत : प्रकाशक कमल प्रकाशन : 105, मकंदूगंज, प्रतापगढ़।

विचार और भावुकता की चासनी में पगी रचनाओं का संकलन है। इन रचनाओं की शैली 'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ' के समान है। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक बात कहने की कला का दर्शन करना हो तो 'रेत पर चमकती मणियाँ' जैसा संकलन देखना चाहिए। 'एक चंद्रबिंब ठहरा हुआ' की तरह 'रेत पर चमकती मणियाँ' की रचनाओं का पुस्तकाकार संयोजन बिना किसी भूमिका, आशीवर्चन और समर्पण के ही किया गया है। प्रस्तुत संकलन का नाम प्रथम गम्भीर रचना के आधार पर किया गया है[1] जिसमें संसार की रहस्यमयता और सत्य की तरह दिखाई देनेवाली असत्यता की चर्चा है।

'रेत पर चमकती मणियाँ' की विषय-वस्तु :

जो दृश्यमान जगत है वह रेत पर दिखती चाँदी की भाँति है। संसार सोने से मढ़ी हुयी विष से लबालबभरी प्याली है। इस चषक से विरक्ति शास्त्र-अध्ययन मात्र से नहीं होगी। इतिहास-पुरुष बनने के लिये स्वयं शिर पर खरीदा हुआ मुकुट नहीं बाँधा जाता है बल्कि उसे पुरुषार्थ से प्राप्त किया जाता है। जीवन कुछ वस्तुओं के संग्रह का नाम नहीं है। बलिपशु हरित तृण अज्ञता वश चरता है। असत्य का प्रतिकार करने की शक्ति मनुष्य में जब तक नहीं जागती है तब तक उसे पराधीन होकर ही जीना होगा। अव्यक्त को व्यक्त अर्थात् ब्रह्म को संसार के माध्यम से ही जाना जा सकता है। मानसिक स्वीकृति में ही ईश्वर की स्वीकृति है।

मनुष्य का सकारात्मक सोच उसका मूल है जिससे विलग होने पर वह कुछ नहीं रह जाता है। प्रकाश के बीच बुझा-बुझा जीने से अंधकार में जलना

1.रेत पर चमकती मणियाँ
रह रह कर मुझे लुभाती हैं
पर मैं ज्यों ही उन्हें उठाने को झुकता हूँ
वे हवा में ओझल हो जाती हैं
सच कहूँ तो
यहाँ न रेत है, न मैं हूँ, न मणियाँ हैं
केवल सन्नाटे में गुँजती ध्वनियाँ हैं।
– 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 195.

श्रेयस्कर है।[1] जितेन्द्रिय होकर ही संसार के प्रहारों को सहा जा सकता है। जीवनरूपी मोती को लुटाकर फिर पछताना व्यर्थ है। मनुष्य की आस्था सर्वप्रथम मनुष्य पर ही होनी चाहिए, देवता तो आदर्श है।

'रेत पर चमकती मणियाँ' की अन्तिम कविताओं में प्रसाद, कीट्स, शेली, शेक्सपीयर के साथ-साथ कविता-सम्बन्धी अन्य विषय चुने गये हैं जैसे दो कवियों की तुलना -

दो कवियों की आपस में तुलना नहीं करनी चाहिए
एक की शराब
दूसरे की गंगाजली में नहीं भरनी चाहिए।[2]

प्रस्तुत काव्य-संग्रह की छोटी-छोटी रचनाओं की विषय-वस्तु एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। ये रचनायें आनंद के सघन छींटों के समान हैं जो क्षण मात्र में रस से सराबोर कर देते हैं। ये प्रकाश की कणिकायें हैं जो पल भर में ही आलोक से पाठक के हृदय को दीप्ति से भर देती हैं।

अन्य काव्य (नौ) 'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ :

काव्य-रूप की दृष्टि से 30 अतुकान्त कविताओं का संग्रह 'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ'[3] सन् 1987 ई0 में प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह में कवि की 1980 ई0 से 1983 ई0 तक की रचनाएँ संग्रहीत हैं। कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने इस काव्य-संग्रह का सस्नेह समर्पण प्रिय पुत्र डॉ0 आनन्द और पुत्रवधू डॉ0 शोभा के लिये किया है। श्री अक्षयचन्द्र शर्मा ने भूमिका के रूप में 'स्वागत के स्वर' को शब्दायित किया है। श्री शर्मा ने लिखा है - 'अपने प्रवासी-जीवन के क्षणों में समृद्ध अमेरिका की, ऊपर से तृप्त, भीतर से क्लान्त धरती पर बैठकर यह महाकवि नवीन भावोर्मियों से उद्वेलित होता है। उसी का प्रतिफल है -

---

1. फूलों की सेज पर सोते रहने से
   काँटोंभरे मार्ग पर चलते रहना अच्छा है,
   प्रकाश के बीच बुझे-बुझे रहने से
   अँधेरे के बीच जलते रहना अच्छा है।
   - गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : इकत्तीसवाँ मुक्तक : पृ0 205.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : चालीसवाँ मुक्तक : पृ0 208.

'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ।'[1] कवि ने कविता के धरातल पर उतर कर यथार्थ में कहा है -

नहीं, केवल लिखते जाने से काम नहीं चलेगा,
जो लिखा है, उसे करके भी दिखाना होगा,
शब्द जब तलवार लेकर उठ खडे होंगे,
तो सब से पहले अपना ही मस्तक कटाना होगा।[2]

'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ' की विषय-वस्तु :

'नये प्रभात की अंगड़ाइयाँ' की कविताओं की विषय-वस्तु अपनी देशीय भूमि के कम और विदेशी भूमि से अधिक जुड़ी हैं। पहली कविता 'अभिवादन, अमेरिका' मानों विषयवस्तु का प्रवेश द्वार है। अमेरिका की जीवन-दृष्टि भोगवादी है अतः बाह्य रूप से समृद्ध, सुखी और सन्तुष्ट-सा दिखनेवाला जीवन अन्तर से दुखी, क्लेशित और अतृप्तियों से भरा है। त्याग और बलिदान जैसा यहाँ कुछ भी नहीं है। यहाँ तो सर्वत्र भोगों का बोलबाला है। कभी-कभी ऐसा लगता है कि मानों भोग और सम्भोग ही यहाँ की जिन्दगी की नियति बन गया है। कवि को गांधी स्मरण हो आते है और वह भोगवादियों और गाँधी की तुलना करता है -

मेरा मन तराजू के काँटे-सा डोल रहा है
एक पलड़े पर भोगवादी है, एक पर गांधी हैं,
* * * * *
गांधी ने अपने सिद्धान्तों की सत्यता
अपने जीवन के द्वारा दिखा दी है
परन्तु भोगवादियों ने अँधेरे में चलने के लिए
हमारे हाथ में केवल एक चमकती हुयी अग्नि-शिखा दी है।[3]

इस प्रकार की कविताएँ मोहभंग और यथार्थ ज्ञान से संयुक्त हैं' जैसे 'तुम्हारा पत्र', 'सड़क के किनारे का कब्रिस्तान', 'दुनिया', 'जलते हुये घर

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली : द्वितीय खण्ड : स्वागत के स्वर : अक्षय चन्द शर्मा : पृ0 92.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली : द्वितीय खण्ड : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 90.
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 122.

में से', 'परशुराम' आदि। ये कविताएँ कवि ने यथार्थ की भूमि से उठायी हैं। जीवन का यथार्थ इन कविताओं द्वारा विश्वस्तर पर नग्न होकर हमारे सम्मुख आ गया है। श्रेष्ठता की होड़ एक ऐसी कविता है जिसमें राजस्थान के एक प्रमुख राज्य में दो वंशों में श्रेष्ठता की होड़ लग जाती है। दोनों अपने प्राण देकर अपनी-अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करते हैं। कवि ने कहीं भी किसी का नाम नहीं लिया है लेकिन पूरी बात यथार्थ घटना के रूप में अंकित की है।

यह बात तो बहुत पुरानी हो चुकी,
पर लेखनी की होड़ में
अब भी श्रेष्ठता ऐसे ही आँकी जाती है
पहले मस्तक उतारकर देवी पर चढ़ा दिया जाता है
तब कहीं गले तक जयमाला आती है।[12]

अनेक कविताओं की विषय-वस्तु पौराणिक, ऐतिहासिक सन्दर्भों से उठायी गयी है लेकिन उनका अवसान यथार्थ की भावभूमि पर ही किया गया है। नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ' की कविताओं की विषय-वस्तु का फलक अत्यन्त व्यापक और विशाल है।

अन्य काव्य (दस) 'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर' :

सम-सामयिकता प्रत्येक साहित्यकार एवं कलाकार को प्रभावित करती है। यह बात दूसरी है कि प्रभाव न्यूनाधिक हो सकता है। 'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर'[3] में प्रकाशित 17 छोटी और मझोले कद की, श्री गुलाब खण्डेलवाल की ऐसी रचनाएँ हैं जो सम-सामयिकता से प्रेरित हैं। प्रस्तुत काव्य-संग्रह समर्पित किया गया है मित्रवर श्री सहदेव देवड़ा को और प्रस्तावना लिखी है डॉ0 हंसराज त्रिपाठी ने। इस संग्रह में 1947 ई0 से 1983 ई0 तक की रचनाएँ संग्रहीत हैं। प्रस्तावना में लिखा गया है - 'यह रचना सजे-सजाये

---

1. वही : पृ0 112.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : 'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर' : पृ0 231 से 253 तक संग्रहीत : प्रकाशक-कमल प्रकाशन - 105, मकन्दू गंज, प्रतापगढ़।
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली': प्रथम खण्डः प्रस्तावनाः डॉ0 हंसराज त्रिपाठी, पृ0 233

गुलदस्ते की तरह है जिसमें राष्ट्रीयता, व्यक्ति-प्रेम, करुणा, त्याग, समर्पण, सहानुभूति एवं सहजानुभूति के चित्र-पुष्प हैं।' ये चित्र-पुष्प भूत, वर्तमान और भविष्य के प्रति प्रति-पग पर सजग हैं।

'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर' की विषय-वस्तु :

प्रस्तुत कविता-संग्रह की प्रथम कविता प्रथम स्वतन्त्रता-दिवस से सम्बन्धित है। स्वतन्त्रता की प्राप्ति से एक कलंक मिट गया। भविष्य के लिये भारत की परतंत्रता एक कहानी मात्र रह गयी है -

आज विगत की भूल, पराजय फिर से नहीं सुनानी होगी,
पराधीनता भारत की, शिशुओं के लिये कहानी होगी।[1]

राष्ट्रीय गौरव को कवि प्रतिक्षण स्मृति में बनाये रखता है। हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, बिहार, का गया-अधिवेशन हो, या 'मानस-चतुश्शती' हो अथवा 'राम-नवमी' हो, सभी को कवि अपनी आस्थामयी वाणी से स्पर्श करता चला है। राष्ट्रीय विभूतियों के निधन पर कवि उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करता है तो उसमें उनकी सभी विशेषताओं का समावेश कर देता है। पं0 जवाहरलाल नेहरू, पुरुषोत्तम दास टण्डन, जोश मलीहाबादी, पद्मभूषण सीताराम सेकसरिया को कवि ने भावमीनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। नेहरू की विशेषताएँ गिनता हुआ कवि कहता है -

गहन दासत्व-तम में मुक्ति-मंत्रोच्चार था नेहरू
पराजित मातृ-भू की वेदना साकार था नेहरू
बड़े ही यत्न से काता जिसे था आप बापू ने
अहिंसा की रुई से, सत्य का वह तार था नेहरू

* * * * *

बहुत माना हठी था, तेज था, तर्रार था नेहरू
सरित हम थाहते जब तक कि उड़कर पार था नेहरू
हमारी शिथिलता, जड़ता कुढ़ाती थी उसे हरदम
करे क्या, पाँव में बिजली बँधी, लाचार था नेहरू !

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : पृ0 238.

विभा ऊर्जस्व, मानव सभ्यता का सार था नेहरू
पृथकता, क्षुद्रता, जड़ स्वार्थ-हित अंगार था नेहरू
तड़ित के तार में झिलमिल गुलाबी हीरकों की छवि
करोड़ों भारतीयों के गले का हार था नेहरू।
(गुलाब-ग्रन्थावली : प्रथम खण्ड : पृ0 240.)

इसी प्रकार जोश मलीहाबादी के विषय में कवि लिखता है -
चूमकर जिनको कोई झूल गया फाँसी पर,
तेरी ग़ज़लों से उन आँखों की महक आती है
है रुबाई तेरी या गाँव की गोरी कोई,
झूलती आम की शाखों पे लचक जाती है
(गुलाब-ग्रन्थावली : प्रथम खण्ड : पृ0 243)

1965 ई0 में पाकिस्तान के आक्रमण पर कवि ने कई कवितायें लिखी हैं जो इस संग्रह में संकलित है। संग्रह की 'वंदी' शीर्षक कविता हमारे मर्म पर चोट करती है तथा हमें कठोर होकर कर्तव्य-पालन की प्रेरणा देती है। इस संग्रह की 'निर्वेद' नाम कविता की कुछ पंक्तियों दृष्टव्य हैं जो कवि की अनोखी सूझ बूझ प्रकट करती है।

आओं कुछ बात करें, घर-परिवार की,
अपने पराये की, नकद उधार की।
लोग आत्म हत्या पर उतारू हैं, मरें,
हम केवल बातें कर सकते हैं, करें,
होना जो है होगा, भागें या डरें
सब कुछ कह देगी एक पंक्ति अखबार की।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 252)

'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर' की कविताएँ यथार्थ और आदर्श के धरातल पर गढ़ी गयी हैं।

अन्य काव्य (ग्यारह) 'कस्तूरी कुण्डल बसे :

इसमें कवि ने विषय के अनुसार तीन भाग कर दिये है। पहला भाग

भक्ति-परक है जिसका नाम है 'सूर्यास्त के पूर्व' दूसरा भाग श्रृंगारपरक है जिसका नाम है 'एक चंद्र बिंब ठहरा हुआ' और तीसरा भाग चिंतन-परक है जिसका नाम है 'रेत पर चमकती मणियाँ' कविवर गुलाब खण्डेलवाल की काव्य-शैली एवं छन्द की नवीन विधा में रचित 'कस्तूरी कुण्डल बसे'[1] के प्रथम भक्ति-सबंधी संग्रह 'सूर्यास्त के पूर्व' की रचनाएँ 1983 ई0 से 1984 ई0 के बीच लिखी गयी हैं। इन रचनाओं की संख्या 102 है। 'कस्तूरी कुंडल बसे' को बड़ी प्रीति से भेंट किया गया है 'वंकिम, रवीन्द्र और शरत के समान हिन्दी-भाषियों के प्रेम-भाजन, मानव-चरित्र के अद्भुत चितेरे, सन्त-हृदय साहित्य-सृष्टा श्री विमल मित्र को। इस काव्य-संग्रह का प्रकाशन सन् 1987 ई0 में हुआ है। कवि पाठकों और समीक्षकों को, परम्परागत मानदण्डों को लक्ष्य करके देखने के स्थान पर, नवीन दृष्टि से देखने के लिये आमंत्रित करता है -

छन्द और तुक में ही ढूँढते कवित्व हैं जो
उनके लिए रंगों की फुहार रस-भीनी है
शब्द में जो देखते स्वरूप-नाद-ब्रह्म का ही
उनको यह ज्योतिशिखा पारदर्शी झीनी है
देश अनदेखा है, दिशायें अनसुनी हैं ये
लोग अनजाने और भाषा अनचीन्ही है
जाने क्या लगेगा मोल इसका सुधी रसिकों में
मैंने बड़े यत्न से यह रत्नराशि बीनी है[2]

प्रस्तुत काव्य-संग्रह के भूमिका-स्वरूप कवि स्वयं प्राक्कथन लिखते हुये कहता है - मैं रत्नों की खान का एक अदना उत्खनक हूँ। घनघोर अरण्य में छिपी दुर्लभ हीरे की खान में काम करनेवाले मजदूर और महानगरों के जगमग रत्नागारों के संचालक हीरे के पारखियों में जो अन्तर रहता है वही अन्तर मौलिक साहित्य के सृष्टा और साहित्य के व्यवसायियों, विश्लेषकों एवं प्रचार-प्रसार करनेवाले साहित्य-जीवियों में होता है। मजदूर को न तो विज्ञापन

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सम्पादक : श्रीनारायण चतुर्वेदी : 'कस्तूरी कुण्डल बसे' : पृ0 129 से 170 तक संग्रहीत : प्रकाशक -कमल प्रकाशक, 105, मकंद्रूगंज, प्रतापगढ़।
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 130.

करने की आवश्यकता है, न उपेक्षित रह जाने की आशंका। किन्तु निर्मित माल के थोक व्यापारियों के लिये पग-पग पर इन बातों की अनिवार्यता बनी रहती है।'[1] स्पष्ट है कि प्रस्तुत कृति द्वारा कवि सर्वथा नया, ऐसा रचना-विधान लोक को अर्पित करना चाहता है जिसकी उपेक्षा का वह अनुभव करता है।

'सूर्यस्त के पूर्व' की विषय-वस्तु :

प्रस्तुत संग्रह में कवि ने गागर में सागर भरने का प्रयत्न किया है। मात्र तीन पंक्तियों के हाइक (जापानी छन्द) से लेकर बीस पंक्तियों तक के 102 छन्दों के मुक्तकों में, जो भिन्न-भिन्न शैलियों में अमूर्त लय तथा अतुकान्त विधान से बँधे हैं, कवि ने एक ही विचार पिरोया है, कि मनुष्य सुख और आनन्द की खोज में निरन्तर भटक रहा है जबकि हरिणी की नाभि में कस्तूरी की भाँति रहने वाला सुख और आनन्द उसके अंदर है। इसका एकमेव कारण सांसारिक चमक-दमक है -

तुझ तक पहुँचने के
सारे प्रयत्न निष्फल हो गये,
हम जिस मार्ग से भी चले,
उसीकी सुन्दरता में खो गये।[2]

चमक-दमक से मिलनेवला प्रलोभन ही दुख का कारण है। जब तक मनुष्य अन्तर्मुखी नहीं हो जाता है तब तक उसे अभिलषित प्राप्त नहीं हो सकता। कवि की मान्यता निम्नांकित उद्धरण से स्पष्ट है -

मैं जहाँ जाना चाहता हूँ
वहाँ कोई भी वाहन अब मुझे नहीं ले जा सकता,
वहाँ तो एक स्थान पर ही स्थिर बैठकर
जाया जा सकता है।
अपने आप में पैठकर ही कुछ पाया जा सकता है।[3]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : प्रस्तावना : गुलाब खण्डेलवाल, पृ0 132.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली'' : द्वितीय खण्ड : 188 वां मुक्तक : पृ0 141.
3. वही : 27 वां मुक्तक : पृ0 143.

अधिकांश मुक्तकों में, जगत में रहते हुये, अन्तर्यात्रा की चर्चा सरसता से की गयी है। ऐसा नहीं है कि विषय का प्रतिपादन नीरस हो गया है। विषय-वस्तु देखने में लघु है किन्तु उसे व्यापकता से अन्तरित किया गया है।

अन्य काव्य (बारह) 'एक चन्द्र-बिंब ठहरा हुआ' :

'गुलाब-ग्रन्थावली' (द्वितीय खण्ड) में संग्रहीत किये जानेवाली दूसरी रचना 'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ'[1] श्री गुलाब खण्डेलवाल की 70 छोटे-बड़े मुक्तकों ('सूर्यास्त के पूर्व' की भाँति) की कृति है। इसे न तो किसी को समर्पित ही किया गया है और न इसकी किसी के द्वारा भूमिका या प्रस्तावना ही लिखी गयी है।

'एक चन्द्र-बिंब ठहरा हुआ' की विषय-वस्तु :

'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ' का कथ्य 'सूर्यस्त के पूर्व' की भाँति गम्भीर है। लेकिन इस संकलन की रचनाएँ अध्यात्म, दर्शन और साधना से सम्बन्धित न होकर प्रेमिल सम्बन्धों को रेखांकित करती हैं। प्रेम में स्थायित्व होता है। इस सत्य से ही ये रचनाएँ प्रारम्भ होती हैं -

उम्र की बहती हुयी नदी में हमारा प्रेम
चन्द्रबिंब की भाँति ठहरा हुआ लगता है।[2]

स्वर्ग अतीन्द्रिय लोक में नहीं है बल्कि यहाँ भी है। एक विषय को उठाता हुआ कवि अनेक मुक्तक में रूप-सौन्दर्य, नर-नारी-सम्बन्ध, प्रेम, मनुहार, संयोग-वियोग, सन्तोष-असन्तोष के अनेक बिम्ब उकेरता है। चारों ओर फैले जनाकीर्ण और प्राकृतिक परिवेश में वह अपने लिये विविध विषय चुनता है और मुक्तकों की दुनिया रचता चलता है। छोटी-छोटी रचनाओं में विषयवस्तु के रूप में अनेक अनुभूत सत्य हैं। प्राणतत्व की भाँति इस संग्रह के कलेवर में प्रेम

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : 'एक चन्द्र बिंब ठहरा हुआ', पृ0 171-193 तक संग्रहीत : प्रकाशक - कमल प्रकाशन, 105, मकंद्रूगंज, प्रतापगढ़।
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पहला मुक्तक : पृ0 171.

रमा हुआ है -

प्रेम त्याग की कसौटी है,
बलिदान की भाषा है,
सच पूछिये तो
यह प्रेमास्पद पर सब कुछ लुटा देने की अभिलाषा है।[1]

संकलन की अन्तिम रचनाओं में कवि ने विषय-वस्तु के रूप में कविता का प्रतिपाद्य, कविता की भाषा, नाम की सार्थकता जैसे विषयों को भी कथ्य के रूप में चुना है। नारी के विषय पर भी कवि ने लेखनी चलायी है, यथा -

नारी एक ऐसा गीत है
जिसकी धुन हर बार बदल गयी लगती है
जिसका अर्थ प्रत्येक आवृत्ति में
पहले से भिन्न दिखाई देता है
जिसकी रसानुभूति हर बार नयी लगती है
('गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 191.)

अन्य रचना (चौदह) 'राजराजेश्वर अशोक' :

'राजराजेश्वर अशोक'[2] श्री गुलाब खण्डेलवाल का गद्य में लिखा गया ऐतिहासिक नाटक है। यह नाटक मात्र 104 पृष्ठों का है। इसकी भूमिका श्री सीताराम चतुर्वेदी ने लिखी है और इसका समर्पण समाज और साहित्य के गौरव श्री रामेश्वर जी टाँटिया की पुण्य स्मृति में किया गया है। आत्म-निवेदन करते हुये श्री गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा है - 'प्रस्तुत नाटक की रचना आज से प्रायः बीस वर्ष पूर्व हुई थी। इसमें अशोक के पूर्व जीवन से लेकर कलिंग युद्ध के कारण उसके हृदय-परिवर्तन तक की गाथा का चित्रण है। मैं इतिहास का विशेषज्ञ नहीं हूँ। मैंने तो उसका उपयोग अपनी कृति का कच्चा माल जुटाने के लिये किया है। भावनाओं का परिष्कार ही मेरा लक्ष्य है।[3] इस स्पष्टवादिता की

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : अड़तालीसवां मुक्तक : पृ0 186.
2. 'राजराजेश्वर अशोक': प्रथम संस्करण : 1978 ई0 : गुलाब खण्डेलवाल
3. 'राजराजेश्वर अशोक': आत्म-निवेदन : गुलाब खण्डेलवाल।

श्री सीताराम चतुर्वेदी ने प्रशंसा करते हुये लिखा है-- 'लेखक ने इतिहास की अनभिज्ञता स्वीकार करके अपनी दुर्बलता को विनय के साथ प्रकट करने की उदारता प्रदर्शित की है किंतु यह दुर्बलता नहीं, यही सबलता हैं। जो नाटककार या कवि ऐतिहासिक व्यक्तियों या घटनाओं को पूर्णतः ऐतिहासिक बनाने के प्रयत्नों में लीन रहते हैं वे न तो नाटक लिख पाते हैं न काव्य, वरन वे इतिहास लिखते हैं और इतिहास लेखन की पद्धति न जानने या उसका अनुगमन भली प्रकार न कर पा सकने पर वह इतिहास भी नहीं बन पाता, वह भानुमती का कुनबा रह जाता है। इस प्रकार के जितने प्रयास विश्व भर में किये गये, वे सब असफल रहें। किंतु जब नाटककार केवल एक विश्रुत चरित्र या घटना को आधार मानकर लोकवृत्ति का परिष्कार करने की उदात्त भावना से समाज द्वारा मान्य व्यक्तिगत और सामाजिक उत्कर्ष के गुणों से अपने नायक को अलंकृत करके उसके असामान्य तेज को अनेक सम-विषम परिसिथतियों में तपाकर उसको ज्वलंत रूप से श्रद्धेय, आदरणीय, पूज्य और अनुकरणीय बना देता है तब उसके अलौकिक चरित्र से सामाजिक का जो विभावन-संस्कार होता है वही नाटक का वास्तविक प्रतिपाद्य है। लेखक ने इस नाटक में इसी पद्धति का अनुसरण किया है।'

अशोक का जीवन नाना प्रकार की विसंगतियों से भरा हुआ है जिसे इस नाटक में बड़ी कुशलता से चित्रित किया गया है।

'राजराजेश्वर अशोक' की विषय-वस्तु :

प्रस्तुत नाटक की विषय-वस्तु इतिहास, शिलालेखों, बौद्ध-ग्रन्थों और संस्कृत तथा हिन्दी के साहित्यिक ग्रन्थों से चुनी गयी है। ऐतिहासिक, अर्द्ध ऐतिहासिक तथा काल्पनिक पात्रों को लेकर नाटक का कलेवर तैयार किया गया है। सम्पूर्ण नाटक तीन अंकों में विभक्त है। प्रथम अंक में दृश्य-संख्या चार, द्वितीय अंक में दृश्य-संख्या-चार और तृतीय अंक में दृश्य-संख्या पाँच हैं। पुरुष एवं स्त्री पात्रों की संख्या 21 है। नाटककार ने अशोक के जीवन को, परिवेश के साथ परिविर्तित होती उसकी आकांक्षाओं को, उसकी बाह्य शक्ति और अन्तःशक्ति को प्रस्तुति दी है। अशोक ने अपने मार्ग के सभी कष्टों को

---

1. 'राजराजेश्वर अशोक': भूमिका : श्री सीताराम चतुर्वेदी : पृ0 7.

कैसे हटाया, राजनीति में कैसे सबको लपेट लिया और कलिंग को किस प्रकार विजित किया तथा किस प्रकार उसका हृदय-परिवर्तन हुआ आदि घटनाओं को आधार बनाकर ही इस नाटक की विषयवस्तु तैयार की गयी है। निष्पक्ष परीक्षा करते हुये श्री सीताराम चतुर्वेदी ने लिखा है - 'अंक-योजना, दृश्य-योजना, पात्र-योजना, देश-काल-योजना और उद्देश्य-योजना, सभी दृष्टियों से यह नाटक अभिनेय है।'[1] 'लेखक ने अपने प्रारम्भिक वक्तव्य में ही यह अत्यन्त सटीक सिद्धान्त मान्य किया है कि जिस प्रकार गीत का गुण उसकी गेयता में है, उसी प्रकार नाटक का गुण उसकी अभिनेयता है।'[2] अभिनेयता ही किसी नाटक की वास्तविक कसौटी है।

अन्य रचना (पन्द्रह) 'भूल' नाटक (गद्य) :

बहुज्ञ गुलाब खण्डेलवाल द्वारा रचित 'भूल'[3] हास्य-रस-प्रधान सामाजिक नाटक है। यह भी राजराजेश्वर अशोक की तरह गद्य में लिखी कवि की दूसरी कृति है। इस नाटक की रचना समाज की विसंगतियां को दर्शाने के लिए की गयी है। मात्र 88 पृष्ठों के नाटक का समर्पण जगदीश प्रसाद रींगसिया को किया गया है। लेखकीय वक्तव्य में कवि ने कहा है - 'प्रस्तुत नाटक सन् 1950 ई0 में लिखा गया है। मैं सदैव अपने को काशी की साहित्य-परम्परा में देखता आया हूँ। प्रस्तुत नाटक को भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर बेढब बनारसी के हास्य-नाटकों की परम्परा का ही विकसित रूप समझा जाना चाहिए।'[3]

'भूल' नाटक की विषय-वस्तु :

'भूल' एक सामाजिक नाटक है। इस कोटि की घटना कहीं भी घटित हो सकती है। कवि गुलाब खण्डेलवाल ने जिस घटना को, स्त्री-पुरूष पात्रों को और स्थानों को लिया है, वे सभी काल्पनिक हैं। इस नाटक में आठ प्रमुख

---

1. 'राजराजेश्वर अशोक' : भूमिका : श्री सीताराम चतुर्वेदी : पृ0 9.
2. 'भूल' नाटक द्वितीय सं0 : 1980 ई0: गुलाब खण्डेलवाल : प्रकाशक-कमल प्रकाशन, चौक, प्रतापगढ़।
3. 'भूल'' : लेखकीय : गुलाब खण्डेलवाल।

पुरुष-पात्र और दो प्रमुख नारी-पात्र हैं। सम्पूर्ण नाटक को नौ दृश्यों में लिखा गया है। अभिनय के लिये विशेष साजसज्जा की आवश्यकता नहीं होगी। सुरेश एक मुँहफट इंश्योरेंस ऐजेण्ट है जो अपने ग्राहकों को जहाँ-तहाँ तलाशता रहता है। शिरीष संकोची स्वभाव का नवयुवक है। वह पहली बार ससुराल आता है और भूल से सुरेश के गंतव्य स्थान पर जो उसी महल्ले में है, पहुँच जाता है। उधर दीवान की भूल से सुरेश शिरीष की ससुराल में पहुँच जाता है। भूल पर भूल की श्रृंखला जटिल से जटिलतर होती चली जाती है। बीच में सुरेन्द्र सिंह (शिरीष के श्वसुर) और उनकी पुत्री शारदा तथा मनोहर सिंह (सुरेन्द्र सिंह के पड़ौसी) तथा उनकी पुत्री छाया के माध्यम से कथा विस्तार पाती गयी है। काली शिरीष का नौकर है।

सुरेन्द्र सिंह का दीवान और रमेश (सुरेन्द्र सिंह का बेटा) आदि भी कथानक को विकसित होने में योगदान देते हैं। अन्त में सारा रहस्य खुल जाता है और दोनों को अपनी-अपनी भूल का अहसास हो जाता है।

यदि शिरीष और शारदा का विवाह किशोरावस्था में न हो गया होता और 6,7 वर्ष तक विदा का अवसर न आया होता तो 'भूल' जैसा नाटक नहीं लिखा जा सकता था। बाल-विवाह पर समाज को विचारने के लिए जैसे नाटककार ने बाध्य कर दिया है।

तृतीय अध्याय

गीत-विधा और गुलाब खण्डेलवाल के गीत

-: तृतीय अध्याय :-
गीत-विधा और गुलाब खण्डेलवाल के गीत

साहित्य में गीत एक मात्र ऐसी विधा है जो विश्व की प्रत्येक जाति, क्षेत्र और सभ्य और असभ्य समाज में न्यूनाधिक रूप से पायी जाती है। सुख और दुःख, दोनों स्थितियों में गीत समान रूप से मनुष्य का सहायक रहा है। गेय तत्त्व की प्रधानता के कारण गीत में जीवन्तता है। यद्यपि भारतीय जीवन में आदि काल से ही गीत का साथ रहा है तो भी आज गीत को जिस अर्थ में लिया जा रहा है, वह अंग्रेजी के लिरिक का ही पर्याय है। लिरिक की व्युत्पत्ति लायर (Lyre) नामक बाद्य यंत्र से हुई है जिसके सहारे जिन गीतों का गान होता था, उन्हें लिरिक कहा जाने लगा। हमारे यहाँ 'गीत' शब्द से केवल गाने की क्रिया का बोध होता है उसके साथ किसी वाद्य-विशेष का आश्रय ग्रहण किया जाना आवश्यक नहीं है। गीत शब्द से एक ऐसी रचना का बोध होता है जो लय और गति की दृष्टि से विशिष्ट होती है और जिसमें सरलता के साथ सरसता एवं भावों की गंभीरता अनिवार्य रूप से मिली होती है। सुश्री सरोजिनी मिश्रा ने लिखा है - 'गीत काव्य में व्यक्तिगत सुख-दुखों की सहजानुभूति स्वतः द्रवीभूत होकर रागात्मक होती है। इसमें भावातिरेक का आधिक्य रहता है।'[1] भावातिरेक गीत-काव्य का मूल तत्त्व है। 'साहित्य-विवेचन'[2] में गीत को लेकर कहा गया है - 'मानसिक, बौद्धिक तथा आकार के आधार पर गीत-काव्य, भावात्मक, कल्पनात्मक तथा विचारात्मक होता है।' जब कविता का तत्त्व ही मूल रूप से 'भाव' है तो गीत में उसकी स्वाभाविक रूप से परिणति होनी ही चाहिए।

गीत की परिभाषाएँ :

(1) गीत-काव्य एक ऐसी लघु आकार एवं मुक्तक-शैली में रचित रचना होती है जिसमें कवि निजी अनुभूतियों या किसी एक भाव-दशा का प्रकाशन

---

1. 'साहित्यशास्त्र के सिद्धान्त' : सरोजिनी मिश्रा : पृ0 255.
2. 'साहित्य-विवेचन : क्षेमचन्द्र 'सुमन' : योगेन्द्र कुमार मल्लिक : पृ0 85.

संगीत या लयपूर्ण या कोमल शब्दावली में करता है।[1]

(2) सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था को गिने-चुने शब्दों में स्वर- साधना के उपयुक्त कर देना ही गीत है।[2]

(3) संगीत की माधुरी से परिपूर्ण, आत्मपरक काव्य को गीति-काव्य कहते हैं। इस काव्य में हृदयस्थ मनोभावों को संगीत की सुमधुर लय एवं तान के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। यह अनुभूति-प्रधान होता है और इसमें कोमल कल्पना, ललित भावना और मधुर कला की त्रिवेणी प्रवाहित होती है।[3]

उक्त तीनों परिभाषाओं की समस्त विशेषताएँ डॉ0 नगेन्द्र के शब्दों में समाहित हो जाती हैं - 'गीति-काव्य की आत्मा है भाव जो किसी प्रेरणा से दबकर एक साथ गीति के रूप में फूट निकलता है। स्वभाव से ही उसमें हार्दिकता का तत्त्व वर्तमान रहता है। उसमें एक प्रकार की एकसूत्रता तथा एकता होती है जो समस्त कविता को अन्वित किये रहती है। यह एक सख्त, क्षणिक एवं तीव्र मनोवेग का परिणाम होती है।[4] इस प्रकार गीतिकाव्य की निम्नांकित विशेषताएँ सामने आती हैं--

1. संगीतात्मकता - (कोमल--कान्त पदावली एवं प्रवाहमयता)
2. भावात्मकता - (भाव, कल्पना, सम्वेदनशीलता एवं अनुभूति)
3. मार्मिक अनुभूति - (रागात्मकता, आत्म-निवेदन आदि)[5]
4. वैयक्तिकता - (अभिव्यक्ति में आत्मीयता का प्राधान्य)
5. संक्षिप्तता, सहृदयता और सौन्दर्यमयी कल्पनाशीलता का प्राचुर्य,
6. सरसता एवं प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण।

उक्त विशेषताओं के आधार पर शुक्ल जी के शब्दों में कहा जा सकता है- 'गीतिकाव्य उस नयी कविता का नाम है जिसमें प्रकृति के साधारण-असाधाराण, सब रूपों पर प्रेम-दृष्टि डालकर, उनके रहस्यभरे सच्चे संकेतों को परखकर, भाषा को अधिक चित्रमय, सजीव और मार्मिक रूप देकर कविता

---

1. 'हिन्दी-साहित्य का विकास' : डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त : पृ0 165.
2. 'महादेवी वर्मा का विवेचनात्मक गद्य' : गंगा प्रसाद पाण्डेय : पृ0 141.
3. 'हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि'' - डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना, पृ0 313.
4. 'साहित्य शास्त्र के सिद्धान्त : सरोजिनी मिश्रा : पृ0 255 से उद्धृत।
5. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'' : रामचन्द्र शुक्ल : पृ0 6500.

का अकृत्रिम स्वच्छन्द मार्ग निकाला गया है।' जैसे शुक्ल जी ने गीति की अधिकांश सर्व-सामान्य विशेषताओं को समायोजित कर गीत के स्वरूप को रूपायित किया है, वैसे ही श्री ओझा ने बहुत संक्षेप में अपनी बात कही है- 'जिस काव्य में एक तथ्य या एक भाव के साथ-साथ एक ही निवेदन, एक ही रस और एक ही परिपाटी हो, वह गीति-काव्य है।'[1] निस्सन्देह, गीति-काव्य एकाकी मन का सजल-मुखर रूप है।

गीतिकाव्य का विकास :

गीतिकाव्य का विकास वेदों की विशेषकर सामवेद ही मनोहारिणी ऋचाओं में विद्यमान है। बौद्धों की थेरी गाथाएँ कोमलकान्त पदावली में रची गयी हैं जो आनन्द-स्रोत बहाती हैं। लौकिक संस्कृत साहित्य में जयदेवकृत 'गीत-गोबिन्द' तो मानो गीति-साहित्य का मुकुट-मणि ही है, यथा -

ललित लवंगलता-परिशीलन कोमल मलय समीरे
मधुकर-निकर करंबित कोकिल-कूजित कुंज-कुटीरे

'गीत-गोविन्द' की मनोहारिणी छटा को साहित्य में उतारने का सहज कार्य मैथिली-कोकिल विद्यापति ने किया। विद्यापति हिन्दी के प्रथम श्रेष्ठ गीतकार हैं जिनके गीत आज भी भक्त, हाथों में करताल लेकर गाते हैं और आनन्द-विभोर हो जाते हैं। भले ही विद्यापति के गीतों में राधा और कृष्ण का रूप श्रृंगारिक भावनाओं का उद्दाम वेग समेटे है, लेकिन उनमें आनन्द की नदी प्रवहमान है जिसमें कोई भी गोता लगा सकता है। सन्तकवि कबीर और उनके अनुयायियों ने, गोस्वामी तुलसीदास ने और सूरदास आदि अष्टछाप के कवियों ने गीतों की जो अजस्र धारा प्रवाहित की, उसकी गति रीतिकाल में आकर कुछ मन्द पड़ गयी। यह भी हो सकता है कि कबीर, सूर, तुलसी, मीरा की जैसी ऊँचाइयों का स्पर्श न कर पाने के कारण रीतिकालीन कवि गीत-सृजन का साहस न जुटा सके हों। इसका कारण बताते हुये सरोजिनी मिश्रा ने लिखा है - 'रीति-काल में गीतों की रचना नहीं हुई । उस काल में परिस्थितियाँ गीतों

---

1. 'समीक्षा-शास्त्र' : डॉ0 दशरथ ओझा : पृ0 83.

के बहुत अनुकूल नहीं थी। रीतिबद्ध रचना की लोकप्रियता के कारण गीतिकाव्य को प्रोत्साहन न मिल सका। गीति-काव्य स्वच्छन्द काव्यधारा है। रीतिबद्ध होकर वह फल-फूल नहीं सकता। कविता को बन्धन-विहीन, मुक्त वातावरण और आध्यात्मिक पृष्ठभूमि न मिलने से गीति-काव्य को अवसर नहीं मिल सका।[1]

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य की एक अद्‌भुत घटना हैं। वे आधुनिक हिन्दी-साहित्य के पुरोधा हैं। उन्होंने न केवल ब्रज और खड़ी बोली में गीत लिखे बल्कि उन्होंने नाटकों में भी गीतों का कुशलता से प्रयोग किया है। आगे चलकर नाटकों में गीतों का विकास बड़ी सजगता से हुआ है। प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी, रामकुमार वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', 'दिनकर', नरेन्द्र शर्मा आदि शताधिक कवियों ने गीत-सृजन कर हिन्दी गीत-साहित्य में अभूतपूर्व सृष्टि की है। छायावादी कवियों ने हिन्दी को सर्वाधिक मार्मिक गीत दिये हैं। छायावादी गीतों का प्रतिपाद्य प्रकृति से आत्मीयता, जीवन के विभिन्न रूपों की मीमांसा, लौकिक और अलौकिक मिलन, विछोह, प्रिय का अद्‌भुत सौन्दर्य एवं निष्ठुरता के साथ-साथ गांधीवाद का प्रभाव है। यामा की भूमिका में महादेवी ने लिखा है - 'हिन्दी-काव्य का वर्तमान युग गीत-प्रधान ही कहा जायगा। हमारा व्यस्त और व्यक्ति-प्रधान जीवन हमें गीत के अतिरिक्त काव्य के किसी और अंग की ओर दृष्टिपात् करने का अवसर ही नहीं देना चाहता। आज हमारा हृदय ही हमारे लिये संसार हैं। हम अपनी प्रत्येक साँस का इतिहास लिखना चाहते हैं, अपने प्रत्येक कम्पन को अंकित करने के लिये उत्सुक हैं और प्रत्येक स्वप्न का मूल पा लेने के लिये विकल हैं।[2] वास्तव में वर्तमान काल में हिन्दी के विशिष्ट गीतकारों ने अपने जीवन की समस्त अनुभूतियों को गीतों में उतारने का सतत प्रयत्न किया है।

छायावादी और रहस्यवादी गीतों के पश्चात् प्रगतिवाद का युग आया। डॉ0 प्रेम नारायण शुक्ल ने लिखा है - 'प्रगतिवादी कलाकार के समक्ष केवल एक ही सत्य है - यह मिट्टी-पानी का संसार। संसार तो चिर-गतिमय पदार्थ का उद्‌भव और विकास है। इसमें मानव की निरन्तर क्रिया ही अपना अस्तित्व रखती है, भले ही वह परिवर्तन-क्रम में बँधी हुई हो। ब्रह्म तो एक ढकोसला है। ब्रह्म की संज्ञा के प्रति अविश्वास उस समय और भी बढ़ जाता है जब

---

1. 'साहित्य शास्त्र के सिद्धान्त' : सरोजिनी मिश्रा : पृ0 267.
2. 'यामा' : महादेवी वर्मा : भूमिका : पृ0 12.

भूखे-नंगों का समाज सम्मुख उपस्थित होता है।'[1] प्रगतिवादी कवियों ने क्रान्ति की भावना, रूस का गुणगान, सैद्धान्तिक विवेचन आदि पर विशेष बल दिया है। कविता से भावुकता का, रस, छन्द, अलंकारों का और काव्य-रूढ़ियों का लगभग निष्कासन कर दिया गया है। यथार्थ के धरातल पर आम आदमी की जाग्रति की बात पर इन गीतकारों ने अधिक बल दिया है। यथा -

झोंपड़ी में सो रहा कंकाल का लो हास जागा
लो हृदय से हृदय में रिसता हुआ-सा त्रास जागा
लाश को गतिमय बनाता प्रलय का विश्वास जागा
जर्जरों में वज्र की भर शक्ति नव विश्वास जागा
प्राण लेकर मुट्ठियों में सृष्टि का संहार जागा
विजय लेकर हार में नव सृष्टि का आकार जागा।'[2]

बीसवीं सदी के प्रत्येक दशक में हिन्दी-गीत का रूप बदलता रहा है। रूप में निखार आया है। हिन्दी-कविता की तरह आधुनिक गीत विकृतियों का शिकार नहीं हुआ है।

गीत के रूप :

गीत साहित्य की महत्त्वपूर्ण विधा है। लोक में गीत सबसे अधिक प्रभावशाली है। गीत को दो रूपों में सुगमता से विभाजित किया जा सकता है -- लोकगीत और साहित्यिक गीत। दोनों प्रकार के गीतों में अनेक भेद हैं -- जैसे लोक-गीत संस्कारों, अवसरों, पर्वों, तीर्थों आदि को लेकर रचा गया है तथा साहित्यिक गीत में भावनाओं के विविध रूपों को रूपायित करने के लिये विभिन्न प्रकार के गीतों की रचना की गयी है। गीत-काव्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है -

1. प्रेम-गीत 2. व्यंग्य-गीत
3. धार्मिक गीत 4. शोक-गीत
5. युद्ध-गीत 6. वीर-गीत

---

1. 'हिन्दी-साहित्य में विविधवाद' : प्रेमनारायण शुक्ल : पृ0 287.
2. उदय शंकर भट्ट

7. नृत्य-गीत 8. सामाजिक-गीत
9. उपालम्भ-गीत 10. गीतिनाट्य
11. सम्बोधन-गीत तथा 12 सॉनेट (चतुर्दशपदी-गीत।)

साहित्यिक गीतों के अनेक प्रकार होते हुये भी दो मुख्य हैं - शुद्ध सम्वेदनात्मक और कथाश्रित। साहित्यिक गीतों की व्यापकता आकाश की भाँति सुविस्तृत और सागर की भाँति गम्भीर है। गीतों की चर्चा में उन गीतो की चर्चा भी अपेक्षित है जो प्रबन्ध-काव्यों (महाकाव्य और खण्डकाव्य) के बीच में लिखे गये हैं। यद्यपि गीत शुद्ध रूप से मुक्तक-काव्य के अन्तर्गत हैं तथापि कवियों ने अपनी सामर्थ्य से कथात्मक रूप में भी गीतों की रचना की है और सफल भी हुए हैं।

गुलाब खण्डेलवाल के गीत :

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल उन गीतकारों में से नहीं हैं जिन्होंने दो-चार गीत लिखकर हिन्दुस्तान के कवि-सम्मेलन पीट लिये हैं अथवा किसी विशिष्ट पत्रिका में छपकर गीतकार होने का प्रमाणपत्र अर्जित कर लिया है। श्री गुलाब खण्डेलवाल तो ऐसे गीतकार हैं जिन्होंने गीत-परम्परा में कुछ नया जोड़ दिया है, गीत की धारा को नये-नये घाट दिये हैं और यश की आकांक्षा को एक ओर रखते हुए, साधना करते हुये साध्य, गीत तक पहुँचे हैं। यही कारण है कि उनके गीत जीवन की अनुभूतियों की देन हैं और वे प्रभावशाली बन सके हैं। श्री गुलाब जी की यह अपनी विशेषता है कि उन्होंने काव्य की जिस प्रचलित और अपरिचित विधा का स्पर्श किया है उसे बारहबानी सोना बना दिया है। 'नूपुरबँधे चरण' की 'प्रस्तावना' लिखते हुये श्री नथमल केडिया ने लिखा है - 'वैसे श्री गुलाब जी का काव्य पर श्लाघनीय अधिकार है। उन्होंने प्रस्तुत काव्य-पुस्तक में भी विविध प्रकार की विधाओं का सफल प्रयोग किया है। इनमें से कुछ विधाएँ अन्य भाषाओं में तो प्रतिष्ठित हैं पर इन्होंने प्रथम बार इनसे हिन्दी का अभिषेक किया है - जैसे 'कुम्हार वाला के प्रति' सम्बोध-गीत जो अंग्रेजी में ओड (ode) के नाम से जाना जाता है तथा गाथा-काव्य (Lyrical fallad) एवं प्रतीक-काव्य (Allegary) जिनका प्रयोग क्रमशः 'जादू का देश' एवं 'मृगतृष्णा' नामक कविताओं में किया गया है। ये सब अंग्रेजी साहित्य की सुपरिचित विधाएँ हैं। इनके अतिरिक्त 'गड़ेरिये के गीत' और 'हवा का

राजकुमार' जैसे काव्य-प्रयोग अपनी मौलिकता में अनूठे हैं और अन्य भाषाओं के साहित्य में भी ऐसे प्रयोग देखने में नहीं आते।[1] श्री गुलाब जी ने प्रतिपग रचनाधर्मिता का सफल निर्वाह करते हुये मौलिकता के नूतनतम आयामों का परिचय दिया है।

जिस रचनाधर्मी में जितनी अनुभूतियों की सघनता होगी और कल्पनाशीलता से तलस्पर्शी बुद्धि होगी उसकी रचना उतनी ही प्रभावशाली होगी। श्री गुलाब जी ने अपने जीवन को ही गहराई से नहीं देखा है बल्कि समाज में विद्यमान अन्य वर्गों का जीवन भी बड़ी सहज गम्भीरता से देखा है जिसकी सजग अभिव्यक्ति उनके गीतों तथा अन्य रचनाओं में हुई है। बड़ी स्पष्ट-सी बात है कि कोई बात हृदय से कही जायगी तो हृदय को - सहृदय को अवश्य प्रभावित करेगी। गीत में जब सहज बोधव्यता और सम्वेदनशीलता का संचार हो रहा होता है तब गीत स्वतः ही अधरों पर थिरकने लगता है, जैसे -

गीत बनकर ही अधर के पास आना चाहता हूँ
मैं तुम्हारे प्राण का उच्छ्वास पाना चाहता हूँ
माधवी वन के रसीले प्रात टटके फूल जैसे,
प्रीति के अंकुर, कहाँ सोये शिथिल भुजमूल ऐसे !
मैं इन्हीमें मृदु पुलक-मधुमास लाना चाहता हूँ
स्वप्न बनकर ही पलक के पास आना चाहता हूँ।'[2]

इस कोटि के शताधिक ऐसे गीत हैं जो पढ़ते-पढ़ते न केवल मन-मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं बल्कि गुनगुनाने के लिये भी जिनकी पंक्तियाँ बाध्य करती हैं और पाठक स्वयं सम्वेदनशील हो उठता है।

उक्त गीत तो वियोग श्रृंगार का है। यह वियोग की अवस्था श्रृंगार के क्षेत्र में ही नहीं, अध्यात्म में, भक्ति की आतुरता में भी हो सकती है। यह आतुरता तीव्र लगन मानी जायगी। जैसे कोई साधक साधना में संलग्न है लेकिन कुण्डलिनी का साक्षात नहीं हो पा रहा है-- मन की ऐसी विह्वलता, अस्थिरता, चिन्ता और प्रेरणापरक अनुनय-विनय की भावना को बहुत ही सरल शब्दों में

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 105-106.
2. गुलाब-ग्रन्थावली : पृ0 153.

गुलाब जी जैसा कवि एक ही गीत में व्यक्त कर देता है। प्रस्तुत गीत की भाषा अत्यन्त सरल लेकिन विषय परम निगूढ़ है। गीत इस प्रकार है -

तीर तो तान-तानकर मारे
शून्य भी बेध दे कभी, प्यारे !
काल की कुण्डली उलट जाये
यह घना अंधकार फट जाये
लक्ष्य कुछ और हो निकट जाये
सब जिसे ढूँढ-ढूँढ़ कर हारे।
प्रश्न है व्यर्थ, कल रहूँ कि नहीं,
बस यही पूछ, 'आज हूँ कि नहीं',
पूछ उससे कि है भी तू कि नहीं,
चाँद तारे हैं आप ही सारे ![1]

प्रकृति के अन्तः-बाह्य रूपों को लेकर, स्थूल और सूक्ष्म रूप के अद्भूत सौन्दर्य को लेकर, नर-नारी-सम्बन्धों को लेकर, आत्मा-परमात्मा-माया और ज्ञान को लेकर, पौराणिक और ऐतिहासिक संदर्भित सम्बन्धों को लेकर, भक्ति-योग की आध्यात्मिक चेतना को लेकर, जीवन के सांसारिक अनुभवों को लेकर तथा प्रभावी चरित्रों तथा आत्मीय जनों को लेकर गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने कई ऐसे गीतों की रचना की है। यही कारण है कि गुलाब जी के गीत, रूप, विषय-वस्तु, शैली आदि की दृष्टि से कई प्रकार के बन पड़े हैं। गीतों में जिस गम्भीरता, आत्मीयता और पदलालित्य की अपेक्षा होती है वह गुलाब जी के गीतों में विद्यमान है। जीवन सभी जीते हैं और जीवन को सभी अपनी-अपनी दृष्टि से देखते भी हैं, पर गुलाब जी ने जीवन ही नही आत्म-तत्त्व को भी उसी गम्भीरता से देखा है। उनका कहना है -

जीवन तो केवल प्रवाह है
सलिल नहीं है, यह न लहर है
झंझा नही, न बुद्बुद भर है
इन सबसे जो हुई मुखर है
एक सतत् अव्यक्त चाह है

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 317.

यह जो मैं निज 'मैं' से चिपटा
यह भी एक वसन है लिपटा
इस छोटे से तन में सिमटा
महासिन्धु अविगत, अथाह है
जीवन तो केवल प्रवाह है[1]

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने अपने साहित्यिक जीवन में सबसे अधिक समय गीत-रचना को दिया है। इस व्यापकता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि कवि के प्रथम संग्रह 'कविता' से लेकर वर्तमान तक अनेक कृतियाँ ऐसी हैं जिनमें गीत या गीत और कविताओं का ही संग्रह है तथा वर्तमान तक गीतों के संग्रह प्रकाशित होते चले आ रहे हैं जबकि अन्य साहित्यक विधाओं की नदियाँ उमड़ीं और किसी दूसरी धारा में समायोजित हो गयी हैं। गुलाब जी के गीतों का आकाश व्यापक और अनन्तधर्मी है।

(ख) गीत-संरचना और गुलाब खण्डेलवाल के गीत :

एक चरण या पंक्ति को आधार या टेक बनाकर ऐसे पद्य की रचना गीति कहलाती है जो लयबद्ध हो। ऐसी रचनाओं में भी, जहाँ अत्यन्त उच्चकोटि की सहृदयता भावों की उच्चतम अभिव्यक्ति पाती है तो गीत की रचना होती है। स्वर, लय, और ताल के विशिष्ट आरोह और अवरोह के नियमित बन्धन से राग और रागिनियों की रचना होती है जिसमें संगीतात्मकता अनिवार्य तत्त्व है। कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि के गीत पद कहलाते हैं क्योंकि उनमें साहित्यिकता के साथ-साथ संगीत-तत्त्व का भी पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। आधुनिक युग के गीतकारों ने संगीत तत्त्व की ओर नहीं, लयबद्धता की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया। वह बात दूसरी है कि संगीत ने इन गीतों को भी संगीत की दुनिया में रमा दिया है। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने भी कुछ ऐसे ही गीतों की रचना की है।

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी: पृ0 374-375.

गीत की रचना करने से पूर्व कवि अपना ध्यान किसी भाव, विचार, रूप, दृश्य आदि पर केन्द्रित करता है और फिर दो से अधिक बन्धों में गीत की रचना करता है। रचना-विधान कुछ इस प्रकार होता है - प्रथम चरण या पंक्ति आधार होती है जो भाव को केन्द्रित करती है। फिर बन्ध को रचना में विस्तार देने के लिए रचा जाता है। एक भाव की पूर्णता के लिये आधार-पंक्ति के तारतम्य में ही उसी तुकान्त में प्रत्येक बंध की टेक की पंक्ति को बाँधा जाता है। बन्ध जितना सशक्त होगा, गीत उतना ही प्रभावशाली बनेगा। गीत की प्रत्येक लय को यदि बीस बार गुनगुनाया जाता है तो कम से कम चार-पाँच बार में शब्दों की संगति बैठायी जाती है। एक उदाहरण देखिए-

चाँद से रूठ गयी चाँदनी।
रश्मि रेशमी घूँघट काढ़े,
मूर्तित नभ-गवाक्ष के आड़े
कातर भुज-बन्धन में गाढ़े,
मुड़ती-सी प्रतिकार कर उठी नयी-नयी चाँदनी
नखत पुतलियाँ फिरा मोह-सी,
भौंह चढ़ाकर स्वरारोह-सी,
दूर हटी उर से विछोह-सी,
अरुण वसन्तलता-सी दीपित रोषमयी चाँदनी
उमड़ा नील नयन से सागर,
क्षमा माँगते-से अधरा धर
झुके यदपि चरणों में कातर,
मूक चली ही गयी वक्ष-कम्पित विजयी चाँदनी
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 61)

'चाँद से रूठ गयी चाँदनी' गीत की यही प्रथम पंक्ति आधार या टेक है जिसका उपयोग प्रत्येक बन्ध के बाद भावों को एकसूत्रता में बाँधे रखने के लिये किया गया है। 'गयी' शब्द तुकान्त है। इसीके समोच्चारक शब्द गयी, नयी, रोषमयी, विजयी हैं जिनका प्रयोग सार्थकता तथा प्रभावशीलता के लिये किया गया है। गीत के लिये यह अनिवार्य तत्त्व है। कुछ गीतकार आधार या टेक के लिये दो-दो पंक्तियाँ भी रखते हैं लेकिन गाते समय उनमें से प्रथम या द्वितीय पंक्ति का ही प्रयोग करते हैं। एक गीत की प्रथम दो पंक्तियाँ आधार या टेक

के रूप में देखिए -

अब कहाँ बसेरा अपना !
धीरे-धीरे लघु होता जाता है घेरा अपना।[1]

'बसेरा', 'घेरा' तुकान्त हैं। इन्हीं जैसे समोच्चारक शब्दों को लेकर गीत बाँधा गया है।

'रश्मि रेशमी -------- में गाढ़े' तक की तीन पंक्तियाँ, 'काढ़े, आड़े गाढ़े', तुकान्तों से बँधी हैं, गीत में तीन या चार या इससे कम या अधिक वाला अंश बंध कहलाता है। बंध की संख्या के लिये कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यह इच्छा और सामर्थ्य पर बहुत कुछ निर्भर करता है।

'मुड़ती-सी --------- नयी-नयी चाँदनी' आधार या टेक के समकक्ष पहुँचानेवाली पंक्ति है। इस पंक्ति के साथ ही एक बन्ध पूरा होता है। इसी क्रम से, कम से कम दो बन्ध होते हैं, आगे बन्धों की संख्या आठ-दस तक भी हो सकती है।

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने गीतों की रचना, परम्परागत और मौलिक, दोनों प्रकार की शैलियों में की है। कुछ गीत परम्परागत पद-शैली में रचे गये हैं तो कुछ गीत छायावादी शैली में रचे गये हैं। ज्यो-ज्यों कवि कवित्व की सीढ़ियों पर चढ़ता गया है त्यों-त्यों गीतों में कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टि से निखार आता गया है। गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने अनेक प्रकार के गीत लिखे हैं। साहित्य-शास्त्र में गीतों का जो विभाजन किया गया है, हम उनमें से अधिकांश गीत-रूपों के उदाहरण गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीत-साहित्य से दे रहे हैं -

प्रेम-गीत :

श्री गुलाब खण्डेलवाल के प्रेम-गीत दो प्रकार के हैं - संयोग-शृंगार-सम्बन्धी और वियोग-शृंगार-सम्बन्धी।

संयोग-श्रृंगार-प्रधान गीत -

तुम्हारे रूप-मधुवन में, समीरन मैं बनूँ तो क्या !

---

1. कितने जीवन कितनी बार' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 449.

तुम्हारी आँख में अंजन, निरंजन मैं बनूँ तो क्या !
मलय की साँस पीने दो,
कली के ओंठ सीने दो,
पलक की छाँह में मुझको
न मरने दो, न जीने दो
तुम्हारी चाह के धन में, अकिंचन मैं बनूँ तो क्या !
तुम्हारे रूप-मधुवन में, समीरन मैं बनूँ तो क्या।[1]

वियोग-श्रृंगार-प्रधान गीत -

नभ में तारे भी न रहे।
अपनी सुख-दुख कथा सुनाता,
मैं जिनसे था जी बहलाता,
वे आश्वासन देनेवाले, चित्र हमारे भी न रहे।
किसके आगे रोऊँ-गाऊँ !
किससे रूठूँ, किसे मनाऊँ !
असफल हृदय, हाय ! अब किससे अपने मन की व्यथा कहे ![2]

व्यंग्य-गीत :

साहित्य में व्यंग्य-गीतों की अधिकता नहीं है जबकि ये गीत-साहित्य और जाति की सजीवता के परिचायक होते हैं। श्री गुलाब ने भी व्यंग्य-गीत लिखे हैं, जैसे-

प्रभो ! अच्छा पत्नीव्रत पाला !
धोबी के ही कहे प्रिया को निर्वासन दे डाला !
बजवा सत्य-न्याय का डंका,
जिसके लिए विजय की लंका,

---

1. गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी: पृ0 152
2. 'कविता' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 31.

उसी सती को करके शंका,
घर से तुरत निकाला ![2]

धार्मिक गीत :

भारत ही नही, मनुष्य मात्र धर्म के प्रति अतिशय श्रद्धालु है। इस श्रद्धा में ज्ञान और विज्ञान के प्रभाव से न्यूनाधिक्य हो सकता है। धार्मिक गीतों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। उत्सवों या संस्कारों के समय गाये जानेवाले गीत आध्यात्मिक विरह-मिलन के तथा रहस्यवादी गीतों के अन्तर्गत ग्रहीत किये जाते हैं।[2] श्री गुलाब खण्डेलवाल के गीतों में इस मान्यता के अनेक गीत हैं, जैसे -

मेरे मधुर चाँदनी के गीत
तारकों में वज रहा यह मिलन का संगीत
जगमगाती देह छवि से, वयस का उल्लास है यह,
है न ज्योतित गेह रवि से, नख-नखत का हास है यह,
हो गया जो स्नेह कवि से, चार दिन का वास है यह,
एक की होकर रहे क्यों विश्व का मन जीत !
मेरे मधुर चाँदनी के गीत।[2]

शोक-गीत :

शोकगीत लिखने की परम्परा आधुनिक युग में अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव की देन है। महात्मा गांधी, कवीन्द्र रवीन्द्र, मदन मोहन मालवीय, पं0 नेहरू आदि महापुरुषों के निधन पर हिन्दी में पाश्चात्य मान्यताओं के आधार पर अनेक शोक-गीत लिखे गये हैं। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अनेक शोक-गीत लिखे हैं, जैसे - अपनी मातामही की मृत्यु पर लिखा शोक-गीत --

आज जर्जर तरुशाखा टूटी
कई वसन्त पूर्व ही अब से,
नाता तोड़ चुकी थी सब से,

---

1. 'सीता-वनवास': गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 40.
2. चाँदनी : गुलाब खण्डेलवाल।

नीरस, शुष्क खड़ी थी कब से
काल-चक्र से लूटी।'[1]

सॉनेट अथवा चतुर्दशपदी (गीत का एक रूप) नामक अंग्रेजी छंद का हिंदी में प्रयोग करके श्री गुलाब ने 46 सॉनेटों के रूप में शोक-गीतों की एक पूरी पुस्तक रच डाली है जो साहित्य के इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। वास्तव में कवि ने गाँधी जी को इन सॉनेटों द्वारा एक अनूठी श्रद्धांजलि अर्पित की है।'[2]

वीर-गीत और युद्ध-गीत :

युद्ध, शान्ति और प्रेम नामक तीनों तत्त्व वीर पुरुषों के चिर-अभिलषित हैं। किसी महत् कार्य की सिद्धि के लिये युद्ध भी हो सकता है। युद्ध-वर्णन हो अथवा वीरों को प्रेरणा देकर युद्ध के लिए चलने का आह्वान किया जा रहा हो, इस प्रकार के भाव जिन गीतों में भरे गये हैं वे वीरगीत कहलाते हैं। श्री गुलाब खंडेलवाल की, 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' नामक पुस्तक ऐसे ही गीतों का संकलन है जो उन्होंने 1962 में चीन के आक्रमण के समय लिखे थे ओर जो वीरकाव्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। एक प्रेरणापरक प्रयाण-गीत देखिए -

मुकुट नगाधिराज का, झुका तनिक सँभाल दो
बढ़ो कि शत्रु को स्वदेश से निकाल दो
बढ़ो कि आज मोड़नी, तुम्हें लहर अनन्त की,
बढ़ो कि आज तोड़नी अनी दिगन्त-दन्त की,
बढ़ो कि आज काटनी किरण मदांध राहु
बढ़ो कि आज छाँटनी भुजा सहस्रबाहु की
बढ़ो कि आज रावणी, कलंक मेटना तुम्हें,
बढ़ो कि आज कुम्भकर्ण को समेटना तुम्हें
खड़ी महिष-विमर्दिनी, नवीन मुण्डमाल को
बढ़ो कि आज अस्थि से नवीन वज्र ढाल दो।[3]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 157.
2. 'साहित्य-विवेचन' : क्षेमचन्द्र 'सुमन' तथा योगेन्द्र मल्लिक : पृ0 86.
3. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 9-10.

ऐसे गीतों की भाषा अत्यन्त ओजमयी होती है। भाव-पर्वतीय नदी की भाँति प्रवहमान होते है जिसमें सब कुछ बहता चलता है। युद्ध-गीत, वीर-गीत का अग्रिम चरण है। दोनों के बीच में विभाजक रेखा खींचना सहज नहीं है। गुलाब जी के एक गीत की कुछ पंक्तियाँ देखिये -

अंगद पग धर हुए हमारे सैनिक खड़े पहाड़ पर,
पार हिमालय के कूदें जो पल में अभी दहाड़-कर,
बढ़ते बिना विराम, तिरंगे ध्वज पेकिंग तक गाड़कर,
इस चीनी अजगर के रख दें सारे दाँत उखाड़कर,
जिनके साहस, शक्ति, शौर्य पर जननी तन-मन वारती
आज हिमालय के शिखरों से स्वतंत्रता ललकारती
शीश चढ़ा दे जो स्वदेश पर, वही उतारे आरती।[1]

भक्ति या वन्दना-गीत :

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने भक्ति या वन्दना-सम्बन्धी गीत भी लिखे हैं। इन गीतों में अपने आराध्य या इष्ट से मंगलमय कल्याण की याचना की जाती है। सांसारिक सुखों को त्यागने या आराध्य को इच्छानुसार पाने या उससे मिलने की याचना की जाती है, यथा -

(1) **आया चरण-शरण में बेसुध, थककर चारों ओर से**
दिन-दिन दुर्बल मन यह बाँधों, प्रभु ! करुणा की डोर से
बाहर से जैसा भी कर दो
किंतु प्रेम से अंतर भर दो
अपनी वह अनुभूति अमर दो
जिससे जरा-मरण-भय छूटे भीत दृगों की कोर से

(2) **सहारा देते रहो निरंतर**
प्रतिपल भाग रहे मन के अश्वों की रास पकड़कर
अंग-अंग दुख रहे हमारे
अविरत काल-शरों के मारे

---

1. 'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 7.

कौन शरण अब सिवा तुम्हारे !
हे करुणा के सागर !

वाणी-वन्दना, भारत-वन्दना, जननी-वन्दना आदि इस प्रकार के जितने गीत हैं सभी भक्तिगीतों में गिने जायेंगे। गुलाब जी ने परम सत्ता के प्रति अपनी भक्ति 'सब कुछ कृष्णार्पणम्', 'हम तो गाकर मुक्त हुए' , 'कितने जीवन' कितनी बार', तथा 'हमने नाव सिंधु में छोड़ी' आदि पुस्तकों में जितने गीतों में निवेदित की है वह उन्हें हिंदी के भक्तकवियों में भी विशिष्ट स्थान पाने का अधिकारी बनाती है।

प्रकृति-सम्बन्धी गीत :

आधुनिक कवियों ने प्रकृति के विभिन्न रूपों को अनेक प्रकार से अपने काव्य, मुक्तक एवं प्रबन्ध में, प्रकृति के मनोरम रूपों को आलम्बन, उद्दीपन, प्रेरक, शिक्षिका आदि विभिन्न रूपों में चित्रित किया है। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने ऐसे शताधिक गीतों की रचना की है। 'चाँदनी' के समस्त गीत केवल चाँदनी को ही लेकर लिखे गये हैं। एक गीत की कुछ पंक्तियों का रसास्वादन कीजिए -

चाँदनी तू आयी किस देश
दुग्ध-दृष्टि-सी दृष्टि-पुंज में
मुग्धा ग्वालिनि ! सजी गुंज में
फिरती नील करील कुंज में
गौर वदन, शशि-बिन्दु भाल पर, कालिन्दी-से केश।[1]

ऋतु (सम्बन्धी), प्रभात, संध्या, रात्रि, दिन, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि को लेकर जो काव्य (गीत) रचा जाता है उसे भी प्रकृति-सम्बन्धी गीतों के अन्तर्गत माना जाता है। वर्षाकाल की एक संध्या को लेकर लिखा गया गीत दृष्टव्य है -

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली': प्रथम खण्ड: सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी: पृ0 56.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 56.

पावस की यह संध्या उदास
बिखरी तृण-तरु, कलि-कुसुमों में,
झाड़ी-झुरमुट के आसपास
दो विहग तिमिर में निस्प्रभ-से,
उड़-उड़कर मुड़ आते नभ से,
दिग्वधुएँ करतीं मंद-हास।[1]

कविवर गुलाब की रचनाधार्मिता ने छायावादी-रहस्यवादी संस्कारों से संस्कारित परिवेश में जन्म लिया है अतः उन्होंने प्रकृति को कभी प्रेमिका, कभी सुन्दरी और कभी अभिसारिका के रूप में देखा है। प्रकृति के रूपों पर मानवीकरण करना तो उनके लिए साधारण-सी बात है, जैसे -

चली संध्याभिसारिका,
किरण के गूँथ स्वर्ग-कच-जाल,
तिमिर अंजन नयनों में डाल
इन्दु-मुख, अरुण बिन्दु रच भाल
प्राप्त वय, चिर-कुमारिका,
मेघ-छाया तनु-छवि सुकुमार,
गले खगमाला धनुषाकार,
गुंजरित चरण महावरदार,
कर्ण में फूल तारिका।[2]

सामाजिक गीत :

समाज की व्यथा-कथा को लेकर भी कवियों ने गीतों की रचना की है। प्रगतिवादी सन्दर्भों को लेकर गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने अनेक सामाजिक गीतों की रचना की है। जैसे--समाज के विधाता के प्रति हम सब कृतज्ञ हों, क्योंकि यह धरती सभी की है -

सबल की न धनवान की,

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली': पृ0 79.
2. वही : पृ0 165.

धरती है भगवान की,
जैसे मुक्त समीर है,
ज्यों सरिता का नीर है
आतप और प्रकाश है,
जैसे नीलाकाश है,
वैसे ही हर प्राण की।[1]

आज के युग में सर्वत्र जाग्रति का जयघोष है और आदमी कर्म में संलग्न है। कवि इस भाव को वाणी देता है -

अम्बर तक जय घोष छा रहा, पावन पूजन-बेला है,
आज धरा माँ के मन्दिर में भू-पुत्रों का मेला है।
('गुलाब-ग्रंथावली' : प्रथम खण्ड : पृ0 16)

सम्बोधन-गीत :

नाविक का गीत, गड़ेरिया का गीत, चरवाहे का गीत आदि के रूप में हिन्दी में जो गीत लिखे गये हैं, उन्हें सम्बोधन-गीत कहते हैं। इस कोटि के गीत-लेखन की परम्परा अंग्रेजी साहित्य की देन है। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने भी सम्बोधन-गीत लिखे हैं। जैसे -

एक कुम्हारा बाला के प्रति-

मिट्टी का आँगन, मिट्टी का घर, मिट्टी की चाकी
मिट्टीसनी कर्मरत करतलियाँ, मेंहदी से आँकी
अभी पूर्ण युवती कहलाने में कुछ दिन हैं बाकी
क्या गढ़ती है मिट्टी से तू , ओ बालिके कला की !![2]

सॉनेट :

सॉनेट अंग्रेजी में बहुचर्चित छन्द है जिसे हिन्दी-साहित्य में गीत के एक रूप में स्वीकृत एवं प्रयुक्त किया गया है। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने हिन्दी में सर्वप्रथम साधिकार सॉनेट लिखे हैं। 'सीपी-रचित रेत' में 57 सॉनेट तथा 'गांधी-भारती' में 46 सॉनेट हैं। यहाँ एक सॉनेट का रसास्वादन कराया जा रहा है।

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 113.
2. वही पृ0 65.

जब न रहूँगा मैं तब भी तुम हँसा करोगी इसी प्रकार
समवयस्क मित्रों में ? या चुपचाप किसी कोने में बैठ,
बस बरसाती हुई दृगों से सावन-भादों की-सी धार,
चिर-निर्धूम वर्तिका-सी, प्रिय ! जल जाओगी निज में ऐंठ ?
मधुर गीत, अभिनय, रस, व्यंजन, सब अपने गुण देंगे छोड़ !
कंचन स्वयं अकिंचन होगा ! या जीवन-धारा में दीन
कुछ दिन बहती हुयी कली-सी तट की शोभा से मुँह मोड़,
पुनः पूर्व-सी शत कार्यों में स्मित-मुख हो जाओगी लीन
अनुदिन करुण, तरुण चरणों में निज प्राणों का स्नेह उड़ेल
पुनः तुम्हें प्रज्ज्वलित प्रदीप-शिखा-सी भुजपाशों के बीच
कस लेगा बरबस कोई ? फिर से नव यही रचोगी खेल
मान, अश्रु, मनुहार, मोह के, मद से तिर्यक भौंहें खींच !
नहीं रिक्तता टिक पाती है सरि-जल में पल भर को भी
रिक्त रह सकेगा नारी का हृदय, प्रणय-मधु का लोभी ?[1]

उक्त गीतों के अतिरिक्त गीतकार गुलाब ने हिन्दी-भक्ति-काल और रीतिकाल के पद-शैलीवाले गीत भी रचे हैं। विषयवस्तु भले ही परिवर्तित हो लेकिन कवि पद-शैली को आगे बढाने में सर्वथा समर्थ है, यथा -

पंथ अगम, निशि भारी।
एक-एककर चले गये सब, अबकी मेरी बारी
साथ न कोई, सँकरी है पगडण्डी जैसे आरी
समय बीतता, चलने की करनी होगी तैयारी
इसके पार सुनहली नगरी, भवन, बगीचे, क्यारी
जोह रही होगी पुरबाला बाहर बाट हमारी
पंथ अगम, निशि भारी।[2]

पद-शैली के गीतों के भी दो रूप मिलते हैं, प्रथम-भाषा का अत्यन्त सरल रूप जैसे उक्त गीत में है और द्वितीय-भाषा का सामासिक रूप, जैसा

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 25.
2. वही : प्रथम खण्ड : पृ0 147.

प्रस्तुत गीत में देखा जा सकता है -

जननी, जीवन दायिनी !
जगत्-प्रकाशिनि, शारद-हासिनि, भक्ति-प्रेम-पय-पायिनी
किरण-मण्डिता, उपल-खण्डिता, पाप-कलाप-नशायिनी
गिरि-उत्संगा, क्रीड़ित-गंगा, रज-धूसर-काषायिनी।[1]

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने दोनों ही प्रकार के गीतों की रचना की है। अतः यह कहना अत्यन्त उपयुक्त है कि गीतकार के साहित्य में नये-पुराने तथा भाषा के सरल एव सामाजिक दोनों ही प्रकार की शैलियों का सुंदर रूप देखा जा सकता है।

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों की संरचना की बात तब तक अधूरी है जब तक उनके पौराणिक गीतों की चर्चा न की जाय। यह बात शत-प्रतिशत सत्य है कि श्री गुलाब खण्डेलवाल के गीतों में नये-पुराने विविध शैलियों, देशी-विदेशी रूपों तथा विभिन्न नामोंवाले गीतों के रूप समाहित हैं। कवि ने राधा और कृष्ण के आत्मिक सम्बन्धों तथा सीता तथा राम के अगाध स्नेह को लेकर क्रमशः 'गीत-वृन्दावन' के तथा 'सीता-वनवास' गीत-प्रंबध प्रस्तुत किये हैं। इन गीत-प्रबंधों में गीत तो पुराने कथ्य को ही लेकर रचित हैं लेकिन उनका सहज गाम्भीर्य कवि को सूर और तुलसी के निकट ले जाकर खड़ा कर देता है। जैसे राधा का कथन --

रात यदि श्याम नहीं आये थे
मैंने इतने गीत सुहाने किसके सँग गाये थे !
गूँज रहा अब भी वंशी-स्वर,
मुख-सम्मुख उड़ता पीताम्बर,
किसने फिर वे रास मनोहर वन में रचवाये थे !
शंका क्यों रहने दें मन में !
चल कर, सखि ! देखें मधुवन में
पथ के काँटों ने क्षण-क्षण में आँचल उलझाये थे।[2]

1.'मेरे-भारत, मेरे स्वदेश'' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 49.
2. 'गीत-वृन्दावन' : गुलाबखण्डेलवाल : पृ0 29.

जब कोई गीतकार गीत की संरचना करते समय उसके कलेवर में सघन सम्वेदना, उत्तम कल्पना और प्रखर आत्मीयता की त्रिवेणी का जल प्रवाहित करता चलता है तब श्री गुलाब खण्डेलवाल के गीतों जैसी संरचना होती है।

(ग) गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का विकास :

जैसे लगभग एक शताब्दी में हिन्दी में इतनी मात्रा में कथा-साहित्य लिखा गया जितना यूरोप में कई शताब्दियों में लिखा गया है और हिन्दी की विविधता देखते ही बनती है, ठीक उसी प्रकार आधुनिक युग में हिन्दी-मुक्तक-काव्य के अन्तर्गत गीति-काव्य की श्री-वृद्धि हुई है। गीति-काव्य का वर्चस्व इस सीमा तक बढ़ा है कि न केवल गीति-नाट्य लिखे गये हैं बल्कि प्रबन्धकाव्यों में भी गीतों के प्रभुत्व का सहज प्रवेश हुआ है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'दिवोदास' और 'पृथिवीपुत्र' की रचना गीति-नाट्य में की है तो द्वितीय राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने 'उर्वशी' गीति-नाट्य लिखकर ज्ञानपीठ पुरस्कार अर्जित किया है। हमारे आलोच्य कवि गुलाब खण्डेलवाल ने गीति-नाट्य के रूप में 'दानवीर बलि' की रचना की है। गुप्त जी ने अपने महाकाव्य 'साकेत' में नवम सर्ग गीतों से सज्जित कर प्रभावशाली बनाया और प्रसाद जी ने भी जगत-प्रसिद्ध महाकाव्य 'कामायनी' में गीतों को साधिकार प्रस्तुति दी है। महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने भी अपने 'उषा' महाकाव्य में गीतों को लिखकर एक ओर जहाँ नवीन शैली का निर्वाह किया है वहीं दूसरी ओर गीतों से महाकाव्य की श्री-वृद्धि भी की है। बात यह है कि जो प्रतिभाशाली साहित्यकार होते हैं उन्हें कुछ भी दुर्लभ नहीं होता है, वे जिस दिशा (विधा) में भी अपनी बुद्धि दौड़ाते हैं अथवा अपनी कल्पना-शक्ति को उन्मुक्त छोड़ देते हैं, कुछ विलक्षण और नूतन ऐसे नक्षत्रों की खोज कर ही लेते हैं जिनके प्रकाश से शेष लोक आलोक-मण्डित हो जाता है।

श्री गुलाब खण्डेलवाल गीत-विधा के कवि हैं। उन्होंने अपने साहित्यिक जीवन में साहित्याकाश में अनेक आन्दोलनों को उठते और शान्त होते देखा है लेकिन वे अपनी साधना-समाधि में अडिग रहे हैं और स्वयं भी कभी सॉनेट, कभी ग़ज़ल, कभी कतअ (चतुष्पदी) तो कभी डिंगल की दोहा-पद्धति की ओर अपना लगाव मौलिकता के साथ प्रकट करते रहे हैं। परंतु विभिन्न शैलियों की रचना करते हुए भी गीत-विधा की और उनका झुकाव अनवरत बना रहा है-

जैसे किसी नदी की धारा नये-नये घाटों का स्पर्श करती हुयी और नये-नये घाटों का निर्माण करती हुयी आगे बढ़ती है लेकिन एक धारा सदैव तल का स्पर्श करती हुई बहती है जो नदी का मुख्य रूप है। यही कारण है, उस धारा का अद्वितीय आनन्द प्राप्त करने को विदग्ध और विशिष्ट रसग्राही उसमें पैठने की लालसा अपने मानस में सँजोये रहते हैं। 'जिन ढूँढ़ा तिन पाइँयाँ, गहरे पानी पैंठ' कहकर मस्त मौला कवि कबीर ने भी तो इसी आनन्द को पाने की बात कही है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल अपनी साहित्य-धारा में अन्तःधारा के रूप में गीत-काव्य का आनन्द लेते चले हैं। श्री गुलाब खण्डेलवाल की गीत-काव्य-धारा निरन्तर अग्रसर है।

गीतकार गुलाब की गीत-काव्य-धारा ज्यों-ज्यों अग्रगामी होती चली है त्यों-त्यों उसकी गति प्रखरतर, शब्द-जल अधिक स्वच्छ और सुस्वादु होता चला है। किशोर मन की अभिव्यक्ति, गीतों के रूप में, प्रथम कविता-संग्रह 'कविता' में है। इस संग्रह के गीतों में किशोर गीतकार का संसार नया-नया है। सबके प्रति प्रीति, प्रेम, प्यार और स्नेह उमड़ रहा है। विस्मय इस अवस्था की खास पहचान है। कोयल का गायन उसके मन में मदन की दीप्ति उत्पन्न करता है। गीत की कुछ पंक्तियों के रसास्वादन से किशोर-मन का आकाश सामने आ जाता है -

कोयल ने गाया
कलियाँ चटकीं, फूल खिल उठे, मधुवन लहराया
दिया सँदेश हवा ने आकर,
वहाँ हरे पत्तों के अन्दर
कोई तड़प रही है सस्वर
कुसुम-बाण लेकर वसन्त पल में दौड़ा आया
एक लहर सी उठी अचानक
भू से नभ, वन से वारिधि तक,
चित्रित तरु, गिरि, घाटी अपलक,
विजड़ित गति, सब ओर प्रकृति में जादू-सा छाया
('कविता' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 26)

किशोर मन वियोग की कल्पना से ही आहत हो उठता है। उसकी कल्पना का संसार जैसे ही दृष्टि-पथ से ओझल होता है, वह व्याकुल हो उठता

है। गीत के बोल सुनिये -

दूर गगन में तारा टूटा
अन्धकार ने मुँह फैलाया
सूनापन डँसने को आया
नहीं समझ पाया था कुछ भी वह कि काल ने आकर लूटा
व्योम-पटी पर वह अभिमानी
लिख करुणा की अमर कहानी
एक ओर चल दिया क्षितिज में जैसे भाग्य किसी का रूठा
('कविता' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 30.)

कैशोर्य के पश्चात् यौवनागम होता है। कल्पना का संसार विस्तृत होने लगता है और नदी, संध्या, उषा, वर्षा, आदि में कवि प्रिया के रूप की कल्पना करता है, मुग्ध होता है और उसका आह्वान भी करता है। चाँदनी के समस्त गीतों में युवा कवि गुलाब प्रिय के रूप की मनुहार की और लौकिक-अलौकिक प्यार की कलियाँ बिछाता है और चाँदनी के रूप में प्रिय की प्रतीक्षा भी करता है। चाँदनी के रूप में अभिसारिका का चित्र दृष्टव्य है :-

चाँदनी श्रृंगार करके चली
नयन खंजन-से तिमिर-अंजन सजे
वल चरण के मनहरण नूपुर बजे
बंक ग्रीवा देखकर सरसिज लजे
वक्ष पर हिम-मोतियों का, हार धरके चली
मलय-अंचल तरु-वलय में फँस रहा,
पीठ पर उड़ नाग काला डँस रहा
फूल नन्हा दब चरण से हँस रहा
वाम कर विधु-दीप में घनसार धरके चली
(चाँदनी : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 58.)

कल्पना सहज में साकार नहीं होती है। युवा-मन में कल्पना अधिक और यथार्थ कम होता है। कवि की पलकें झपकने लगती हैं क्योंकि प्रतीक्षा की सीमा, प्रातः-वेला आ रही है। प्रिया-रूपी चाँदनी मानों कहीं अन्तर्धान-सी होने चल दी है। तब चिन्तित होना स्वाभाविक ही है। प्रतीक्षा-काल के सभी साथी

भी मानों विदा ले रहे हैं -

अविरल प्रिय का पंथ निरखती ऊँघ रहीं पलकें मदमाती
बीत चली है रजनी आधी
झींगुर ने भी चुप्पी साधी
चित्रित युग पुतलियाँ, प्रतीक्षा
की निस्सीम डोर में बाँधी
जलती है नीरव कोने में कम्पहीन दीपक की बाती
(चाँदनी : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 70.)

जब कल्पनाएँ आकार नहीं ले पाती हैं तब मन में तर्क-कुतर्क, शंका-दुश्चिन्ता, संकल्प-विकल्प जैसे समीकरण अपना नया-नया रूप धारण कर सामने आते हैं। वर्तमान का महत्त्व, भूत और भविष्यत् से उसके लिये अधिक हो जाता है। गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के कवि की भी कुछ ऐसी ही दशा हो गयी है -

मुझे नहीं चिन्ता अतीत की,
और भविष्यत् किसने देखा !
वर्तमान ही आज तुम्हारा
मेरे सुख की सीमा-रेखा
कब से प्यासे अधर सिसकते, निज अधरों की ओट इन्हें लो
अब मेरी पीड़ा से खेलो
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : ऊसर का फूल : पृ0 91.)

प्रिय कितना ही कष्ट क्यों न दे, पास तक न आये और सुख-दुख की भी न पूछे, किन्तु फिर भी प्रेमी-मन प्रिय की पीड़ा की कल्पना-मात्र से ही काँप उठता है। उसकी तो सदैव यही इच्छा रहती है, वह जहाँ भी हो प्रसन्न-चित्त हो। कवि की अभिलाषा है कि वह कल्पना-लोक में विचरण करता हुआ ही आनन्द पायेगा, यथा -

चाँद सी गिरि-घाटियों के पार तुम बसती रहो,
अश्रुमय दृग-पुलिन पर बन चाँदनी हँसती रहो,
मैं उसीमें निज प्रणय-अभिसार कर लूँगा,

मैं मधुर स्मृति को तुम्हारी प्यार कर लूँगा।
मैं तुम्हारे चित्र को ही प्यार कर लूँगा।
(गुलाब-ग्रन्थावली : प्रथम खण्ड : पृ0 99.)

'नूपुर-बँधे चरण' के गीत अपने कलेवर में 1941 ई0 से 1960 ई0 तक की अर्थात् किशोरावस्था की देहरी पर रखे पग से युवावस्था के अन्तिम छोर तक बढ़ते चरणों की व्यथा-कथा, उतार-चढ़ाव और खट्टे मीठे अनुभवों की चासनी समेटे हैं। वास्तव में 'नूपुर-बँधे चरण' के गीत एक ओर गीतों के विकास की प्रथम सीमा-रेखा बाँधते हैं वहीं दूसरी ओर गीत-विहगों के उड़ने के लिये नये-नये क्षितिज सामने लाते हैं। कवि की प्रौढ़ावस्था का गवाक्ष खुल गया है और मैदान में आयी हुई नदी की धारा की भाँति गम्भीरता, मन्थरता और निर्मलता के साथ-साथ सृजन की ओर चरण बढ़ने लगे हैं। लोक-जीवन के प्रति सम्वेदनशीलता बढ़ी है। अपने से अधिक लोक-व्यथा-कथा सालने लगी है।

'नूपुर-बँधे चरण' तक के गीतों में श्री गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का प्रथम विकास-चरण है। किशोर मन की कल्पनाओं का संसार गया और यौवन के साथ यथार्थ से टकराने और कुछ कर दिखाने की कोमल कल्पनाओं की उड़ानों में ठहराव आ गया क्योंकि कवि ने अपने चरण प्रौढ़ावस्था की देहरी पर रख दिये हैं। गीतों का द्वितीय चरण 1960 ई0 से 1987 ई0 तक चलता है। गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का द्वितीय चरण गीत-संग्रह 'आयु बनी प्रस्तवाना' है। यह प्रेम-गीतों का संग्रह है। प्रिय के प्यार को ही गीतकार अब चाहता है। उसे प्रेम के अतिरिक्त अन्य किसी मनुहार, श्रृंगार और उपहार की अपेक्षा नहीं है लेकिन यह सब भी रहें तो अति सुन्दर हो -

मनुहारों का क्षण कोई मनुहार न छूटे
उपहारों का क्षण कोई उपहार न छूटे
कभी आज की रजनी का श्रृंगार न छूटे
छूट जाय संसार किन्तु यह प्यार न छूटे
घेर मुझे ओ बाँहों के मणिधर अलबेलो
यह चेतन द्युतिवंत एक दंशन में ले लो[1]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 196.

कवि का प्रेम मांसल से अधिक आत्मिक हो उठा है। गीतकार के मन में कोई राधा बेसुध-सी बैठी है -

मेरे मन में कोई राधा बेसुध तान लिये बैठी है
राका निशि में अब मोहन की, मुरली नहीं सुनाई देती
यमुना-तीर वही, पर कोई हलचल नहीं दिखाई देती
रूठ छिपी थी मानवती जो उस दिन श्याम तमाल-वनो में
चिर-वियोगिनी अब वह मेरे स्वर में बैठ दुहाई देती
युग-युग बीत गये पर अब भी, वह निज मान लिये बैठी है।[1]

'आयु बनी प्रस्तावना' के गीतों की यह विशेषता है कि इनमें बुद्धि का सहज प्रवेश है। भाषा अत्यन्त सरल और भाव हृदय पर सीधी मार करते हैं। कवि प्रिय के रूप-सौन्दर्य पर आज भी मुग्ध है और वह कामना करता है कि उसके प्रेमास्पद के हृदय में भी उसके प्रति प्रेम जागे क्योंकि प्रेम-जगत की यह मान्यता है कि जब कोई किसीको प्रेम करता है तो उसके प्रेमास्पद की भी प्रतिक्रिया होती है। स्वाभाविक है, प्रेमी मन अपने पक्ष में ही सोचेगा। प्रेम में संतोष की झलक देखिए -

मैं तो घायल हुआ तुम्हारी मन्द, मधुर मुस्कान से
तुम भी मेरे लिये एक पल अश्रु बहाती होगी !
जीवन का उद्देश्य मिल गया, ज्यों ही तुमको देखा,
हृदय-निकष पर खिँची कनक-सी बाँकी स्मिति की रेखा,
केवल मेरे लिए उतर जो आयी नभ-सोपान से,
आज हँसी वह किस ग्रीवा को हार पिन्हाती होगी ?[2]

प्रेम की पराकाष्ठा तो एक दूसरे के ध्यान में खो जाने में है। गीतकार गुलाब आँखें मूँदकर प्रिय को साथ लेकर तम के अतल जलधि में कूद जाना चाहते हैं जिससे प्रेम की अजरता और अमरता उनके साथ रहे -

जी करता है आँखे मूँदूँ
तुमको इन बाँहों में कसकर, तम के अतल जलधि में कूदूँ
तन का सूत्र भले खो जाये, मन का तार नहीं टूटेगा

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : पृ0 203.
2. वही : पृ0 222.

प्रिये ! हमारे मुग्ध-क्षणों का यह संसार नहीं छूटेगा
मिट न सकेगा प्रेम तुम्हारा, चिर-विस्मृति का तट भी छू दूँ।[1]

'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर' के गीत विविध रूप लिये हुए हैं। 1971 ई0 में भारत और पाक के संघर्ष की चिन्ता भी यहाँ मुखर हुई है। कवि के कुछ गीतों में निर्वेद भाव भी हैं। यथा -

आओं कुछ बात करें घर-परिवार की,
अपने-पराये की, नकद-उधार की।
न तो कुछ बढ़ायें ही और न ही छोड़ें,
कुछ भी न जोड़ें और कुछ भी न तोड़ें,
सबके ही बीच रहें, सबसे मुँह मोड़ें,
चर्चा भर लाभ-हानि, जीत और हार की।[2]

'शब्दों से परे' अर्थात् अव्यक्त की ओर कवि का झुकाव बढ़ चला है। कवि प्रेमिल संसार के अन्तर्लोक अध्यात्म के परिसर में प्रवेश करने लगा है। आयु छीज रही है और सूर्य का प्रकाश देनेवाला कलश मन्द पड़ने लगा है। वास्तव में यह कल्पना जीवन-रथ के आगे बढ़ने से सम्बन्धित है। शेष यात्रा को लक्ष्य कर कवि कहता है -

रात का चँदोवा घिर गया
सूरज का कलश गिर गया
तारों की छाया में चलना है
काजल के कक्ष से निकलना है
दीपक-सा तिल-तिल कर जलना है
पहुँचाकर बन्धु फिर गया।[3]

व्यक्ति के जीवन में परिवर्तनशीलता इतनी सघनता और सहजता से घुली हुई है कि जो-जो परिवर्तन होते चलते हैं, वे सब स्वीकार्य इस लिये होते हैं कि जीवन के सत्य हैं। मन को प्रबोधित करता हुआ गीतकार गाता है -

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 230.
2. वही : पृ0 250.
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 269.

देख चुके चांदनी रात, कवि ! अब अँधियाला पाख देखो
जिन सपनों के दीप जलाये, उन सपनों की राख देखो
हूक हृदय में उठती रह-रह
दुनिया ही ज्यों बदल गयी वह
कुसुम-भवन थे जहाँ, आज
मरघट हैं चील-श्रृगालों के गृह,
जिस पर कभी बसेरा डाला, उजड़ चुकी वह शाख देखो
देख चुके चाँदनी रात, कवि ! अब अँधियाला पाख देखो[1]

अब गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीत शरणागत की सहज वाणी हो गये हैं और 'सब कुछ कृष्णार्पण' कर मुक्तावस्था को अभिव्यक्ति देते हुये वह सहज शब्दों में कहता है -

धीरे-धीरे उतर रही है, मेरी संध्या-वेला
बीत गया दिन गाते-गाते,
मधुर स्वरों के महल उठाते,
श्रोता एक-एककर जाते
उखड़ रहा है मेला।[2]

आयु की प्रस्तावना ज्यों-ज्यों पूरी होने लगती है, मेला स्वतः उखड़ने लगता है। ऐसी अवस्था में गाने की इच्छा शेष नहीं रह जाती है। कवि इस अवस्था को मधुरतम शब्दों में कहता है -

हम तो गाकर मुक्त हुए
तेरी थाती जन-जन तक पहुँचाकर मुक्त हुए
कुछ भी किया न हो जीवन में
लेकर एक विकलता मन में
देखे जो सपने क्षण-क्षण में
दोनों हाथों से अब उन्हें लुटाकर मुक्त हुए[3]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : पृ0 310.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 337.
3. नाव सिन्धु में छोड़ी : पृ0 382-383.

1986-87 ई0 के पश्चात कवि ने जिन गीतों की रचना की है, वे तृतीय चरण के गीत हैं, जो कथ्य और शिल्प की दृष्टि से अत्यंत प्रौढ़ हैं। 'कितने जीवन कितनी बार' , 'नाव सिन्धु में छोड़ी', 'गीत वृन्दावन' और 'सीता-वनवास' शीर्षक से प्रकाशित गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के चार सद्यःप्रकाशित गीत-संग्रह हैं। सांसारिकता का मोह उससे छूट चुका है। अब गीतकार यह जान गया है कि यदि अनन्त ज्योति की एक किरण भी मिल जाय तो फिर सांसारिकता स्वयं ही क्षय हो जायेगी, जैसे -

तुझको पथ कैसे सूझेगा
जब तक तेरे सम्मुख से यह दर्पण नहीं हटेगा ?
पीछे तिमिर तिमिर है आगे,
तू फिरता है इसको टाँगे,
जब तक मिले न ज्योति, अभागे !
यह जड़ क्या कर लेगा ![1]

'नाव सिन्धु में छोड़ी' के गीतों की विशेषता सहज सुबोधता है। जब गीतकार की निजता उस पार पहुँचेगी तो परमात्मा विदुषी माता की भाँति पुत्र-जीवात्मा से पूछेगा कि क्या कमाकर लाया है ? यदि कुछ कमाया हो तभी तो दिया जा सकेगा। गीतकार के शब्दों में -

जब स्वागत में हाथ बढ़ाकर,
माँ तुमसे पूछेगी, घर पर,
'क्या लेकर आये' ! तब उत्तर, क्या दोगे, बतलाओ
कभी तो अगला ठाठ सजाओ
कहीं न डूबे सूरज पथ में, कुछ भी सँजो न पाओ ![2]

'कितने जीवन, कितनी बार' के गीत सम्मोहन की विशिष्ट क्षमता अपने कलेवर में समेटे हुए हैं। व्यक्ति अपनी कतिपय भूलों के कारण इस संसार में बार-बार जन्म लेता है। लेकिन उसकी यह बार-बार आने-जाने की निरन्तरता नहीं रुकती है क्योंकि पापों और पुण्यों का मेला संसार

---

1. 'नाव सिन्धु में छोड़ी : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 126.
2. 'कितने जीवन, कितनी बार' : पृ0 63.

में बार-बार जन्म लेता है। लेकिन उसकी यह बार-बार आने-जाने की निरन्तरता नहीं रुकती है क्योंकि पापों और पुण्यों का मेला उससे कभी छूटा नहीं है -

जीवन क्या है, चलते जाने का बस एक बहाना
चक्कर में है बुद्धि, चेतना थककर बैठ गयी है,
चिर-पुराण होकर भी मेरी यात्रा नित्य नयी हैं,
चालक को तो क्या, मैंने निज को न अभी पहचाना
मार्ग अनदेखा, लक्ष्य अजाना।[1]

यही अनजाना मार्ग जब ज्ञान-पथ पर आ जायगा तब तो गीतकार के शब्दों में सर्वत्र आनन्द ही आनन्द होगा -

सातों सुर बोलेंगे
जब हम वीणा छोड़ यहीं पर तेरे सँग हो लेंगे
तार बिना झनकार उठेगी
तान गगन के पार उठेगी
व्यर्थ करुण चीत्कार उठेगी
नयन नही खोलेंगे
सातों सुर बोलेगें।[2]

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का, गीत-विधा के उत्कृष्ट स्वरूप का चरमोत्कर्ष 'गीत-वृन्दावन' और 'सीता-वनवास' के गीतों में मिलता है। इन गीतों का कथ्य चिरपरिचित है। इस कथ्य पर हजारों गीत हिन्दी में लिखे जा चुके हैं और प्रबन्धात्मक रचनाओं की भी कोई कमी नहीं हैं। ऐसे अनन्त आकाश में अपनी पहचान बनाकर गुलाब खण्डेलवाल ने वास्तव में कुछ अनूठा कर दिखाया है। 'गीत-वृन्दावन' की राधा और गोपियाँ पूर्व कवियों की-सी राधा और गोपियाँ नहीं है। सागर की भाँति गाम्भीर्य है उनमें। उन्हें अपने से अधिक प्रियतम कृष्ण की चिन्ता है। राधा का प्रेम अन्तर की अतल गहराई से आता है। उसकी दशा विचित्र हो चुकी है -

---

1. 'कितनी जीवन, कितनी बार' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 36.
2. 'गीत-वृन्दावन' : पृ0 61.

और बात अपनी क्या बोलूँ !
शर से बिँधी मृगी-सी डोलूँ
गीता जभी आपकी खोलूँ
आँसू पृष्ठ भिगोते,
द्वारिका में प्रभु सुख से सोते
और आपके प्रिय ब्रजवासी, नाथ ! रात-दिन रोते[1]

'गीत-वृन्दावन' के गीतों का कथ्य समाज में बहुचर्चित और बहुश्रुत है जब कि 'सीता-वनवास' की कथा इतनी चर्चित नहीं है। 'सीता-वनवास' की मार्मिक कथा के मर्म को कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने गीतों में ढालकर न केवल कुन्दन बना दिया है बल्कि कवि ने गीतों के माध्यम से उससे आत्मीयता का सम्बन्ध जोड़ दिया है। आत्मीय सम्बन्ध से आशय गीतों के प्रभाव से है। जो सीता-वनवास के गीत पढ़ता या सुनता है, आत्मविभोर हो उठता है। लक्ष्मण सीता को वन में छोड़कर आये हैं और अपनी अन्तर्वेदना व्यंग्योक्ति के रूप में व्यक्त करते हैं -

मैं था भाई बहुत दुलारा
मेरे सिवा न्याय यह निष्ठुर सथता किसके द्वारा !
मुँह भी नही खोल जो पाता
मिलता कौन सिवा लघु भ्राता !
मैंने प्रभु-आज्ञा से, माता !
यह विष गले उतारा।[2]

श्रीराम का उक्त कार्य भले ही पाठकों के मन में कुछ अश्रद्धा के भाव उत्पन्न करे लेकिन श्री राम का यह कथन फिर भी प्रभावित करता है -

सीते ! लौट अवध में आओ
बीते जीवन की दुख-गाथा मन से दूर हटाओ
ली जो राजधर्म की दीक्षा,
मैं उसकी दे चुका परीक्षा

---

1. 'गीत-वृन्दावन' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 53.
2. 'सीता-वनवास' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 14.

प्रिये ! बहुत कर चुकी प्रतीक्षा,
और न अब दुख पाओ
सीते ! लौट अवध में आओ।[1]

सीता-वनवास के गीतों के सन्दर्भ में, रचना-धर्म के पालन की कठिनता के सन्दर्भ में गीतकार गुलाब खण्डेलवाल का कथन है - 'यहाँ अपनी कुछ कठिनाइयों का उल्लेख किये बिना मन नहीं मानता जो इस रचना को लिखते समय सदा मेरे सम्मुख मुँह बाये खड़ी रहती थीं और जिनके बीच निष्कम्प सन्तुलन साधने की मैंने भरपूर चेष्टा की है, जैसे - महाकवि तुलसीदास से पूरा रस-ग्रहण करते हुये भी उनकी गूँज कही न सुनाई पड़े, वन्दनीयों को वन्दनीय रखते हुये उनकी आलोचना की जाय, जनमानस में राम और सीता की जो छवि है उसकी पूर्ण रक्षा करते हुये उन्हें नयी भाव-भूमि में नयी अर्थवत्ता के साथ प्रस्तुत किया जाय, भाषा विषय के अनुरूप उदात्त होते हुये भी सर्वसुगम हो जिससे पाठकों या गायकों को पढ़ते या गाते समय कहीं अटकना या भटकना न पड़े, प्रबन्धकाव्य होते हुए भी पुस्तक का प्रत्येक गीत अपने में स्वतन्त्र हो और पठ्य, नाट्य तथा गेय, तीनों ही रूपों में यह कृति समान रूप से स्वीकृति पा सके, एक छोटे-से प्रसंग के परिप्रेक्ष्य में सम्पूर्ण रामकथा को समेट लिया जाय, आदि। इतने परस्पर विरोधी तत्त्वों के बीच सन्तुलन रखना कितना कठिन है, पाठक समझ सकते हैं।'[2] हमें विनम्रतापूर्वक यह निवेदन करने में हर्ष का अनुभव हो रहा है कि गुलाबजी का प्रस्तुत 'सीता-वनवास' गीत-संग्रह इन परस्पर विरोधी समस्याओं को सफलता से लाँघ सका है। गीतकार ने इन गीतों को उत्तमोत्तम बनाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है। श्री गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का विकास देखकर यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि कवि ने प्रति पग मौलिकता तथा विशिष्टता का परिचय दिया है।

(घ) गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का प्रभाव :

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल को गीत-सृजन करते हुये छठा दशक प्रारम्भ हो गया है। वे गीत के क्षेत्र में निरन्तर विकासोन्मुखी सीढ़ियाँ चढ़ते गये

---

1. 'सीता-वनवास' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 45.
2. 'सीता-वनवास' : अपनी ओर से : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 3

हैं। उन्होंने गीत-विधा का अभ्यास नाम के लिये नहीं किया है अपितु उन्होंने गीत के क्षेत्र में कुछ कर दिखाने के लिये ही अपने अप्रतिम और रचनाधर्मी व्यक्तित्व को लगाया है। गीत की अन्तरंग मनोवृत्ति को बड़ी गहराई से श्री गुलाब खण्डेलवाल का गीतकार समझ सका है। काव्य-सृजन के दिनों और वर्षों में उनकीं गीतों की अन्तःसलिला सदैव प्रवहमान रही है जिसके तट पर बने घाटों पर आ-आकर अंसख्य लोग रसपान कर स्वयं को लाभन्वित और आनन्दित कर चुके हैं। इस रसास्वादन का प्रभाव देशव्यापी हो चला है, जबकि कवि ने प्रकाशन के अतिरिक्त किसी अन्य काव्य-संचार-साधन का उपयोग नहीं किया है। जिसने भी इस गीत-कलेवर का स्पर्श किया है, देखते-देखते उसके अधरोष्ठ थिरकने लगे हैं।

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों की संरचना पर भक्तिकाल की सन्तों की पदमयी वाणी ने अपना प्रभाव डाला है और गुप्त जी, प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी के गीतों ने भी अपना प्रभाव छोड़ा है। इतना ही नहीं, बँगला तथा अंग्रेजी के गीतों ने भी कवि को प्रभावित किया है। कदाचित् इसीलिये कवि गीतों को इतने अधिक रूपों में व्यवहृत कर सका है। काव्य की समय-सापेक्षताओं को साथ लेकर चलने में कवि सदैव निपुण रहा है। गीतों के जो नये-नये रूप हिन्दी में प्रयुक्त हुये हैं उनमें श्री गुलाब खण्डेलवाल ने पुरोधा की नहीं तो पुरोहित की भूमिका विधिवत् निभाई है। 'गीत-वृन्दावन' की रचना पर श्री धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया' के शिल्प का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।[1] 'कनुप्रिया' में जिन्हें गीत कहा गया है, वे गीत कदापि नहीं हैं। हाँ, विचार-प्रधान कविताएँ (अतुकान्त) अवश्य हैं।[2] इस शिल्प को कविवर गुलाब ने स्वीकार नहीं किया है।

---

1. **तुम मेरे हो कौन, कनु !**
   मैं तो आज तक नहीं जान पाई
   बार-बार मेरे मन ने मुझसे
   आग्रह से, विस्मय से, तन्मयता से पूछा है -
   यह कनु तेरा कौन है, बूझ तो।
   'कनुप्रिया' : धर्मवीर भारती : पृ0 33.
2. देखिए- 'कनुप्रिया': प्रारम्भ में पाँच गीतः धमवीर भारती : पृ0 11-18.

गुलाब जी के प्रेमगीतों का प्रभाव :

हिन्दी में प्रथम बार श्री क्षेमचन्द्र सुमन के सम्पादकत्व में हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ प्रेम-गीत-संग्रह सन् 1965 ई0 में प्रकाशित हुआ था जिसके अधिकांश कवि श्री गुलाब खण्डेलवाल के समकालीन हैं। श्री गुलाब के विशुद्ध रूप में प्रेम-प्रधान गीत 'आयु बनी प्रस्तावना' में संग्रहीत हैं जो सन् 1948 ई0 से पश्चात् के हैं। पत्र-पत्रिकाओं में ये गीत प्रकाशित हुए हैं और इन्होंने अपने समकालीनों को प्रभावित किया है - रूप की दृष्टि से, सौन्दर्य की दृष्टि से और भाव की दृष्टि से। यहाँ कुछ गीतकारों पर श्री गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का प्रभाव दिखाने का विनम्र प्रयास किया जा रहा है -

प्रिया के रूप की कल्पना सदा से कवि करते चले आये हैं। श्री गुलाब और श्री देवराज के कल्पित रूप-चित्रों को देखिए - दोनों गीतकारों के रूप में कितनी आत्मीयता एवं सहजता है - गुलाब का गीत है -

आँसू की बूँदों से गढ़ता, मैं प्रतिमा सुकुमार तुम्हारी
इन्द्रधनुष-सी मुस्काती छवि, सलज पुतलियों पर चढ़ती है
अंग भरे लावण्य लुनाई जिनमें से फूटी पड़ती है
पीड़ाकुल पलकें, प्राणों में प्रतिक्षण तीव्र व्यथा का दंशन,
मैं गढ़ता हूँ मूर्ति नहीं, यह मूर्ति स्वयं मुझको गढ़ती है
भावों की आँधी से बनती कुछ की कुछ आनन की रेखा
मेरे आँसू में मिल जाती है आँसू की धार तुम्हारी।[1]

श्री देवराज -

प्रिय ! कहाँ से आ सकी तुम ?
ये तरल कुवलय-विलोचन,
यह चलित उडु मीन-चितवन,
खिले कोये कौन सी नभ-दीर्घिका में पा सकी तुम ?
ये मदिर अनमोल चुम्बन,
ये तड़ित-संस्पर्श कम्पन
कौन से घनपात्र में ढाली सुरा से ला सकी तुम ?[2]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 198.
2. हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेमगीत : सं0 क्षेमचन्द्र 'सुमन' : पृ0 51.

जब प्रेम होता है तब फिर प्रिय के अतिरिक्त कुछ और अच्छा नहीं लगता है। इस भाव को लेकर गुलाब जी ने एक गीत लिखा है। उसका प्रभाव श्री आनन्द मिश्र के गीत पर देखिए। गुलाब जी कहते है --

जब से तुमसे प्यार हो गया,
मुझे न कुछ अच्छा लगता है
सरिता तट, संध्या का तारा,
गीली धरती, सागर खारा,
अपना आनन प्यारा-प्यारा
जब से तुम से प्यार हो गया
मुझे न कुछ अच्छा लगता है।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : आयु बनी प्रस्तावना, पृ0 219.)

श्री आनन्द मिश्र के गीत की कुछ पंक्तियाँ :--
आज बहुत गाने का मन है
मेघों के घट सिर पर धरकर, वह बरखा-गूजरिया आयी
अलियों पर बरसा संजीवन, कलियों पर बरसी तरुणाई
वेणी खोल, केश बिखराये, बिजली की मुस्कान सँवारे
तन ही क्या, मन भीगा मेरा, यह कैसी गागर छलकाई,
बौराया अम्बर दीवाना, मल्लवाला आँगन-आँगन है
आज बहुत गाने का मन है।[1]

डॉ0 नागेन्द्र भी जहाँ कहीं जाते हैं उन्हें उनकी प्रिया याद आती रहती है। सघन स्मृतियों के घन कुछ भी और न देखने देते हैं, न कहने देते हैं -
मैं जहाँ कहीं भी जाता हूँ, तुम आती रहती याद, प्रिये !
अब कहाँ छोड़कर जाऊँगा, कहता है अन्तर्नाद, प्रिये ![2]

'आयु बनी प्रस्तावना' के छत्तीसवें गीत का प्रभाव डॉ0 नागेन्द्र ने किस तरह ग्रहण किया है, सर्वथा दृष्टव्य है -

---

1. 'हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेमगीत' : सं0 क्षेमचन्द्र सुमन : पृ0 14.
2. 'स्वर-गंगा' : छोटे लाल शर्मा 'नागेन्द्र' : पृ0 22.

गुलाब –

तुमको छोड़ चला आऊँगा
कस न सकेंगे ये भुज-बन्धन मैं मुँह मोड़ चला जाऊँगा
पलकों के आँसू से गीले
यद्यपि चरण पड़ेंगे ढीले
उलझी अलकें, नयन कँटीले
व्यर्थ सभी होंगे पर जब मैं नाता तोड़ चला जाऊँगा।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : आयु बनी प्रस्तावना : पृ0 224)

नागेंद्र :–
अरे ! तुम तो जाओगे चले
डूब जायेगी रवि की कोर, सजेगा रजनी का श्रृंगार
विकल हो शलभ मरेंगे यहाँ, दीप शव का होगा आगार
भरेगी तारों से निज माँग, चाँदनी सुभग ओढ़नी ओढ़
मिलेंगे दूर्वादल पर पड़े, चली जायेगी मुक्ता छोड़
और पक्षी जायेंगे छले,
अरे तुम तो जाओगे चले।[1]

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल ने संयोग और वियोग से सम्बन्धित प्रेमगीत ही नहीं, श्रान्त मन को शान्ति देने के लिये भक्ति-गीत, वैराग्य-गीत, वीर-गीत, शोक-गीत आदि भी लिखे हैं जिनका उत्तरकालीन गीतकारों पर प्रभाव पड़ा है। पाश्चात्य गीत-शैली पर गीतकार गुलाब ने सम्बोधन-गीत, गाथा-गीत, प्रतीक-गीत, आदि के रूप में 'नूपुर बंधे चरण' में प्रयोग किये हैं। ये प्रयोगधर्मी गीत भी परवर्ती पीढ़ी के लिये प्रेरक बने हैं। जैसे 'हवा का राजकुमार। यह एक-ऐसा गीत है जो पूर्णतया काल्पनिक होते हुए भी जीवन के श्रृंगार-पक्ष को रूपायित करता है। इस प्रकार के गीतों में विचारधारा को अन्तर के परिपार्श्व में चलना होता है। इसी से मिलता-जुलता डॉ0 नागेन्द्र का गीत है – 'एक रात बोली पुरवाई' । कवि ने पुरवाई (नारी) के द्वारा नर के खोखले अहं को ढीला करने

---

1. 'स्वर-गंगा' : 1973 ई0 : छोटे लाल शर्मा 'नागेन्द्र'' : पृ0 18.

का सतर्क प्रयत्न किया है -

एक रात बोली पुरवाई - लेकर के अँगड़ाई
देखो दुनिया मस्त सो रही, तुझकों नीद न आई
अगर न आती नीद तुझे तो तेरा मन बहलाऊँ
खोकर के निस्मीय गगन में सोऊँ और सुलाऊँ
खोज रही कब से जगती में उर सुन्दर अपना-सा
तुझमें साकारित लगता है ज्यों प्रभात सपना-सा
ले क्षण भर विश्राम सुखद है, यह भुजवल्लरि फैली
तभी चली जाऊँगी, होगी जभी निशा मटमैली।[1]

इस प्रकार के गीतों में वर्णनात्मकता को प्रधानता दी जाती है। इनका अभिधार्थ रूप ही प्रभावित करता है जैसे गुलाब कहते हैं -

हरे धान की कलगी बाँधे, बना छबीला बाँका
खेत-खेत उड़ता फिर था, राजकुमार हवा का
हरे बाँस की वंशी मधुर बजाता वह चलता था
दहनी मुट्ठी में लेकर टहनी की हरी पताका
सात सगी बहनों का प्यारा भाई था वह कैसे !
सात तारिकाओं के दल में चाँद सुशोभित जैसे
नारंगिया , बैंगनी सब्जइ, नाम पड़े थे उनके,
सातों बहनें, सात तरह के रँग की थी कुछ ऐसे

('गुलाब-ग्रन्थावी' : प्रथम खण्ड : हवा का राजकुमार : पृ0 116.)

'कितने जीवन, कितनी बार' और 'नाव सिन्धु में छोड़ी' के गीत भक्ति से सम्बन्धित हैं, जो निर्वेद और शान्त को व्यक्त करते हैं। पुराने सन्तों के गीतों की भाँति ही ये भजन या शान्ति-गीत हैं, जैसे -

तूने जो बोये सो काटे
मन रे ! अब तेरी व्याकुलता कौन दूसरा बाँटे !
जब वे बीज उगे, लहराये,

---

1. 'कालजयी' : पाण्डुलिपि कविता-संग्रह : डॉ0 छोटेलाल शर्मा 'नागेन्द्र', पृ0 110.

क्यों तुझको अब रोना आये !
भर जो किये, दिये सो पाये
क्यों दुखते हैं काँटे ![1]

डॉ0 नागेन्द्र ने इस शान्त-गीत के भाव को अपने एक लोकगीत जैसे गीत में बड़ी कारीगरी से सहेजा है, यथा -

बीत चली मेरी सारी उमरिया
कहा किसीका समझ न आया
जो मन में आया वह गाया
बोया कुछ लेकिन क्या पाया !
जो लाया था उसे गँवाया
कैसे पी की मिले अटरिया
बीत चली मेरी सारी उमरिया![2]

गुलाब जी के एक गीत का प्रभाव और देखिए -

तुझको पथ कैसे सूझेगा
जब तक तेरे सम्मुख से यह दर्पण नहीं हटेगा !
पीछे तिमिर, तिमिर है आगे
तू फिरता है इसको टाँगे
जब तक मिले न ज्योति, अभागे !
यह जड़ क्या कर लेगा ![3]

तिमिर माया का पर्याय है। डॉ0 नागेन्द्र इसी गीत के भाव को निम्नलिखित शब्दों का आवरण देते हैं -

क्या खोया, क्या पाया
चिन्तित जिसके लिये पड़ा तू, क्या-क्या सँग में लाया
तू मायामय, माया तुझमें,

---

1. 'कितने जीवन, कितनी बार' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 33.
2. 'जो आये सो गये यहाँ से' : पाण्डुलिपि : डॉ0 छोटेलाल शर्मा नागेन्द्र, पृ0 15.
3. 'नाव सिन्धु में छोड़ी' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 16.

माया ही पायेगा
यह अनन्त आकाश-सदृश है
और कहाँ जायेगा
वैसा श्रोता हुआ प्रभावित, जैसा तूने गाया।[1]

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों में बहुरूपता और विविधता का समावेश है। कवि ने गीतकार के रूप में अडिग साधना की है जिससे हिन्दी-साहित्य-जगत सम्पन्न हुआ है और उनके समकालीन नयी-पुरानी पीढ़ी के गीतकारों ने उनसे बहुत कुछ ग्रहण किया है। साहित्य में आदान-प्रदान की शाश्वत क्रिया चलती रहती है। गुलाब जी के गीतों ने हिन्दी में एक सशक्त पीढ़ी दी है जो गीत की डोली को उठाकर अदम्य साहस से आगे बढ़ रही है।

---

1. 'जो आये सो गये यहाँ से' : पाण्डुलिपि : डॉ0 छोटेलाल शर्मा 'नागेन्द्र' : पृ0 18.

चतुर्थ अध्याय

प्रबन्ध-काव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन

-: चतुर्थ अध्याय :-
प्रबन्ध-काव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने रूप की दृष्टि से मुक्तक-काव्य (गीत, अतुकान्त पदावली) तथा प्रबन्ध-काव्य (खण्ड-काव्य, महाकाव्य और काव्य-नाटक) दोनों ही प्रकार के काव्यों की रचना की है। जिस कवि ने विभिन्न रूपात्मक काव्य की रचना विपुल परिणाम में की है, निश्चय ही वह विलक्षण प्रतिभाशाली होगा। प्रस्तुत अध्याय में श्री गुलाब खण्डेलवाल की प्रबन्धात्मक रचना के स्वरूप, गठन और उसके विभिन्न रूपों का अपेक्षित अध्ययन किया जा रहा है।

(क) प्रबन्ध-काव्य का स्वरूप और गुलाब खण्डेलवाल के प्रबन्ध-काव्य :

जिस काव्य का आनन्द या रसास्वादन देखकर प्राप्त किया जाता है उसे दृश्य-काव्य और जिस काव्य का आनन्द पढ़कर या सुनकर लिया जाता है उसे श्रव्य-काव्य कहा जाता है। जो काव्य पाठक पढ़ता या सुनता है वह मुक्तक, या गीत अथवा प्रबन्ध हो सकता है। प्रबन्ध-काव्य वह है जिसमें पूर्वापर का तारतम्य रहता है तथा छन्द एक दूसरे से कथानक की श्रृंखला में जुड़े रहते हैं। उनके क्रम को आगे-पीछे नहीं किया जा सकता। वे एक दूसरे के लिये आवश्यक हैं।[1] प्रबन्ध-काव्य के तीन भेद माने गये हैं - (1) महाकाव्य (2) एकार्थ काव्य और (3) खण्ड काव्य।[2] यहाँ महाकाव्य और खण्डकाव्य के स्वरूप पर विचार किया जा रहा है -

महाकाव्य का स्वरूप :

जो काव्य अपने पाठकों को अपने वर्णनानुगुण से उत्तेजित और आकर्षित करने, चरित्रों से प्रभावित करने और सत्प्रेरणा देकर कुछ करने या बनने के लिये कार्य कर सकता है, वह महाकाव्य की श्रेणी में आता है।

---

1. 'साहित्य-शास्त्र के सिद्धान्त' : सरोजिनी मिश्रा : पृ0 235.
2. 'साहित्य-विवेचन' : क्षेमचन्द्र 'सुमन': योगेन्द्र कुमार मल्लिक : पृ0 69.

महाकाव्यों की रचना ने विश्व के पाठकों को अपनी ओर न केवल आकर्षित ही किया है बल्कि उनके स्वरूप-निर्धारण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। हम यहाँ अध्ययन की सुविधा के लिये महाकाव्य-सम्बंधी देशी और विदेशी विचारधारा से अवगत करा रहे हैं -

महाकाव्य-सम्बन्धी भारतीय मान्यताएँ :

संस्कृत-साहित्य के काव्यशास्त्रीय लक्षण-ग्रन्थों में महाकाव्य-सम्बन्धी लक्षणों को लेकर विस्तारपूर्वक विवेचना की गयी है।[3] यदि हम निष्कर्ष रूप में कहना चाहें तो यों कह सकते हैं -

(1) महाकाव्य का सर्गबद्ध होना आवश्यक है।

(2) उसका नायक धीरोदात्त, क्षत्रिय और देवता होना चाहिए।

(3) यह आठ सर्गों से बड़ा और अनेक वृत्तों से युक्त होना चाहिए परन्तु प्रवाह को व्यवस्थित रूप में रखने के लिये एक सर्ग में एक ही छन्द होना चाहिए।

(4) महाकाव्य की कथा इतिहास-सिद्ध होती है।

(5) श्रृंगार, वीर तथा शान्त रसों में कोई एक रस अंगीरूप में रहता है।

(6) प्रकृति-वर्णन के रूप में इसमें नगर, सागर, पर्वत, संध्या, प्रभात, संग्राम, यात्रा, ऋतुओं आदि का वर्णन आवश्यक है।

संस्कृत-साहित्य में जो महाकाव्य मिलते हैं उनमें अधिकांश में उक्त परम्पराओं को मान्यता मिली है। हिन्दी में ज्यों-ज्यों महाकाव्यों का रूप विकसित होता गया त्यों-त्यों उक्त मान्यताएँ संकुचित होती गयीं और नयी-नयी मान्यताएँ उसमें प्रविष्ट होती गयी हैं

प्राकृत और अपभ्रंश की महाकाव्य-परम्परा हिन्दी में और भी अधिक पल्लवित, पुष्पित और विकसित हुई है। हिन्दी में यद्यपि लम्बे आकार के अनेक सर्गबद्ध काव्य-ग्रन्थों की रचना हुई है, उनमें से केवल कुछ को ही महाकाव्य कहा जा सकता है और सच्चे अर्थ में तो महाकाव्य का प्रायः अभाव ही समझना चाहिए। वास्तव में हिन्दी भाषा के सम्पूर्ण विकासकाल में महाकाव्य की रचना के लिये उपयुक्त वातावरण का अभाव रहा है।[4] आधुनिक युग से पूर्व लक्षण-ग्रन्थ (हिन्दी में) लिखे गये लेकिन उनमें काव्य-रूप पर प्रायः विचार नहीं किया गया है। आधुनिक युग के समीक्षकों एवं आलोचकों ने महाकाव्य और

खण्डकाव्य आदि के काव्य-रूप पर भी विचार किया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने महाकाव्य-सम्बन्धी अवधारणा के लिए 'रामचरितमानस' को आधार बनाया और छायावादी कृतियों 'कामायनी' आदि को महाकाव्य की कसौटी पर अध्ययन के लिये उपयुक्त नहीं पाया। श्यामसुन्दर दास ने 'पदमावत' को आधार बनाकर अध्ययन किया।[2] डॉ0 नगेन्द्र ने नवीनतम काव्यों को लेकर अध्ययन किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि महाकाव्य के लिए आवश्यक तत्त्व हैं (1) उदात्त काव्य (2) उदात्त कार्य, (3) उदात्त भाव, (4) उदात्त चरित्र और (5) उदात्त शैली।[3] आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने महाकाव्य की परिभाषा देते हुये लिखा —'महाकाव्य के तीन लक्षण माने जा सकते हैं। प्रथम, रचना का प्रबन्धात्मक या सर्गबद्ध होना द्वितीय उसकी शैली का गांभीर्य और तृतीय उसमें वर्णित विषय की व्यापकता और महत्त्व। इनके अतिरिक्त भी अन्य उपनियम हो सकते हैं। किन्तु मैं इनका समावेश इन्ही तीन लक्षणों में करना चाहूँगा।' महाकाव्य के स्वरूप को लेकर डॉ0 शम्भुनाथ सिंह ने एक शोध-प्रबन्ध लिखा है - उसमें महाकाव्य को परिभाषित करते हुये लिखा है - 'महाकाव्य वह छन्दोबद्ध कथात्मक काव्य-रूप है जिसमें क्षिप्र कथा-प्रवाह या अलंकृत वर्णन अथवा मनोवैज्ञानिक चित्रण से युक्त ऐसा सुनियोजित, सांगोपाँग और जीवन्त लम्बा कथानक होता है जो रसात्मकता या प्रभावान्विति उत्पन्न करने में पूर्ण समर्थ होता है, जिसमें यथार्थ, कल्पना या सम्भावना पर आधारित ऐसे पात्रों या चरित्रों के महत्त्वपूर्ण जीवन-वृत्त का पूर्ण या आंशिक चित्रण होता है जो किसी युग के सामाजिक जीवन का किसी न किसी रूप में प्रतिनिधित्व करते हैं और जिसमें महत्प्रेरणा से परिचालित होकर किसी महदुद्देश्य की सिद्धि के लिए किसी महत्वपूर्ण, गम्भीर अथवा आश्चर्योत्पादक और रहस्यमय घटना या घटनाओं का आश्रय लेकर संश्लिष्ट और समन्वित रूप से जाति-विशेष के समग्र जीवन के विविध रूपों, पक्षों, मानसिक अवस्थाओं अथवा नाना रूपात्मक कार्यों का वर्णन और उद्घाटन किया हुआ रहता है और जिसकी शैली इतनी उदात्त और

---

1. 'हिन्दी साहित्य का विकास' : डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त : पृ0 149-150.
2. 'हिन्दी-साहित्य' : बाबू श्यामसुन्दर दास : पृ0 98.
3. 'हिन्दी-साहित्य का विकास' : डॉ0 गणपतिचन्द्र गुप्त : पृ0 159.

गरिमामयी होती है कि युग-युगान्तर में उस महाकाव्य को जीवित रहने की शक्ति प्रदान करती है।[1] डॉ0 सिंह की महाकाव्य-सम्बन्धी परिभाषा बड़ी अवश्य है लेकिन महाकाव्य की सम्पूर्ण व्यापकता और सम्भावनाओं को यह अपने कलेवर में समेटे हुए है। पूर्वात्य और पाश्चात्य[2] महाकाव्य-सम्बन्धी समस्त विशेषताएँ भी इसमें सुगमता से समायोजित हो गयी हैं। वास्तव में महाकाव्य एक ऐसी विलक्षण और अनूठी रचना होती है जिसमें जीवन के इतने रूप समाविष्ट होते हैं कि उन्हें परिभाषा में बाँधना सहज नहीं लगता है।

प्रबन्धकाव्य का दूसरा प्रमुख भेद खण्डकाव्य है। खण्डकाव्य एक ऐसा काव्य-ग्रन्थ है जिसमें जीवन के एक ही रूप का वर्णन किया जाता है और जिसमें महाकाव्य की किसी एक घटना को ही काव्य का विषय बनाया जाता है। किन्तु यह घटना अपने आप में पूर्ण होती है। जीवन की विविधता में से किसी एक पक्ष का चुनाव करके उसका वर्णन करना ही खण्डकाव्य का मुख्य उद्देश्य होता है।'[3] आचार्य विश्वनाथ ने खण्डकाव्य का लक्षण इस प्रकार किया है - महाकाव्य ऐसे उदात्त व्यापार का काव्यमय अनुकरण है जो स्वतः गम्भीर एवं पूर्ण हो, वर्णनात्मक हो, सुन्दर शैली में रचा गया हो, जिसमें आद्यन्त एक छन्द हो, जिसमें एक ही कार्य हो जो पूर्ण हो, जिसमें प्रारम्भ, मध्य और अन्त हो, जिसके आदि और अन्त एक दृष्टि में समा सकें, जिसके चरित्र श्रेष्ठ हों, कथा सम्भावनीय हो और जीवन के किसी एक सार्वभाव सत्य का प्रतिपादन करती हो।'[1]

महाकाव्य सम्बन्धी पाश्चात्य मान्यताएँ संस्कृत आचार्यों की मान्यता के अधिक समकक्ष हैं। हिन्दी-महाकाव्य के स्वरूप में अत्यधिक व्यापकता आ गयी है। फिर भी पूर्वात्य और पाश्चात्य मान्यताओं का अपना स्थायी महत्त्व है। महाकाव्य के स्वरूप को समझने में यह बहुत अधिक सहायक सिद्ध होती है।

---

1. 'हिन्दी साहित्य का निबन्धात्मक इतिहास' : आचार्य उमेश शास्त्री : पृ0 159.
2. 'महाकाव्य का स्वरूप' : डॉ0 शम्भुनाथ सिंह : पृ0 108.
3. पाश्चात्य विद्वानों ने भी महाकाव्य की स्थिति और विलक्षणता को समझा और उसकी व्याख्या भी की है। प्रसिद्ध यूनानी आलोचक अरस्तू ने लिखा है -

ततु घटना प्राधान्यात् खण्डकाव्यमिति स्मृतम्।

अर्थात् खण्डकाव्य वह है जो किसी घटना-विशेष को लेकर लिखा गया हो। खण्डकाव्य के सम्बन्ध में यह मान्यता भी है -

खण्डकाव्य भवेत् काव्यस्य देशानुसारि च।

अर्थात् खण्डकाव्य वह है जो किसी महानायक के जीवन के एक ही पहलू अथवा तत्सम्बन्धी एक ही घटना पर प्रकाश डाले।

उक्त परिभाषाओं और मान्यताओं से हम निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि खण्डकाव्य किसी सद्चरित्र पात्र के जीवन की एक घटना से सम्बन्धित होता है। हिन्दी-साहित्य में खण्डकाव्य की परम्परा विभिन्न रूपों में विकसित हुई है। पौराणिक प्रसंगों, ऐतिहासिक पात्रों और धार्मिक पुरुषों को लेकर इधर खण्डकाव्यों की प्रचुरता बढ़ी है। उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के अनेक स्वतन्त्रता-सेनानियों को लेकर भी खण्डकाव्यों तथा महाकाव्यों के लिखने की परम्परा तीव्रता से विकसित हो रही है।

गुलाब खण्डेलवाल के प्रबन्ध-काव्य :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल मौलिक, काव्य-प्रतिभा के धनी हैं। उनके बहुआयामी साहित्यिक व्यक्तित्व ने हिन्दी-साहित्य को प्रबन्ध-काव्य, मुक्तक-काव्य, गीत-काव्य और अनेक ग़ज़ल-संग्रह दिये हैं। गुलाब जी के विभिन्न काव्य-रूपात्मक काव्यों के संबंध में निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि उन्होंने अपेक्षित काव्य-परम्पराओं का सर्वत्र आदर किया है। अपेक्षित होने पर भी उनमें से कुछ का परित्याग, कुछ का परिवर्द्धन और कुछ का परिमार्जन किया है और कहीं-कहीं सर्वथा नवीनतम काव्य-रूपों को स्थापित भी किया है। इस कोटि की सामर्थ्य बहुत कम कवियों में होती है कि प्रचलित प्रवाह जैसी पद्धति में कुछ नया और प्रशंसनीय जोड़ दें।

काव्य-रूप की दृष्टि से महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के प्रबन्धकाव्य इस प्रकार देखे जा सकते हैं -

---

1. 'साहित्य-विवेचन' : क्षेमचन्द्र 'सुमन' : योगेन्द्र कुमार मल्लिक : पृ0 68.

(1) उषा :

'उषा' उल्लेख्य महाकाव्य है। कथानक काल्पनिक होते हुये भी ख्यात-सा प्रतीत होता है और जीवन की ज्वलन्त समस्याओं को उभार कर उनका सर्वमान्य समाधान प्रस्तुत करता है।

(2) कच-देवयानी :

'कच-देवयानी' पौराणिक कथावस्तु पर आधारित खड़ी बोली में लिखा गया सफल खण्ड-काव्य है जो एक ओर शास्त्रीय पक्ष को अपनाये रखता है और दूसरी ओर मौलिकता को महत्त्व देता है।

(3) आलोक-वृत्त :

आलोक-वाही महात्मा गांधी को लक्ष्य करके लिखा गया 'आलोक-वृत्त' ऐतिहासिक खण्डकाव्य है जिसकी सफलता स्वयंसिद्ध है।

(4) अहल्या :

राम-कथा की प्रमुख नारी-पात्र 'अहल्या के चरित्र को लेकर लिखा गया 'अहल्या' पौराणिक खण्डकाव्य है।'अहल्या' छोटा किन्तु सफल खण्डकाव्य है जिसमें कवित्व का परिपाक अत्यंत आकर्षक हैं

(5) गांधी-भारती :

गांधी-भारती मात्र 46 सॉनेट (अंग्रेजी छन्द, प्रत्येक में 14 पंक्तियाँ) में लिखी गयी भावात्मक कृति है जिसे एक कथासूत्र में पिरोया गया है। यह करुण-रस-प्रधान है।

(6) दानवीर बलि : (बलि-निर्वास)

यह कृति काव्य-नाटक है। इसकी कथावस्तु पौराणिक है। प्रबन्धात्मक रचनाओं में संवादों का विशेष महत्त्व होता है। अतः सम्वाद-प्रधान काव्य भी प्रबन्ध-काव्यों के अन्तर्गत लिये जाते हैं। 'दानवीर बलि' की कथा एक सूत्र में है। पूर्वापर सम्बन्ध सर्वत्र बना हुआ है। यह काव्य-नाटक अनेक मंचों पर सफल रूप से अभिनीत किया जा चुका है।

राजराजेश्वर अशोक (7) और **भूल** (8) क्रमशः ऐतिहासिक और सामाजिक कथानक पर गद्य में लिखे गये नाटक हैं। ये दोनों प्रबन्ध-काव्य की श्रेणी में नहीं आते हैं।

ज्ञातव्य हो कि उक्त कृतियों के काव्य-रूप (महाकाव्य, खण्डकाव्य आदि) का नामोल्लेख मात्र किया गया है। कथ्य, शिल्प, चरित्र-चित्रण, प्रतिपाद्य आदि का अपेक्षित और विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत अध्याय एवं आगे के अध्यायों में किया जायगा।

'उषा' (महाकाव्य) और 'कामायनी' (महाकाव्य) :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के 'उषा' महाकाव्य की रचना महाकवि जयशंकर प्रसाद की अमर कृति 'कामायनी' (महाकाव्य) से बहुत अधिक प्रभावित है। कविता के क्षेत्र में तो ऐसी शताधिक पंक्तियाँ हैं जो 'कामायनी' की परिवर्तित पंक्तियाँ लगती हैं। जैसे 'कामायनी' के 'श्रद्धा सर्ग' के परिचयात्मक दसियों छन्द यत्किंचित परिवर्तन के साथ प्रस्तुत कर दिये गये हैं -

पड़ा पाया जलनिधि के तीर,
मौक्ति-सा तुम्हें अचानक प्रात
देखती हूँ, तन पर ही नहीं
लगा है मन पर भी आघात
बन्धु ! तुम इतने हुये विरक्त,
मृत्यु से मुक्ति न देती हर्ष !
कौन-सी दुःस्मृति यह तन-प्राण,
कँपाती जैसे विद्युत-स्पर्श।
एक सुख में लिपटे दुख लाख,
यही जीवन का शाश्वत रूप
भटकता मृगतृष्णा में हृदय,
विफल आशाओं का है स्तूप
('उषा' : षष्ठ सर्ग : पृ0 60-61)

'उषा' (महाकाव्य) और 'प्रियप्रवास' (महाकाव्य) :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के 'उषा' महाकाव्य के नवम् सर्ग पर 'प्रिय प्रवास' (महाकाव्यरचयिता:अयोध्या सिंह उपाध्याय, 'हरिऔध') के अष्टम सर्ग का प्रभाव है। यदि इनमें से किसी सामान्य पाठक के समक्ष दोनों महाकाव्यों के कुछ मन्दाक्रान्ता छन्द मिला कर रख दिये जायँ तो उनमें से अलग-अलग बता पाना सहज नहीं है। जैसे -

आशा-क्षीणा, सजल-नयना, खिन्ना, एक-वेणी,
दीना, हीना, मलिन-वदना, मूर्तिता वेदना-सी
शैया-सेवी प्रतनु सुत को, भानु को देखती थी
गोधूली-सी गत-मुख खड़ी एक दामा विषण्णा
('उषा' नवम् सर्ग : पृ0 85.)

'उषा' का महाकाव्यत्व :

महाकवि जयशंकर प्रसाद के विश्व-प्रसिद्ध महाकाव्य 'कामायनी' से पूर्व हिन्दी महाकाव्यों में 'पृथ्वीराज रासो' (चन्द बरदायी) से लेकर आधुनिक युग के 'प्रिय-प्रवास' (हरिऔध) और 'साकेत' (मैथिलीशरण गुप्त) तक शताधिक महाकाव्य लिखे जा चुके हैं जिनमें कथानक पौराणिक, ऐतिहासिक और लोकख्यात हैं। प्रसाद जी ने नाम मात्र का कथानक लेकर उत्कृष्ट महाकाव्य की रचना की और हमारे आलोच्य कवि गुलाब खण्डेलवाल ने सर्वथा काल्पनिक कथानक लेकर 'उषा' महाकाव्य की रचना की है। चूँकि श्री गुलाब स्वच्छन्दतावादी कवि हैं अतः उन्होंने महाकाव्य रचते समय भी अपने मौलिक चिन्तन को ही रूपायित किया है। प्राक्कथन लिखते हुये कविवर पन्त ने लिखा है - 'एक साधारण प्रणय-कथा को मानव जीवन की सनातन संघर्षशील समस्याओं के परिवेश में अंकित कर गुलाब जी उसे एक चिरन्तन सार्थकता तथा शाश्वत रसमूल्य देने में समर्थ हुए हैं। हृदय-बुद्धि के ऊहापोहों तथा जीवन-मरण, सुख-दुख, संयोग-वियोग, नियति-पुरुषार्थ आदि गम्भीर प्रश्नों पर कथा के भीतर कवि-सुलभ भावनात्मक दृष्टि से चिन्तन की अमूल्य वैचारिक निधि बिखेर कर कवि की प्रतिभा निश्चय ही 'उषा' को महाकाव्य के स्वर्ण-शिखर पर

आरूढ़ कर सकी है।'[1]

पुरानी काव्य-परम्पराओं को तोड़ने के लिये महाकवि गुलाब न तो पूर्वाग्रह-ग्रस्त हैं और न नवीन चिन्तन को प्रस्तुत करने के लिये आतुर हैं। कवि ने पूर्ण मानसिक सन्तुलन का मौलिकता से परिचय दिया है। यदि कथानक में सर्वथा मौलिक कल्पना साकार हुई है तो प्रस्तुतीकरण में महाकाव्यगत परम्पराओं का पालन भी किया गया है। 'उषा' महाकाव्य में 12 सर्ग हैं, जो पूर्वात्य और पाश्चात्य मान्यता के अनुरूप हैं। कथानक के सम्यक विकास के लिये सर्गबद्ध योजना अपेक्षित होती है क्योंकि उससे क्रमबद्धता और उत्सुकता बनी रहती है। अवान्तर कथाओं से कथानक में विस्तार और व्यापकता हो जाती है। 'उषा' महाकाव्य में दो कथायें समानांतर चलती हैं। उषा दोनों का मूल बिन्दु है अर्थात् उषा एक ओर तो प्रभात से स्वयं को जोड़े है और दूसरी ओर राजीव को सामाजिक रूप से सर्वस्व दिये हुए है। पाठकों के मन में कौतूहल जागता है कि कवि दो प्रेम-धाराओं को कैसे सहज कर सकेगा। उत्सुकता का भाव यहीं से जागता है। जिज्ञासा-भाव का जागना कवि या कथाकार की पहली सफलता है।

महाकाव्य में छन्द-वैविध्य सर्वथा स्वीकार्य-सा है। संस्कृत से लेकर वर्तमान महाकाव्यों तक यह परम्परा बनी हुई है। 'उषा' महाकाव्य के प्रत्येक सर्ग में नये छन्द के दर्शन होते हैं। नवम् एवं दशम् सर्ग में बीच में छन्द-परिवर्तन है। दशम सर्ग में गीत का प्रयोग 'कामायनी' (प्रसाद) की भांति किया गया है। खड़ी बोली के महाकाव्यों में छन्द-वैविध्य और कुछ नये छन्दों को लेने की परम्परा 'उषा' में दिखायी देती है। कविवर गुलाब की यह छन्दगत विशेषता मानी जायगी कि उन्होंने जिस सर्ग में जिस भाव का प्राधान्य है, उसीके अनुरूप छन्द का चुनाव किया है। इसी प्रकार भावानुकूल, देशानुकूल, पात्रानुकूल और परिवेशानुकूल भाषा प्रस्तुत करने में कवि ने अद्भूत कौशल का परिचय दिया है।

काव्य-शिल्प के अन्तर्गत रस, छन्द, अलंकार, भाषा, और काव्य-शैली को माना जाता है। इन पाँचो तत्त्वों का समन्वय जब प्रभाव डालता है तब कोई काव्य अत्यन्त प्रभावशाली होता है। काव्य-शिल्प की दृष्टि से 'उषा' महाकाव्य सफल महाकाव्य है। महाकाव्य में उद्देश्य नारी का निर्मल मन से पुरुष और जगत के प्रति समर्पण है, यथा -

---

1.'उषा' (महाकाव्य) : गुलाब खण्डेलवाल : प्राक्कथन: सुमित्रानन्दन पन्त : पृ0 ख.

नारी ! जीवन-वेदी पर तूने तिल-तिल कर,
सदा आत्म-बलिदान किया है नीरव, निःस्वर
देती आयी सदा ऋणी नर को युग कर से
तू शीतलता, शान्ति, स्नेह, सुख के निर्झर-से
जननी ! तू जन-जन को करुण पराजय-पल में
सहज सुला लेती निज ममताकुल अंचल में
चिर-बलिदानमयी चिर-वीतराग, संन्यासी
देवि ! नीलकण्ठे ! कुण्ठित चरणों की दासी।
('उषा' सर्ग एकादश : पृ0 126.)

सामान्य उद्देश्यों में मानवता, जीवन-मूल्यों की पक्षधरता, संस्कृति का उत्कृष्ट रूप, नारी का भारतीय स्वरूप, त्याग और प्रेम जैसे सात्विक पक्षों को 'उषा' महाकाव्य में बड़ी उच्चता से प्रस्तुति दी गयी है।

(ख) गुलाब खण्डेलवाल के महाकाव्य का चरित्रगत, शैलीगत एवं प्रभावगत अध्ययन :

कवि श्री गुलाब खण्डेलवाल का एक मात्र महाकाव्य 'उषा' है जो साहित्याकाश में सूर्य के समान है जिसका प्रभाव-रूपी प्रकाश अद्वितीय है। 'उषा' महाकाव्य में एक ऐसी प्रेम-कथा वर्णित है जो दो पुरुषों के मध्य एक नारी से सम्बन्धित है। यहाँ हम 'उषा' महाकाव्य के कुछ पक्षों को लेकर अध्ययन कर रहे हैं।

'उषा' (महाकाव्य) का चरित्रगत अध्ययन :

काव्य (प्रबन्ध और मुक्तक) या कथा में पात्रों का वही स्थान होता है जो शरीर में हड्डियों का होता है। किसी काव्य में नितान्त काल्पनिक अथवा सांकेतिक पात्र भले ही हों लेकिन पात्रों के अभाव में काव्य की सृष्टि विशेषकर प्रबन्धात्मक काव्य की रचना नहीं की जा सकती। साहित्य-शास्त्र के अनुसार नायक चार प्रकार के होते हैं –

धीरोदात्त, धीर-ललित, धीर-प्रशान्त, एवं धीरोद्धत। 'उषा' महाकाव्य का

नायक प्रभात धीरललित है।[1] उषा नायिका हृदय से प्रभात को ही चाहती है भले ही उसका विवाह राजीव के साथ हुआ है। शास्त्रीय दृष्टि से राजीव 'धीर-प्रशान्त' है।[2] राजीव अपने में ही खोया रहता है। 'उषा' महाकाव्य की नायिका उषा है। वास्तव में यह नायिका-प्रधान महाकाव्य है।

उषा :

'उषा' महाकाव्य की नायिका उषा है। उषा ने किशोरावस्था में प्रभात से ही प्रेम किया जिसे वह विवाहोपरान्त भी नहीं भुला पायी और अन्ततोगत्वा मृत्यु के समय भी साथ ही रही। वह अपने जीवन में बहुत उतार-चढ़ाव देखती है। कवि ने उषा का सौन्दर्य 'कामायनी' की श्रद्धा के समान प्रस्तुत किया है -

उदित पूर्णिमा-सी थी सहसा सोने की परछाईं
मेघ-अलक खोले बिजली-सी एक बालिका आई,
नत चम्पक पलकें ज्यों विधु पर तितली बैठ लजाई,
नील वसन से फूट रही थी तनु की स्वस्थ गुराई
('उषा' प्रथम सर्ग : पृ0 2)

उषा का विवाह राजीव के साथ होने जा रहा है। उस समय वह प्रभात से अपने अन्तर्मन की बात में प्रेम की वास्तविकता को वर्णित करती है -

नव यौवन मालती-मुकुल के ओ ! मधुकर दीवाने !
उड़ न सकूँगी मैं तितली-सी प्रेम तुम्हारा पाने
नारी का सर्वस्व हृदय दे दिया बिना कुछ जाने
शेष रहा क्या फिर देने को जाऊँ जिसको लाने !
एक बार ही नारी का मन नव कदली-सा फलता
एक बार ही इस उपवन से मधुर वसन्त निकलता

---

1. 'साहित्यशास्त्र के सिद्धान्त' : सरोजिनी मिश्र : पृ0 169.
2. 'साहित्य-विवेचन' : क्षेमचन्द्र 'सुमन' : योगेन्द्र मल्लिक : पृ0 197.

* * * * *

तुष से दूर चली रख मन पर एक शिला अति भारी
यौवन के जागरण-प्रहर की मोह-निशा-सी नारी।
('उषा' : प्रथम सर्ग : पृ0 5)

उषा जब विवाहित होकर राजीव के घर पहुँचती है, तो (यद्यपि वह मन को प्रभात के पास छोड़ आयी) अपने तन को राजीव को बड़ी शालीनता से सौंपती है। वास्तव में तन और मन दोनों की अपनी-अपनी सत्ता और सीमाएँ हैं। यह आवश्यक नहीं कि दोनों एकसाथ और एक ही गति से अग्रगामी हों। उषा कुल-रीति और धर्म-रीति को मान्यता देती हुई राजीव से कहती है कि नाथ ! मैं तो हर प्रकार से आपकी हूँ -

बोली ऊषा - 'दासी को क्यों, इतना गौरव दे दिया, नाथ !
मैं हुई तुम्हारी, वेदी पर घूमें थे जिस दिन साथ-साथ
पति सिवा और क्या नारी को, गति, मति, जीवन, संसार वही
निशि चन्द्रहीण, फणि मणि-विहीन, जल बिना मीन रह सकी कहीं !
('उषा' : द्वितीय सर्ग : पृ0 23.)

एक दिन राजीव के साथ प्रभात राजीव के घर आ गया। और यहीं से प्रेम का त्रिकोण प्रारंभ हो गया। राजीव के क्रुद्ध होकर घर छोड़कर चले जाने पर प्रभात उषा को पाने को व्याकुल है। लेकिन अब उषा की अपनी सीमाएँ हैं। वह प्रभात को बताती है कि अब तो उसके जीवन का एक आधार उसका पुत्र भी है -

यह नन्हा मुख देख-देखकर, ही तो जीती जाती हूँ
रोक-रोक रखती प्राणों को, सुना-सुनाकर, 'थाती हूँ',
पति कहकर जिसके जीवन से, गाँठ जोड़ ली जीवन की
भूल उसे सकती है नारी, भूल एक कहकर क्षण की !
('उषा' : पंचम सर्ग : पृ0 53)

यहाँ उषा के स्वर में भारतीय नारी का आस्थामूलक स्वर है।

उषा में जहाँ एक उत्कृष्ट प्रेमिका का तथा एक आदर्श गृहिणी का रूप विद्यमान है वहीं एक माँ का हृदय भी उसके पास है। जब एक मात्र पुत्र की मृत्यु हो जाती है तब वह करुण क्रन्दन कर उठती है। उसका वात्सल्य सपने

में अपने मृत पुत्र को देखकर पुकार उठता है-

पुत्र, पुत्र, दुखिया माँ की आँखों के तारे !
प्राण-प्राण के, जी के जी, हो बैठे न्यारे !
वत्स ! कहाँ तुम ? कभी गेह की भी सुधि आती !
दिखती इस निर्लज्जा की पत्थर-सी छाती !
छूते ही फिर पड़े न सारी आयु कलपना
वहीं, वहीं, प्रिय ! हाय ! न सपना हो सुख अपना
('उषा' : एकादश सर्ग : पृ0 118.)

उषा के चरित्र में नारी का वह रूप विद्यमान है जो कई मोर्चों पर अकेला जूझ रहा है। प्रभात को उसने हृदय दिया, राजीव को उसने तन दिया और पुत्र के मिलने पर अपने हृदय का समस्त स्नेह उस पर उड़ेल दिया, लेकिन उस दुखियारी को चैन, सुख और शान्ति किसी भी स्थिति में प्राप्त नहीं हो सकी। श्रद्धा (कामायनी) की भाँति उषा भी अपने प्रिय के साथ प्रस्थान कर जाती है यद्यपि उसका प्रस्थान चिर-प्रस्थान है।

किरण :

'उषा' महाकाव्य की दूसरी नारी-पात्र किरण है। जब राजीव जहाज की दुर्घटना से बचकर एक द्वीप में पहुँचता है तो वहाँ उसे किरण मिलती है। यह मिलन श्रद्धा को छोड़कर गये मनु के इडा से मिलन जैसा ही है। किरण के मन में राजीव के प्रति अपार प्रेम है और उषा के प्रति कोई द्वेष उसके हृदय में नहीं है। जब राजीव उसे छोड़ने की कल्पना, मात्र बातों में करता है तब वह कहती है -

बोली रुक किरण सिसकती, यह प्रश्न विकल करता है
मिट जाये देह भले ही, पर प्रेम कभी मरता है !
मिट सकी तुम्हारी ऊषा ! नित नयी दिशा धरती है
देखो, मेरी आँखों में बन किरण नृत्य करती है
मेरी आत्मा की आत्मा, शैया की सहभागी वह
तन-मन से एक मिली है, सँग-सँग सोयी-जागी वह।
(उषा 'द्वादश सर्ग : पृ0 133)

किरण ने नारी का निर्मल हृदय पाया है जो अत्यंत सुन्दर एवं आकर्षक है।

राजीव :

राजीव - 'उषा' महाकाव्य का प्रमुख पुरुष-पात्र है जो बहिर्मुखी कम और अन्तर्मुखी अधिक है। गुलाब जी के इस पुरुष-पात्र पर प्रसाद जी के पुरुष-पात्र मनु की छाया है। जीवन की गतिविधियाँ और प्रवृत्तियाँ भी लगभग मिलती हुई हैं। राजीव बाह्य शान्ति के नहीं, आन्तरिक शान्ति के लिए ही व्यग्र है। इसलिये वह देश तथा विदेश में उषा के और किरण के सम्पर्क में आता है। निस्सन्देह उसमें पुरुष का भावुक मन है। उषा उसका सामीप्य पाकर भी जब मूक बनी रहती है, तो हृदय का अपार स्नेह उड़ेलता हुआ राजीव कहता है -

रोमों में, हाय ! रमा लूँगा, दृग में बन्दी कर लूँगा मैं
मेरी वसन्त-कोकिले तुम्हें यों मूक न रहने दूँगा मैं
('उषा' : द्वितीय सर्ग : पृ0 20)

लेकिन छलना-रूप में ललना उषा की वास्तविक स्थिति से जब राजीव अवगत होता है तो उसे अपार कष्ट होता है। वह अन्तर्द्वन्द्व की आग की झड़ को झेलने में असमर्थ हो जाता है -

रो, पुरुष अभागे ! नयनों का विश्वास मान,
हँसकर तूने कर दिया जहाँ सर्वस्व दान
वह छल था, उस छवि की मिलती अब छाँह भी न
वह प्रेम कागजी फूलों- सा था गंधहीन
('उषा' : चतुर्थ सर्ग : पृ0 339)

'स्त्रियः चरित्रं दैवो न जानाति' उक्ति का स्मरण कर राजीव को मर्मान्तक पीड़ा होती है और वह कराहता हुआ पुकार उठता है -

था भेद यही, नारी ! नारी ! तू सत्य वही
जो युग-युग से मानव की बुद्धि पुकार रही
पढ़ पाया कौन वक्र तेरी भ्रू-लिपि चंचल !
स्मिति में है रोष, रोष में प्रेम, प्रेम में छल

तू कनक-भुजंगिनि ! उफ, कितनी व्याकुलता ले
मैं सुमन-हार-सा तुझे गले में था डाले !
('उषा' : चतुर्थ सर्ग : पृ0 43)

इस वज्राघात को सहने में असमर्थ राजीव जलयान से देशान्तर में चल देता है। उसे कभी अपने प्रिय पुत्र का स्मरण भी हो आता है। यहाँ उसकी भावुकता उसके संकल्प-विकल्प को आन्दोलित करती है। राजीव को पत्नी और पुत्र की स्मृतियाँ सघनता से घेर लेती हैं -

इन्दु के लघु खण्ड-सा वह वत्स दीन, अबोध
दे रहा होगा पिता का उसे कौन प्रबोध ?
अश्रु नयनों में भरे क्या जोहती है बाट
वह सरल-हृदया अभी तक खोल हृदय-कपाट ?
सहन-सीमा ! कब पुरुष की निठुरता का अन्त !
किन्तु नारी के हृदय की क्षमा-शक्ति अनन्त ।
('उषा' : सप्तम सर्ग : पृ0 69)

विदेश भी राजीव को स्वदेश-सा मिल गया और उषा के विकल्प-रूप में किरण भी मिल गई लेकिन वह उषा को हृदय के किसी कोने में कृपण-धन के समान छिपाये रहता है। उषा के प्रति उसके अंतर्मन की भावना को लक्ष्य करके ही किरण कहती है -

मेरे मन में उसके ही मन की धड़कन बजती है
तुम तनिक ध्यान से देखो, ऊषा मुझमें सजती है
('उषा' : द्वादश सर्ग : पृ0 134.)

प्रभात :

उषा महाकाव्य की नायिका उषा किशोरवस्था में अपना मन प्रभात को समर्पित कर चुकी है। प्रभात सच्चा प्रेमी है। वह जहाँ तक सम्भव है, आत्म-संयम रखते हुए निरंतर उषा के प्रति अनुरक्त है। प्रथम सर्ग में प्रभात उषा के रूप-सौन्दर्य पर मुग्ध है। उषा जब विवाहित होकर जानेवाली है तब प्रभात मन मसोसकर रह जाता है -

दो बिछुड़े, जलते प्राणों की भेंट कहाँ फिर होगी ?
देख मुझे भय-कम्पित पथ पर कभी सहारा दोगी ?
अथवा भूल मुझे जाओगी गतिमय जग-उत्सव में
पुलकों के सौरभ-घन से घिर उस अभिनव अनुभव में !
('उषा' : प्रथम सर्ग : पृ0 6)

प्रभात उषा को जीवन भर नहीं भुला पाया। जब राजीव (उषा का पति) को अपने और उषा के संबध में इर्ष्या करते पाया और उसका व्यवहार, बदला हुआ देखा तो प्रभात ने कहा -

मन का विचार-संघर्ष स्वरों में पड़ा फूट
दिखलाते आँख मुझे मेरा सर्वस्व लूट !
सुन लो कानों को खोल, उषा थी मेरी ही,
प्रिय सहचर दीन, बने तुम निठुर अहेरी ही
हर विवश मृगी-सी उसे प्रेम के कानन से,
वह तन से हुई तुम्हारी सदा नहीं मन से।
('उषा' : द्वितीय सर्ग : पृ0 43)

प्रभात को उषा के अतिरिक्त संसार में कुछ भी नहीं चाहिए। प्रभात उषा का विलक्षण प्रेमी है। उषा की प्रसन्नता के लिये वह उसे राजीव के पास जाने से नहीं रोकता है जो उसके लिये अपहरणकर्ता से अधिक नहीं है। यही नहीं, राजीव के विदेश में होने की सूचना भी वही उषा को देता है।

'उषा' महाकाव्य का शैलीगत अध्ययन :

प्रबन्धात्मक काव्यों में कथानक की तारतम्यता बनाये रखने के लिये पूर्वापर सम्बन्ध रखा जाता है। कथानक को विकसित करने के लिये कवि ने वर्णनात्मक शैली अपनायी है। कविवर गुलाब ने कथानक को बिना किसी उलझाव के, सीधे-सीधे अभिव्यक्ति प्रदान की है। सामान्य रूप से देखा जाता है कि कवि सम्वादों के सहारे कथानक को विस्तार देता है जिसे सम्वाद-शैली कहा जाता है। सम्वादों की यह विशेषता विशेष रूप से आकर्षित करती है कि

वे छोटे हों, सीधे हों, सरल और स्पष्ट हों तथा सार्थकता बनाये हुये रोचक हो और कथा-प्रवाह को गतिशीलता प्रदान करें। 'उषा' के सम्वाद का एक स्थल देखिए - राजीव उषा को छोड़ कर जा चुका है। माँ बेटे दोनों परस्पर बातें करते हैं -

'जननी मैं लाऊँगा उनको, मुझे बता, वे गये किधर'
'मेरे ये उदास लोचन दो, देखा करते वत्स ! जिधर'
'रुठ गये क्यों ?'
'वे ही जानें, विधि ने था लिख दिया यही '
'कहाँ लिखा - '
'ललाट पर', 'जननी ! मुझे दीख क्यों रहा नहीं।'
'तू तो बातूनी है, बेटा ! किसको दिखे भाग्य के अंक !
वह अदृष्य लिपि, जहाँ मानवी बुद्धि पहुँच रह जाती रंक !
अच्छा, मुकुल ! उन्हें तू कैसे पहचानेगा, बतला तो
'गति, मुख की वाणी, आकृति से, नाम पूछ लूँगा फिर, क्यो !'
'पर तू तो था चार वर्ष का, जब वे छोड़ गये तुझको।'
('उषा' : पंचम सर्ग : पृ0 53)

उक्त सम्वाद में रोचकता बनी हुई है जो पाठक में जिज्ञासा-भाव जगाती हुई उसे बाँधे रखती है। श्री गुलाब खण्डेलवाल अपने महाकाव्य 'उषा' में चरित्रों के साथ पूर्णतः रम गये हैं। उन्होंने मुख्यतः वर्णनात्मक शैली को ही व्यवहृत किया है जिसमें शब्द-चयन, छन्दों की सहजता और कहीं-कहीं कथन की वक्रता विषय को नवीन परिवेश देती हुयी गतिशील होती रही है।

'उषा' महाकाव्य का प्रभावगत अध्ययन :

'उषा' महाकाव्य एक प्रभावशाली महाकाव्य है। जब किसी पाठक को यह सूचना मिलती है कि 'उषा' नितान्त काल्पनिक विषयवस्तु पर लिखा गया है और हिन्दी के श्रेष्ठ एवं उल्लेख्य महाकाव्यों में उसकी गणना की जाती है, तो वह न केवल विस्मित ही होता है बल्कि उसे अपने अध्ययन का विषय भी बनाता है। प्रभाव का प्रथम कारण तो यह है कि 'उषा' महाकाव्य की कथा काल्पनिक होते हुये भी सुगठित, रुचिकर, स्पष्ट, जीवन के उतार-चढ़ावों से युक्त तथा विश्वसनीय है। कथानक में ऐसी स्थिति कहीं उत्पन्न नहीं होती जो

केवल कल्पना ही हो। जीवन के कठोर धरातल पर उतरकर कवि चिन्तन करता है। यहाँ जब कथा ही काल्पनिक है तो पात्रों के सन्दर्भ में यह सोचने की बात ही समाप्त हो जाती है कि कौन पात्र किस कोटि का है। पाठक को सीधे उसके चरित्र-चित्रण और परिणाम पर जाना है जिसके लिये वह उत्सुक है। जब पात्र का व्यवहार विश्वास की परिधि में अंकित होता है, तभी पाठक का मन-मस्तिष्ठ प्रभावित होता है क्योंकि वह यथार्थ जीवन में जो देखता है, जब काल्पनिक जीवन में भी वही पाता है तो वह स्वभावतः आह्लादित हो उठता है।

'उषा' महाकाव्य में ऐसे अवसर अनेक बार आये हैं जब प्रसंगों ने पाठक को अपने रूप-जाल में फँसा लिया है। कहीं रूप-सौन्दर्य के प्रसंग, कहीं प्रेम-मनुहार के प्रसंग, कहीं जीवन के कठोर यथार्थ, कहीं अन्तर्द्वन्द्व से मंथित हृदय के भाव और कहीं जीवन और जगत के चिन्तन मन को इतने गहरे उतार देते हैं कि पाठक स्वयं को भूल जाता है। राजीव अपना देश छोड़ एक द्वीप पर पहुँचता है। उषा के बाद किरण उसके जीवन में प्रतिष्ठित हुई है। राजीव का किरण के समक्ष समर्पण स्वभाविक और प्रभावशाली है -

कौन जाने सत्य क्या है, खींच ठण्डी साँस,
आ गया राजीव लज्जित-सा किरण के पास,
सत्य मेरा तो इन्हीं श्यामल पुतलियों बीच,
जो हृदय का मोह-भ्रम लेतीं निमिष में खींच
मूर्त लज्जा सी न विजयिनि ! यों झुका लो भाल,
लो समर्पण चेतना की यह रँगीली ज्वाल
('उषा' : सप्तम सर्ग : पृ0 74)

यह कवि की सामर्थ्य होती है कि वह अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा से कौन से प्रसंग को, जो सामान्य और साधारण-सा लग रहा है, कितना प्राणवंत बना देता है। स्मृतियाँ मानव-जीवन की प्राण हैं, इस सत्य से सभी परिचित हैं। लेकिन जब कोई श्री गुलाब जैसा कवि कल्पना के पंख लगा कर जीवनाकाश में उड़ता है तब स्मृति जैसे विषय को पुनः सजीव बना देता है। उषा को पुत्र-शोक है। वह वियोगिनी स्मृतियों के सागर में डूबती और उतराती है। तभी उसे याद आता है कि उसका पुत्र कहा करता था -

'लाऊँगा मैं, जननि ! अपने ढूँढ मानी पिता को

होने तो दे तनिक मुझको और ऊँचा, बड़ा, तू'
बोलेगा, हा ! लग हृदय से कौन मेरे भला यों ?
प्यारे-प्यारे वदन किसके शोक मेरा हरेंगे ?
('उषा' : नवम सर्ग : पृ0 87)

अस्तु, उषा महाकाव्य में ऐसे अनेक प्रसंग हैं, जो मन को अतीन्द्रिय-लोक में खींच ले जाते हैं और हमें अपने प्रतिपाद्य के लोक में विहार करने को छोड़ देते हैं। इस महाकाव्य में प्रभावशीलता आद्योपान्त बनी हुयी है। कदाचित् इसीलिए 'उषा' हिन्दी के उत्कृष्टतम महाकाव्यों में गिना जाता है।

(ग) गुलाब खण्डेलवाल के खण्डकाव्यों का चरित्रगत, शैलीगत और प्रभावगत अध्ययन :

बहुमुखी प्रतिभा के धनी गुलाब खण्डेलवाल ने 'उषा' महाकाव्य के अतिरिक्त 'कच-देवयानी' (खण्डकाव्य), 'आलोकवृत्त' , (खण्डकाव्य), 'अहल्या', (खण्डकाव्य) नामक तीन खण्डकाव्यों तथा दानवीर बलि (काव्य-नाटक) और गांधी-भारती जैसे भावात्मक प्रबन्ध की रचना की है। यहाँ इन कृतियों के प्रमुख पात्रों के चरित्र के साथ-साथ उपर्युक्त कृतियों का शैलीगत और प्रभावगत अध्ययन किया जा रहा है।

'कच-देवयानी खण्डकाव्य के पात्रों का चरित्रगत अध्ययन :

'कच-देवयानी' खण्डकाव्य में कच और देवयानी प्रमुख पात्र हैं। दोनों के चरित्र की ओर संकेत करते हुये कवि ने कहा है - 'इस काव्य-रचना में कच और देवयानी के चरित्रों के पारस्परिक विरोध का निरूपण किया गया है।'[1] कच देवयानी के पिता से संजीवनी-विद्या सीखने आया, इसी बीच प्रेम-प्रसंग सामने आया; उसे ही कवि ने इस रचना का आधार बनाया है।

---

1. 'कच-देवयानी' : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका से।

कच का चरित्र :

कच 'कच-देवयानी' खण्डकाव्य का प्रमुख पुरुष-पात्र है। उसने गुरु-कन्या देवयानी को बहन के अतिरिक्त कुछ भी और नहीं माना लेकिन देवयानी उसे पति के रूप में पाना चाहती थी। जब कच अपने निवास देवलोक में जाने को तैयार हुआ तब उसके समक्ष यह रहस्य उद्‌घाटित हुआ। तब कच का वक्तव्य उसके आत्म-संयम, दृढ़ निश्चय और नारी के प्रति सम्मान को व्यक्त करता है -

कृतज्ञ-भाव :

प्रेरणा तुम्हारी थी जिसने, जीवित कर तीनों बार मुझे
यह जीवन-मंत्र दिया, न बनूँ यदि मैं कृतज्ञ, धिक्कार मुझे
(कच-देवयानी : द्वितीय सर्ग : पृ0 5)

चारित्रिक दृढ़ता -

मनसापि स्वप्न में भी मेरे, गुरु-दुहिता तो उपभोग्य न थी
भूला मैं भगिनी कहते क्षण, तुम तो इसके भी योग्य न थी
पथभ्रष्ट नदी-सी यें बाँहें, मर्यादा-शील न ज्ञात जिन्हें
किंशुक-शाखा-सा कँपा रहा, यौवन का झंझावात जिन्हें।
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 65)

कच के चरित्र में आत्मिक दृढ़ता है। वह क्षणिक सुख के लिए जीवन की साधना को बिना लक्ष्य प्राप्त किये पथ में ही भ्रष्ट नहीं होने देना चाहता। एक दृष्टि से वह वीरव्रती कहा जा सकता है परंतु कवि ने उसके चरित्र की दुर्बलता को भी व्यंग्यार्थ से उजागर किया है। ऐसा लगता है कि वह अपने भावी यश की कामना से देवयानी के प्रेम को भाई-बहन का काल्पनिक बहाना बना कर अस्वीकार कर देता है। वह किसी भी उपाय से असुर-लोक के प्रेम-प्रसंग से छुटकारा पाना चाहता है और इसके लिए भाई-बहन का नाता अकस्मात् एक सुविधा के रूप में उसको उपलब्ध हो जाता है। इस दृष्टि से देखने पर कच का चरित्र एक पाखंडी का रूप धारण कर लेता है।

देवयानी का चरित्र :

देवयानी 'कच-देवयानी' खण्डकाव्य की प्रमुख नारी-पात्र है जो अप्रतिम

सुन्दरी है और कच को प्राप्त कर देव-रमणियों को भी लालायित और ईर्ष्यालु बनाने की क्षमता रखती है। देवयानी ने जैसे ही कच को देखा, वह उस पर सम्मोहित हो गयी। लेकिन कच ने इस और ध्यान नहीं दिया तो देवयानी कहती है -

मैं अपने कोमल सपनों का, संसार सजाती थी तुम से
नव पारिजात की माला-से, जो उतरे थे कल्पद्रुम से।
तुम ऐसे विद्यालीन रहे, पुस्तक से आगे बढ़ न सके !
पढ़ लिये शास्त्र-इतिहास सभी, नारी के मन को पढ़ न सके
('कच-देवयानी' : प्रथम सर्ग : पृ0 21)

देवयानी की कातरता :

कच को प्राप्त करने की आशा ज्यों-ज्यों क्षीण होती जा रही है त्यों-त्यों देवयानी की कातरता बढ़ती जाती है, यथा -

ओसों से प्यास बुझा तुम तो, जा रहे प्रात के तारे-से
इस धारा सदृश पुकार तुम्हें, रोती मैं लिपट किनारे से
रोती हूँ, पर रो लेने से, मिलती क्या शान्ति मुझे भी है !
उर में जलते जो अंगारे, आँसू से कभी बुझे भी है !
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 45)

प्रेम-पुजारिन :

देवयानी प्रेममन्दिर की सजल पुजारिन है जो अपने प्रेमी से, जैसे भी हो, अपनाने के लिये अनुनय-विनय करती है -

मैं हाथ जोड़ती हूँ, मेरे जीवन की धूल उड़ाओ मत
यह हृदय तुम्हारी थाती है, ले, देख इसे लौटाओ मत
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 52)

वाक्-पटु :

देवयानी वाक्-पटु है। कच की निष्ठुरता पर व्यंग्य करती हुई वह कहती है—

यह कैसा झूठा-सत्य भीरु-वीरत्व, सदय-निर्दयता है !
जो हृदय निमिष में चूर करे, वह भी अच्छी सहृदयता है
उपकारों का प्रतिकार यही ! आभार यही आभारी का !
तुम खेल रहे अंगार-सदृश, ले हृदय हाथ में नारी का
('कच-देवयानी' , द्वितीय सर्ग : पृ0 56)

कवि ने देवयानी के चरित्र को नारी के उत्कृष्ट गुणों से अभिमण्डित कर प्रस्तुत किया है। अब देवयानी का चरित्र और जीवन निम्नांकित पंक्तियों में सिमट कर रह गया है -

करुणा, दुख, ईर्ष्या, रोष-विभा, परिवर्तित जिसके क्षण-क्षण की
भावों के अभिनय में चित्रित, नैराश्य-व्यथा-सी जीवन की।
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 57)

कच-देवयानी के चारित्रिक अध्ययन से ऐसी हर्ष-विषाद की स्थिति उत्पन्न होती है जो पाठक को किंकर्तव्यविमूढ़ बना देती है।

'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य के पात्रों का चरित्रगत अध्ययन :

'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य महात्मा गांधी के चरित्र को लेकर लिखा गया है। गांधी जी का चरित्र लोकोत्तर-प्रभावी है। कवि की दृष्टि में महात्मा गाँधी का चरित्र युगानुरूप, अनुकरणीय और श्रेष्ठ है। गांधी जी का जीवन और उनके कार्य देश के लिये सदैव प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। भारत को जो स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है उसकी उपलब्धि में महात्मा गांधी का बहुत बड़ा हाथ है। 'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य में गांधी सत्यनिष्ठ और अहिंसावादी, पुरुषार्थी और आस्थावादी, सदाचरणशील और मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठावान, लोकतंत्र में आस्था रखनेवाले और हरिजनोद्धारक हैं। कवि ने गांधी जी को युगावतार के रूप में प्रस्तुत किया है -

महान तपस्वी :

धर्म बने हिंसा का साधन, देश कलिर में खाये गोता,
देखूँ मैं असहाय बना, यह सहन नहीं अब मुझसे होता,

रुके न बाढ़ घृणा की तो मेरे जीवन का अर्थ नहीं है
कोई भी बलिदान मनुजता की सेवा में व्यर्थ नहीं है
सत्य-अहिंसा की धरती पर क्यों यह रक्तपात मचता है !
मैं सौ बार मरूँ यदि मेरे मरने से भारत बचता है
('आलोक-वृत्त' : दशम सर्ग : पृ0 61)

दृढ़-निश्चयी :

नमक कानून हमको तोड़ना है,
नया इतिहास में कुछ जोड़ना है
नमक, जो भोग्य सबका, सब कहीं हैं
नमक, जिस पर कहीं बन्धन नहीं है
हमारा सिन्धु-जल है कोष जिसका,
सहज वह मिल न पाये, दोष किसका !
(आलोक-वृत्त', एकादश सर्ग : पृ0 63)

विलक्षण कर्मवीर :

ये दिशा-दिशा से उमड़ रहे जनगण अधीर
आनेवाला है कौन अनोखा कर्मवीर
कोई कहता वह तो कोई जादूगर है
अफ्रिका देश से लाया मंत्र भयंकर है
कोई कहता वह सिद्ध महात्मा है कोई
जो चला जगाने भारत की आत्मा सोई।
('आलोक-वृत्त' अष्टम सर्ग : पृ0 41)

बहु-प्रशंसित व्यक्तित्व :

विजय राजेन्द्र को सकुचा रही थी,
जवाहरलाल की ध्वनि आ रही थी
महत्ता हम सबों की क्या भला थी !

सभी उस वृद्ध माँझी की कला थी
उसीने थी सदा पतवार थामी
उसीकी सूझ से भागी गुलामी
अहिंसा ने अजब जादू दिखाये
विरोधी हैं खड़े कंधा मिलाये
('आलोक-वृत्त, त्रयोदश सर्ग : पृ0 76-77)

महात्मा गांधी के चरित्र में वह चुम्बकीय शक्ति थी कि जो भी उनके व्यक्तित्व के निकट से गुज़रता था, उनका हो जाता था। इसीलिए उन्हें गरीब की झोंपड़ी से लेकर अमीर के महलों तक समान भाव से पूजा जाता था। अद्यावधि भी उनके सम्मान में कहीं कोई कमी नहीं आयी है। प्रस्तुत 'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य तो मानों उनके विशाल चरित्र-वृक्ष की छायाकृति की छोटी सी चित्रावलि है।

'अहल्या' खण्डकाव्य के पात्रों का चरित्रगत अध्ययन :

'अहल्या' खण्डकाव्य नायिका-प्रधान है। अहल्या नायिका को केन्द्र-बिन्दु बनाकर कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने इस खण्डकाव्य की रचना की है। अहल्या, गौतम ऋषि, देवराज इन्द्र और श्री राम इस खण्डकाव्य के प्रमुख पात्र हैं। सभी पात्रों के चरित्र पर कवि ने सम्यक दृष्टिपात् किया है। अहल्या, गौतम ऋषि लौकिक पात्र हैं और देवराज इन्द्र तथा श्री राम अलौकिक पात्र हैं।

अहल्या :

अहल्या एक ऐसी अप्रतिम सुन्दर नारी है जिसे, पिता ने वृद्ध ऋषि को दान देकर, वृद्ध ऋषि-पति ने उसके यौवन से खिलवाड़ करके और देवराज इन्द्र ने उससे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करके, छला है। अहल्या का यही दोष है कि उसने पुरुष-प्रधान समाज में जन्म लिया है। श्रीराम उसकी मनोव्यथा को समझते हैं और वे उसे जड़वत् अवस्था से मुक्ति देते हैं। यहाँ पौराणिक नारी अहल्या का चरित्र 'अहल्या' खण्डकाव्य के आधार पर चित्रित किया जा रहा है -

अप्रतिम सुन्दरी -

कौतुकमय पलकें, अधरों पर ज्योतिर्लेखा,
नव अनाघ्रात, अनबिँधी कली-सी स्मिति-रेखा
विस्मित विधि ने सुषमा-निधि-विधु-सा मुख देखा
उड़ती अलकों में इन्द्रजाल-सा सपने का
पढ़ते निद्रा से जागे।

('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द-दो)

प्रणयातुरा -

अधरों में मदिरा लिये न उसको सकूँ बाँट
कामना मुक्ति की मूँदे पलकों के कपाट
जितना पढ़ती हूँ उतना ही चिर-गूढ़ पाठ
मेरे अन्तर की यह रहस्य की मधुर गाँठ
खोलो, खोलो, द्रुत खोलो

(अहल्या : प्रथम सर्ग : छन्द-सात)

रूपगर्विता-

दिन भर तपकर रवि से लौटोगे प्रिय ! जभी गेह
मैं संध्या-सी देहरी-दीप में भरे स्नेह
अर्पित कर दूँगी यह नामांकित सुमन-देह
मैं बरस, बिखर जैसे पावस का प्रथम मेंह
अन्तर मधु से भर दूँगी

('अहल्या', प्रथम सर्ग, छन्द - 21)

अभिशप्त नारी -

जीवन के जड़ सुख-भोग भोग जो इष्ट तुझे
पत्थर-सी आत्मा-रहित न जिसकी प्यास बुझे

दे मुक्ति चला मैं अब मत देना दोष मुझे
स्वर हुये अगोचर मुक्ताकण पर बिना रुझे
दृग से झर-झर जो टूटे
('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द - सत्तावन)

राम-भक्त नारी :

जय राम ! ज्योति के धाम, विगत भय-काम-क्रोध !
करुणा के सागर ! दीनबन्धु, भव-मुक्ति-शोध !
मैं पाप-निमग्ना, भग्ना, दुख-लग्ना, अबोध,
दे शरण चरण की, नाथ ! हरो मन का विरोध
यह चिर-कलंक धुल जाये
('अहल्या': द्वितीय सर्ग : छन्द अड़तीस)

राम की कृपा का वर पाकर अहल्या के जीवन की दिशा ही मुड़ गयी और उसकी जो जड़ता थी, समाप्त हो गयी।

गौतम ऋषि :

गौतम ऋषि अहल्या के यौवन पर असंयमित तो होते हैं लेकिन उसकी संतुष्टि को उनके पास कुछ भी नहीं है, सिवाय इसके कि वे पुरुष होने का अहं तो दिखा ही सकते हैं। गौतम के चरित्र के प्रमुख बिन्दु निम्नवत हैं -

रूपासक्ति एवं मन की अस्थिरता

झनझना उठे यौवन की लय में तार-तार
मुनि ने प्यासी आँखों से देखा विवश, हार
आकर्ण सुमन-शर खींच सामने खड़ा मार[1]
कहता जैसे 'मैं जग-विजयी, कब हुआ क्षार

---

1. कामदेव

मर-मरकर जी जाता हूँ
जो सदा-उदासी, संन्यासी, गत-राग-द्वेष
धृत-भुजग-हार, अविकार, शंभु, कापालि-वेश
मैं डरता नहीं, करें वे शत नयनोन्मेष
जो गरल पी चुके हों हँसकर साधक अशेष
मैं उनको पी जाता हूँ'

भोगासक्ति :

सहसा नभ ध्वनि सुन 'सिद्धि तुम्हें दी सृष्टा ने
मुनि ! गृहण करो यह, व्यर्थ न मन शंका माने,
बोले- 'स्वागत है, जीवन-सहचर अनजाने !
क्या तुम प्राणों के क्षत-विक्षत ताने-बाने
मृदु स्मितियों से बुन दोगी ?
('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द - अठारह)

क्रोधाग्नि-मूर्ति :

थिक् सुरपति ! जिस नारीत्व-हेतु सुर-सदन त्याग,
तुम आये इस निर्जन में वही सहस-भाग
अंगों में होगी व्याप्त तुम्हारे ज्यों दवाग
यह अयश-कालिमा ले शिर पर, चिर-मलिन काग !
तुम भटकोगे त्रिभुवन में
('अहल्या', प्रथम सर्ग, छन्द-चौवन)

देवराज इन्द्र :

पुराणों में देवराज इन्द्र के चरित्र को लंपटता की प्रतिमूर्ति-सा दिखाया गया है। 'अहल्या' खण्डकाव्य में भी कुछ इसी प्रकार का चरित्र शब्दायित किया गया है। इन्द्र गौतमी के रूप पर आसक्त हो छद्मवेश में आते हैं। गौतमी समझ नहीं पाती है। और जब समझती है तब तक वह प्रिय की बाँहों में होती है, यथा -

सुरपति यह जिसने पति-अनुकृति धर ली अनूप
पाटल-विकीर्ण पथ नहीं, अतल चिर-अंधकूप
कानों से लग बोले दृग-मधुकर दंश-रूप
आया कुसुमित शर ले अरूप वह बाल-भूप
बह चली वायु अनुकूला
सुगठित भुज-पट्ट, कपाट-वक्ष, हिम-गौर स्कंध
तनु तरुण भानु-सा अरुण, स्रस्त-तूणीर-बंध
दृढ़ जटा-मुकुट सिर, कटि-तट मुनि-पट धरे, अंध
प्रेमी के छल पर सलज, विहँस, उन्मद, सगंध
उर-सुमन प्रिया का फूला

इन्द्र बातों-बातों में गौतमी को अपने वैभव और सत्ता का लोभ देकर पथभ्रष्ट कर देता है। देवराज इन्द्र वास्तव में छली ओर प्रपंची है।

श्रीराम :

'अहल्या' खण्डकाव्य के श्रीराम गुप्त जी के साकेत के राम की प्रतिकृति हैं। अहल्या को पाप-मुक्त करते हुए, वे कहते हैं -

जो पीड़ित, लांछित, दीन, दुखी, दुर्बल, अनाथ,
चिर-पतित, अपावन, जग में चलते झुका माथ
मैं भक्ति-मुक्ति से भरता उनके रिक्त हाथ
दूँ बहा सृष्टि में प्रेम-जाह्नवी पुण्य-पाथ,
बस इसीलिए आया हूँ
(अहल्या, द्वितीय सर्ग : छन्द 'तेतालिस)।

श्री गुलाब खण्डेलवाल का 'अहल्या' खण्डकाव्य कवित्व की दृष्टि से ही नहीं, चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी उत्तम और आदर्श से पूर्ण है।

'दानवीर बलि' के पात्रों का चरित्रगत अध्ययन :

'दानवीर बलि' काव्य-नाटक में अनेक अलौकिक पुरुष, देवता, नारी आदि पात्रों को लेकर कथा का व्यवस्थित रूप दिया गया है। विष्णु के अवतार भगवान वामन, दानव-सम्राट् राजा बलि, दानव-गुरु शुक्राचार्य का चरित्र दानवीर

बलि में प्रमुख है। यहाँ इन्ही विशिष्ठ पात्रों का चरित्र-चित्रण किया जा रहा है -

दानवीर बलि :

दानवीर उसे कहते हैं जो अपनी शक्ति और सामर्थ्य से अधिक, उपयुक्त पात्र को दान दे तथा दिये हुये के प्रति चिन्तित न हो और इसके विपरीत सुख और सन्तोष का अनुभव करे। दानवराज राजा बलि एक ऐसे ही पौराणिक पात्र हैं, जो 'दानवीर बलि' के नायक हैं। बलि बड़ा ही योग्य, दूरदर्शी, कृतज्ञ तथा सूर है। वह बलिदान की महिमा को सर्वश्रेष्ठ मानता है, यथा -

आज उन्हीं का पहले हो अधिकार विजय-अभिनन्दन का
असुर-यज्ञ के बीच जिन्होंने काम किया है इन्धन का
पहले त्याग, ग्रहण पीछे, जीवन का शाश्वत अटल विधान
बलिदानों से ऊँचे हैं बलि, बलि से ऊँचा है बलिदान
('दानवीर बलि' : पृ0 18)

बलि अपने जीवन में जो कुछ भी पा सका है, उसके पीछे गुरु के ही शुभाशिष हैं। बलि अपने गुरु शुक्राचार्य को संबोधित करके कहता है -

विजय तुम्हारी कृपा, तुम्हीने बली इन्द्र से ठान विरोध
लिया हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष विरोचन के वध का प्रतिशोध
मैं तो साधन मात्र तुम्हारा, कठपुतली-सा नाच रहा
जैसे तिनका पवन-वेग से, नभ में मार कुलाँच रहा
('दानवीर बलि' : पृ0 19)

भगवान वामन देवराज इन्द्र की सलाह पर दानवीर बलि की समस्त सम्पदा और राज्य दो ही पग में नाप लेते हैं। परंतु बलि को इसका तनिक-भी खेद नहीं है। उसे प्रसन्नता है कि वह धर्म के पालन में खरा उतरा है। वह भविष्य में भी धर्म-मार्ग पर अटल रहना चाहता है।

गुरुदेव ! विजय-पराजय से मुक्त सदा
मेरा विश्वास सत्य-धर्म में अटल है।
व्यक्ति की पराजय से सत्य नहीं हारता है,
ऊँचा आदर्श है सदैव इतिहास से।

फिर भी मिलेगा यदि स्वर्ग कभी जीवन में
धर्म के लिये मैं उसे फिर भी हार जाऊँगा
('दानवीर बलि' : पृ0 57)

दानवीरता की दृष्टि से, उदारता की दृष्टि से और सत्य-निष्ठा की दृष्टि से राजा बलि का चरित्र असाधारण है।

शुक्राचार्य :

देवराज इन्द्र ने शुक्राचार्य को कभी अपमानित किया था जिसके प्रतिशोध के लिए वे आजीवन दैत्यों को अपने तपोबल से पुष्ट कर इन्द्र को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते रहे हैं। वे दैत्यों के गुरु हैं और देवों पर अपने शिष्यों की विजय के आकांक्षी हैं। बलि से उन्हें यह आकांक्षा पूरी होती दिखाई देती है। विजय के बाद वे राजा बलि को आशीर्वाद देते हैं -

बाधाएँ हों विगत, जग का प्राणप्यारा बने तू
शोकान्धों की नयन-मणि-सा, शान्ति संतापितों की,
दैत्यों का अभ्युदय-कर्ता, काल द्रोही सुरों का
स्वर्गों की श्री, त्रिभुवन-पिता, सज्जनानन्द-दाता
('दानवीर बलि' : पृ0 20)

गुरु का कार्य है, समयोचित प्रबोध। जब राजा बलि को वामन द्वारा छला जा रहा है तब वे कहते हैं -

हाय ! री सरलते !
चाहती नहीं है तू चलना आँख खोलकर
खाईकूपभरे महाँवक्र सृष्टि-पथ में
ठोकरें भले ही लगें, भूले मृषा ज्ञान में
निज को सँभालो, सम्राट् ! है समय अभी
भूल को सुधारने का, मंत्रित भुजंग-से
कूद अग्नि-कुण्ड में न आत्म-बलिदान दो
(दानवीर बलि : पृ10 49)

राजा बलि का विनाश गुरु शुक्राचार्य अपनी आँखों के सामने देख रहे हैं। बलि के कृत्य को वे बुद्धिहीनता का पर्याय ही मानते हैं। निरुपाय और क्रुद्ध होकर वे कहते हैं : -

आँखें फाड़-फाड़कर किये का फल देख अब
मूढ़ दानवेश ! आज अपने ही सामने,
पाया हुआ स्वर्ग ज्यों गँवाया तूने, बुद्धिहीन !
निज हठ से ज्यों, हाय, मिट्टी में मिला दिया
सारे दैत्यवंश को, विमूढ़, अविवेकी कौन
होगा ऐसा अन्य सुरासुरों के पुराण में !

देवराज इन्द्र :

देवराज इन्द्र उस ईर्ष्या का प्रतीक है जो किसी की तपस्या, शक्ति और ज्ञान की श्री-वृद्धि को सहन नहीं कर पाती है और उसके क्षय या विनाश के लिए सदैव तत्पर रहती है। बलि तो उसके चिर-शत्रु दानवों का सम्राट् है और उसका राज्य छीन लेना चाहता है। बलि के आक्रमण से त्रस्त होकर वह अपने सेनाध्यक्षों को ललकारता है :—

तपो आज आदित्य बारहों, प्रलय-घटायें उमड़ रहीं
उठ पानी में आज लगा दो, जल में डूबी जले मही
धरो दिशाओं को दिग्पालो, बढ़ो युगल अश्विनी-कुमार !
आठों वसु, ग्यारहों रुद्रगण रण को हो जाओ तैयार
काल-महिष पर बैठ भयंकर शीत मृत्यु का दण्ड लिये
त्रिभुवन के भक्षक यम देखो आज न कोई असुर जिये
('दानवीर बलि" : पृ0 44)

शक्ति के दुरुपयोग एवं ब्रह्मा-विष्णु जैसी शक्तियों की पक्षधरता के कारण छली इन्द्र राजा बलि के विनाश में सफल हुआ।

देवगुरु आचार्य वृहस्पति तथा भगवान विष्णु का चरित्र भी उल्लेख्य है। नारी-पात्रों में **विंध्यावली,** जो राजा बलि की पत्नी है, का चरित्र भारतीय नारी के परंपरागत गुणों से भरा है। यथा -

मैंने जो व्रत नेम किये
न्यौछावर जीवन-धन पर, वे सुख से सदा जियें
हँसती मूक रहे प्राणों में, ज्वालामुखी सिये
नारी का जीवन होता है जग में इसी लिए
('दानवीर बलि' : पृ0 38)

विंध्याचली में पति के प्रति सर्वस्व-समर्पण की भावना है। उसके लिए पति ही सर्वस्व है। भारतीय नारियों ने पति के लिये, चाहे वह कैसा भी हो, सब कुछ न्यौछावर कर दिया है। विंध्याचली में भी यही भावना दृष्टिगोचर होती है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 'दानवीर बलि' काव्य-नाटक में पात्रों का चरित्र उनकी स्थिति के अनुकूल प्रस्तुत किया है।

'गांधी-भारती', भावात्मक काव्य के पात्रों का चरित्रगत अध्ययन :

'गांधी-भारती' में गांधी जी की स्मृति को आधार बनाकर कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 46 सॉनेट लिखे हैं जिनमें गांधी जी की चरित्रगत विशेषताएँ शरीर में रक्त की भाँति संचारित हो रही हैं। गांधी जी की कल्पना में चरित्र की समस्त विशेषताओं को, उनकी आकांक्षाओं को, कवि ने एक ही सॉनेट में समाहित कर दिया है। कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

भारत मेरे सपनों का वह, जिसमें सब समान, सब एक
सब का एक लक्ष्य, सबको समान अवसर, समान अधिकार
सबका राज्य, लोकतंत्रात्मक, सुखी सभी, सबमें सुविवेक
सभी धनिक, धन-निस्पृह सब संतुलित-शक्ति-भावना-विचार

* * * * *

सबका शुभ सोचें सब, सब के द्वारा सब का हो कल्याण
यह बापू की वाणी सुन्दर 'सबको सन्मति दे भगवान'
('गांधी-भारती : सानेट - 19)

वास्तव में महात्मा गांधी अपने जीवन में सत्य और अहिंसा के व्रत का पालन करते हुए अपने देश को सात्विकता से परिपूर्ण कर देना चाहते थे। भारतीय जीवन का आदर्श भी यही है।

गुलाब खण्डेलवाल के खण्डकाव्यों का शैलीगत अध्ययन :

कच-देवयानी :

गुलाब खण्डेलवाल ने 'कच-देवयानी', 'आलोक-वृत्त' और 'अहल्या' तीन खण्डकाव्य लिखे हैं। इनमें से 'कच-देवयानी' भावुकता से परिपूर्ण एक ही प्रकार के छन्द में रचा गया है। कवि छायावादी संस्कारों को साथ रखते हुए नवीनता एवं प्राचीनता का पूर्वापर सम्बन्ध बनाये हुए वर्णनात्मक शैली में यह काव्य रचता चला है। कथानक के प्रसंगों को पात्रों के कथन मात्र से ही परिवर्तित कर दिया गया है, यथा कच देवयानी से कहता है -

गुरु-कन्या, भगिनी तुम मेरी श्रद्धा की प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण
('कच-देवयानी', द्वितीय सर्ग, पृ0 43)

कवि प्रस्तुत खण्डकाव्य में इसी प्रकार प्रसंगों को परिवर्तित करता चला है।

'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य की कथावस्तु बहुत लम्बी है। अतः कवि को एक प्रसंग या घटना या कल्पना को बाँधने के लिये छोटे-छोटे सर्गो की रचना करनी पड़ी है। प्रत्येक सर्ग में कवि ने रोचकता लाने के लिये छन्द-परिवर्तन किया है। यह काव्य छन्दबद्ध ही नही है बल्कि कही-कहीं अतुकान्त मुक्तछंद में भी रचा गया है। इसके पीछे कवि की यही कल्पना प्रतीत होती है कि काव्य को रुचिकर बनाया जाय। 1857 ई0 के उत्तरकालीन प्रभाव से लेकर स्वतन्त्रता-प्राप्ति तक की ऐतिहासिक घटना केवल कल्पना, भावना और यथार्थ के संगम पर अवतरित की गयी है। जैसे-- जब गांधी जी से चंपारन में उनका बयान लिया गया तो उनका उत्तर ऐसा है जिसमें मानों अलिखित इतिहास को दुहरा दिया गया है -

बोले गांधी 'मैं भारत का बुनकर, किसान
हूँ कर्मचन्द-सुत, मोहन दास, जाति गांधी
पर नहीं जाति कुल ने मेरी सीमा बाँधी
मैं नंगी-भूखी भारतीय जनता का स्वर
अत्याचारों का सत्य-अहिंसामय उत्तर
('आलोकवृत्त', अष्टम सर्ग : पृ0 44)

अहल्या :

खण्डकाव्य में जो शैलीगत श्रेष्ठत्व 'अहल्या' खण्डकाव्य में है वह प्रौढ़ता अन्य खण्डकाव्यों में कहाँ है ! अहल्या खण्डकाव्य में एक ही प्रकार की छन्द-योजना है, जो अति उत्तम है। कवि ने संस्कृत-निष्ठ साहित्यिक खड़ी बोली का उपयोग करते हुये समास-शैली का प्रयोग किया है। कम से कम छन्दों में अधिक से अधिक कह देने की प्रवृत्ति 'अहल्या' खण्डकाव्य में आद्योपान्त बनी हुई है। प्रकृति के विभिन्न दृश्यों या रूपों के चित्रण द्वारा कवि प्रसंगों का परिवर्तन करता चला है। जैसे— छद्मवेश में इन्द्र कहता है -

थी शेष रात कुछ अभी विकल फिर आया मैं
प्रियतमे ! तुम्हारी स्मृतियों से भरमाया मैं,
आओं निकुंज की चलें पुलकमय छाया में
बुन रहीं जहाँ किरणें कुसुमों की काया में
कोमल प्रकाश की जाली
('अहल्या' , प्रथम सर्ग, छन्द - 43)

'दानवीर-बलि' काव्य-नाटक है। अतः नाटक के अनुकूल संवादों की प्रधानता, प्रभाव की ओर विशेष दृष्टि और अभिनयशीलता को विशेष रूप से सामने रखा गया है। 'दानवीर बलि' काव्य-नाटक की शैली प्रभावशाली है। पात्र, अवसर, विषय, परिवेश के अनुकूल कवि छन्दों का परिवर्तन करता चला है। कही-कहीं गीतों को भी समायोजित किया गया है जिससे नाटक को अधिक से अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके। कथानक को उचित ढंग से विभक्त किया गया है। पताका, प्रकरी, प्राप्त्याशा, बिन्दु आदि को सृजन के क्षणों में अवश्य ही ध्यान में रखा गया है अन्यथा-काव्य नाटक इतना प्रभावशाली नहीं होता। प्रभाव के पीछे शैली ही मुख्य घटक है। कथानक से सम्बन्धित जो उल्लेख्य घटनाएँ है, उनको चरों के कथन के माध्यम से सामने लाया गया है। नाटक के सम्वाद बड़े ही सुगठित और उत्तेजक हैं, जैसे -

इन्द्र----असुरपति !
आज प्रतिशोध का दिवस है,
बलि--अरे ये कौन,
देवराज इन्द्र ही थे, छत्रधारी वेश में

छद्म-विप्र-रूप हरि पर चँवर झलते
कवच-रचित गौर कर से !
इन्द्र--सम्राट् ! देखो
पहला चरण लाँघ भाल चतुरानन का
गया महाशून्य में, अपर में समष्टि है
नपी स्वर्गभूमि से ले सप्तम पाताल के
शेष नाग-लोक तक, डग अभी तीसरा
शेष है द्विजेश का।
('दानवीर बलि' : पृ0 54)

'गांधी-भारती' भावात्मक काव्य है जो पाश्चात्य काव्य की विशिष्ट शैली 'सॉनेट' में रचा गया है। कवि ने सॉनेट के सम्बन्ध में लिखा है -सॉनेट अंग्रेजी का विशिष्ठ काव्य-रूप है जिसमें कुल 14 पंक्तियाँ होती हैं। एक सानेट में एक भाव या विचार की ही सांगोंपाँग अभिव्यक्ति होती है। प्रारम्भ की 8 पंक्तियों में वह भाव-समुद्र के ज्वार की तरह आगे बढ़ता है और अन्त की 6 पंक्तियों में समाहित हो जाता है अन्त की दो पंक्तियों में पूरे सॉनेट का निचोड़ आ जाता है।'[1] स्पष्ट है कि 'गांधी-भारती' भावात्मक काव्य में गांधी के प्रति श्रद्धा और उनकी गुणवत्ता को लक्ष्य किया गया है। वैसे यह काव्य शैली की दृष्टि से ऐसा मुक्तक-काव्य है जो एक प्रवंधात्मक सूत्र में गुंफित है।

गुलाब खण्डेलवाल के खण्ड-काव्यों का प्रभावगत अध्ययन :

रचना खण्डकाव्य हो, महाकाव्य हो, या मुक्तक हो, उसमें प्रभावशाली घटक होती है कवि की कल्पना-शक्ति। जिस रचना में कल्पना जितनी उच्च कोटि की और व्यापक होगी, वह रचना उतनी ही प्रभावशालिनी होगी। यद्यपि 'कच-देवयानी' की घटना पौराणिक है तथापि कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने उसे अपनी कल्पनाशक्ति से उच्च कोटि की ही नही अपितु श्रेष्ठ और मनोहारिणी बना दिया है। लताओं के बीच से निकलते हुए कच को देवयानी

---

1. 'गांधी-भारती : गुलाब खण्डेलवाल : 'ये सानेट' - से।

ने जब पहली बार देखा तो उसे ऐसा लगा कि मानों प्रकृति के रोम-रोम में नवजीवन और आह्लाद का संचार करता हुआ चंद्रमा ही सागर का वक्ष चीरकर निकल रहा हो -

देखा था पहली बार तुम्हे, जब मैंने लतिका-अंचल से
अकलंक कलानिधि सा कढ़ते, धुलकर नभगंगा के जल से
बन कमल लहरियों में अपना, स्मितिमय प्रतिबिम्ब खिलाते से
पूनो के विस्मित जलधर-से, ऊषा से नयन मिलाते-से
उस दिन ये चंचल आँखें ही, मन को ले अपने साथ उड़ीं
अनुनय, मनुहारें की लाखों, मन की ममता ने, पर न मुड़ीं
('कच-देवयानी', प्रथम सर्ग, पृ0 20-21)

'पर न मुड़ीं' कहकर कवि ने आँखें चार होने की बात बड़ी शालीनता से कह दी है। ऐसे अनेक प्रसंग और कल्पनास्थल हैं जो अत्यंत प्रभावशाली बन पड़े हैं। प्रस्तुत खण्डकाव्य की वैचारिक सम्पदा भी इसके प्रभाव का कारण है। इन विचारों में हृदय का मंथन और कवि का चिन्तन है -

इतना न अधीर करो मन को, अपने गौरव का ध्यान करो
यह प्रेम वंचना है, इसमें जीवन को मत बलिदान करो
यदि प्रेम सत्य भी होता तो, कर्तव्य प्रेम से ऊपर है
नन्दन-वन का आशा प्रदीप, कैसे जल सकता भू पर है!
('कच-देवयानी', द्वितीय सर्ग, पृ0 48)

इसी प्रकार 'आलोक-वृत्त' (प्रबंधकाव्य) में कवि ने अपनी कल्पना-शक्ति का चमत्कार दिखाया है। बचपन से ही मोहनदास कर्मचन्द में भविष्य का गांधी दिखायी देने लगा था। उनमें त्याग तपस्या और सत्य-निष्ठा प्रारम्भ से ही विद्यमान थी इसीलिए कवि ने उन्हें प्रारम्भ से ही गुण-सिन्धु मान लिया है। वे प्रारंभ से ही अपने लक्ष्य पर बड़ी सजगता से बढ़ने लगे थे -

एकाकी असहाय सिंह-शिशु ज्यों अजान वन-पथ पर
निर्भय बढ़ता है चढ़कर अपने पौरुष के रथ पर
वैसे ही जीवन के तट पर, एक किशोर खड़ा था
मानव का भविष्य जिसके करतल में मुँदा पड़ा था
('आलोक-वृत्त' : द्वितीय सर्ग : पृ0 9)

'अहल्या' के रूप में अहल्या खंडकाव्य में गुलाब जी ने यौवन की देहली पर चरण रखती एक ऐसी नारी का चित्रण किया है जो अपने यौवन और रूप पर आप ही मुग्ध हो रही है पर जिसे अपने भविष्य की चिंता भी सता रही है -

मैं कली, सूँघ सब जिसे निमिष भर, दें उछाल ?
मैं रत्न, कि रख ले जिसको युग-युग तक सँभाल ?
मैं जीवन तरु का मूल, कि उसका आलबाल ?
मैं विष की प्याली हूँ कि अमृत से भरा थाल ?
हे वृद्ध पितामह ! बोलो
('अहल्या', प्रथम सर्ग : छन्द - 7)

जब यौवनागम होता है तब अपेक्षा होती है किसी पुरुष की जो उसे अपनी बलिष्ट बाँहों में भर ले और भावना को कामना से जोड़ ले। कवि ने अहल्या के रूप-यौवन की तुलना अमृत-मंथन के अवसर पर मधुघट-वितरण करने वाली मोहिनी के रूप-यौवन से की है।

दानव दौड़े, इस बार प्राण क्या रहे शेष ?
ले गयी अमृत-घट एक बार तो छद्म-वेश
वासुकि विचलित, संत्रस्त जलधि, भू-नभो-देश
मच गयी खलबली देवों में, उन्मद महेश
भुजपाशों में भरने को
('अहल्या' , प्रथम सर्ग, छन्द-3)

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने कहीं ऐसी कल्पना नहीं की है जो विश्वसनीयता की परिधि से बाहर निकल कर हास्यास्पद लगती हो। कल्पना के अनुकूल भाषा प्रस्तुत करना तो कवि की अपनी विशेषता है। प्रबन्धात्मक रचनाओं में कवि की कल्पना-शक्ति, अभिव्यक्ति की कला और चरित्रों का प्रस्तुतीकरण मुख्य रूप से प्रभावी घटक हैं। यह संयोग और प्रसन्नता का विषय है कि हमारे आलोच्य कवि ने उक्त महत्त्वपूर्ण घटकों का सदैव ध्यान रखा है।

पंचम अध्याय

ग़ज़ल-काव्यों एवं अन्य काव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन

-: पंचम अध्याय :-

:: ग़ज़ल-काव्यों एवं अन्य काव्यों का आलोचात्मक अध्ययन ::

यह बड़ी विचित्र और उल्लेखनीय बात है कि महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की काव्य-साधना इतनी आत्म-संयमित रही है कि उन्होंने उससे जब जैसा वरदान चाहा है, उन्हें सहर्ष प्राप्त हुआ है। साधक जब एकनिष्ठता से किसी दिशा में साधनारत होता है तब कामनाएँ तो उसके पीछे-पीछे दुन्दुभि-घोष करती हुई चलती हैं। जब कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने काव्य-जगत में प्रवेश किया तब उन्होंने देखा कि कविता की अनेक धाराएँ विविध रूपों में प्रवहमान हैं। वे इनके साथ बहे नहीं बल्कि अपने बाहुबल को आजमाते हुए पथ-चयन और भाव-संचयन में लगे। इसके फलस्वरूप उन्होंने कविताएँ, गीत, क्षणिकाएँ, सॉनेट, जैसी विभिन्न प्रकार की रचनाएँ प्रारम्भ की जो काव्य-रूप की दृष्टि से मुक्तक और प्रबन्ध के अन्तर्गत समाहित होती हैं। यों तो उन्होंने काव्य-नाटक, हास्य-प्रधान सामाजिक नाटक और ऐतिहासिक नाटक भी लिखे लेकिन उन्होंने अपने को काव्य-जगत में ही सीमित कर लिया है। और यहीं रहते हुये नये-नये क्षेत्रों में अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय देते रहे हैं। हिन्दी में साधिकार सॉनेट लिखने का श्रेय कविवर गुलाब जी को है। इसी प्रकार उन्होंने हिन्दी में ग़ज़ल कहने का श्रेय भी प्राप्त किया है। यही नहीं, उन्होंने गीतों के क्षेत्र में असाधारण श्रेष्ठता दिखायी है। कहने का आशय यह है कि कवि जिस-जिस दिशा में प्रविष्ट हुआ है, अपनी मौलिकता की छाप छोड़ता चला है।

(क) हिन्दी-ग़ज़ल और गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़ल :

अरबी, फारसी और उर्दू से होकर ग़ज़ल हिन्दी में आयी है। डॉ0 नागेन्द्र का कथन है - 'उत्तरोत्तर लोकव्यापी काव्य की विधा ग़ज़ल का जन्म ईरानी कवि रोदकी की प्रथम रचना के रूप में हुआ। कालान्तर में यही ग़ज़ल अरब से चल कर भारत आयी और पहले उर्दू में, फिर हिन्दी में इतनी प्रचलित हुई कि उसे कवि की कसौटी मान लिया गया।[1] ऐतिहासिक दृष्टि से ग़ज़ल का

---

1. 'रिसते घाव' : राम प्रकाश गोयल : काँधे रखी दर्द की काँवर : डॉ0 नागेन्द्र, पृ0 100.

उद्भव अरब से माना जाता है। आलोचकों का विचार है कि यह काव्य-विधा प्रारम्भ में अरबी से आयी मानी जाती है जहाँ यह प्रारम्भ में अरबी साहित्य में अधिकांशतः वदीव, तश्बीब और कथन के रूप में विकसित हुयी। सातवीं सदी (हिजरी) से इसका महत्त्व बढ़ा है।[1] डॉ0 नरेश की मान्यता है कि प्रारम्भ में जो ग़ज़ल प्रिय और प्रिया की निजी बातों तक सीमित थी, वह इस प्रकार विकसित हुई है - 'प्रकृति-चित्रण के साथ चारण-गीतों का वह विकसित रूप अरबों के साथ ईरान में पहुँचा और दोनों ओर की सभ्यता और संस्कृति के समन्वय के साथ इसमें निखार भी आने लगा। इन्हीं चारण-गीतों के परिष्कृत अंशों से सौन्दर्य-चित्रण, प्रकृति-चित्रण एवं रोमांस-युक्त श्रृंगार-चित्रणवाले अंशों को अलग कर लिया गया जिन्हें ग़ज़ल कहा गया है।[2] डॉ0 कुँवर बेचैन की मान्यता है - 'ग़ज़ल को फारस में लोक-संगीत ही माना जाता है और उसके बाद अरब मिश्र होते हुये भारत में इस विधा के आने की बात स्वीकार की जाती है।'[3]

ग़ज़ल के अर्थ को रूपायित करते हुये 'सफी' नामक शायर ने कहा है -

शायरी क्या है, दिली ज़ज्बात का इज़हार है
दिल अगर बेकार है तो शायरी बेकार है।[4]

और श्री पुरी ने कहा है - ग़ज़ल उर्दू कविता का सर्वश्रेष्ठ, अनूठा और सशक्त काव्य-रूप है। ग़ज़ल का हर शेर स्वतन्त्र एवं सम्पूर्ण होता है। इसके हर शेर में एक नया मजमून होता है। अच्छे शेर की यह भी एक पहचान है कि उसमें चुने हुये सुन्दर और उपयुक्त शब्दों का ही प्रयोग हो। इसमें कोई शब्द न कम हो सके, न ज्यादा हो और न ही बदला जा सके। शेर का हर शब्द बुनियादी होता है।[5] ग़ज़ल को परिभाषित करते हुये डॉ0 कुँवर बेचैन ने कहा है - वस्तुतः, ग़ज़ल हृदय की अनुभूति की सूक्तिमय शैली है, जिसकी अपनी निजी भाषा, निजी भाव, निजी उपमाएँ एवं निजी अलंकार होते है।

---

1. 'उर्दू ग़ज़ल के 50 साल' : डॉ0 अब्दुल खाँ खलील : पृ0 55.
2. 'आधुनिक हिन्दी-कविता में उर्दू तत्त्व' : डॉ0 नरेशः पृ0 25.
3. 'शामियाने काँच के' : डॉ0 कुँअर बेचैन : पृ0 18.
4. 'गजल का अध्ययन' : चानन गोविन्दपुरी : पृ0 11 से उद्धृत।
5. 'ग़ज़ल : एक अध्ययन' : चानन गोविन्दपुरी : पृ0 34-35.

किसी बात को सीधे-सीधे कह देना ग़ज़ल को पसन्द नहीं; जो कुछ कहा जाता है संकेतों में। इसीलिए गागर में सागर है।[1] और डॉ0 अग्रवाल ने कहा है - 'ग़ज़ल की कला संक्षेप में चिन्तन, विचार तथा भावना की कला है।'[2] ग़ज़ल वैयक्तिक रचना है जिसके उत्तरोत्तर विकास में कथ्य और शिल्प का आकाश विस्तृत होता चला गया है।

हिन्दी-ग़ज़ल :

साहित्य को काल और क्षेत्र की सीमाओं में नही बाँधा जा सकता। साहित्य की विधाएँ, शैलियाँ, रूप-विधान, छन्द-विधान आदि समस्त सीमाएँ लाँघकर विश्व में व्यापक से विराट् की ओर अग्रसर होती हैं। ग़ज़ल ने भले ही अरबी में जन्म लिया हो लेकिन आज वह हिन्दी में बड़ी ही महत्त्वपूर्ण विधा के रूप में अपनायी जा रही है। श्री तुषार ने लिखा है - 'आजकल ग़ज़ल बहुत लोकप्रिय है। हिन्दी साहित्य में अब यह प्रमुख विधा का रूप ले रही है। हिन्दी में ग़ज़ल उर्दू से आयी है, ऐसे में उस पर उर्दू का प्रभाव स्वाभाविक है पर फिर भी अब हिन्दी ग़ज़ल अपनी अलग जमीन तैयार कर रही है तथा मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि उर्दू ग़ज़ल भी अपने मूल विषय-क्षेत्र से निकल कर जन-जीवन के दुख-दर्द में शामिल हो रही है।'[3] निस्सन्देह, हिन्दी ग़ज़ल ने जीवन की तमाम समस्याओं को अपनी विषय-वस्तु की सीमा में समेट लिया है। 'आज यह निर्विवाद है कि ग़ज़ल अब साहित्य की जरूरत है, पूर्व में भी जरूरत रही है और आगे भी रहेगी। पूर्व में देखें तो ग़ज़ल कबीर से शुरू होकर भारतेन्दु, जयशंकर प्रसाद की पीढ़ी से होकर दुष्यन्त कुमार के बाद नवोदित रचनाकारों तक पहुँच रही है। बड़े गर्व की बात है कि अब वे पत्र-पत्रिकाएँ जो ग़ज़ल को साहित्य न मानकर हेय दृष्टि से देखती थीं, ग़ज़लों

---

1. 'शामियाने काँच के' : डॉ0 कुँवर बेचैन : पृ0 10.
2. 'हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ गजलें' : डॉ0 गिरिराजशरण अग्रवाल : पृ0 11.
3. 'अमर उजाला' : 19 दिस0 1993 : रविवासरीय परिशिष्ट : हिन्दी ग़ज़ल : 'चुनौतियों और समाधान' : नित्यानन्द तुषार : पृ0 2.

को आकर्षक साज-सज्जा के साथ प्रमुखता से प्रकाशित कर रही हैं। अनेक साहित्यिक पत्र-पत्रिकायें ग़ज़ल-अंक, ग़ज़ल-विशेषांक आदि निकाल रही हैं, सहयोगी-आधार पर संकलन निकाले जा रहे है।"[1] वास्तव में, वर्तमान में प्रत्येक हिन्दी-कवि ग़ज़ल को चुनौती मान कर रचना में संलग्न है। इसे हिन्दी-साहित्य में शुभ लक्षण मानना चाहिए।

ग़ज़ल में हिन्दी-शब्दों के प्रयोग मात्र से ग़ज़ल हिन्दी की नहीं हो जायगी। ग़ज़ल के लिये अपेक्षित है - ग़ज़ल-बयानी। ग़ज़ल कहना आसान नहीं है। शायर की नज़र दूसरे लोगों से तीखी, विचार-शक्ति कही ऊँची और सूझ-बूझ कहीं गहरी होती है। उसकी बातचीत आम लोगों की तरह गले के आस-पास से नहीं आती बल्कि दिल की अथाह गहराइयों से तासीर की भट्टी में रंगीन होकर आती है।"[2] स्पष्ट है कि शायरी या ग़ज़ल कहने का सम्बन्ध खोखले शब्दों की माला गूँथने में नहीं बल्कि उसे हृदयगत भावुकता में तपाकर उतारने, सजाने में है। इसलिये शायर की दुनिया आम कवियों से सर्वथा भिन्न होती है। ग़ज़ल कहने के लिये उसका पिंगल जानना आवश्यक है। हिन्दी ग़ज़लकारों में दो वर्ग हैं - प्रथम वर्ग, ग़ज़ल की पारम्परिक 19 बहरों में ही ग़ज़ल कहने का पक्षधर है। यदि इससे भिन्न बहर में कोई ग़ज़ल आती है तो शायर के लिए कहा जाता है कि उसे ग़ज़ल का सलीका नहीं आता है और द्वितीय वर्ग उदारवादी है जो यह मानता है कि ग़ज़ल परम्परागत बहरों के अतिरिक्त और बहरों में भी हो सकती है। जैसे- 'कुछ निर्धारित मानदण्डों छन्दों तथा वाग्वैदग्ध्यपूर्ण वचन-वक्रता के कारण उर्दू के अतिरिक्त हिन्दी में भी प्रारम्भ से ही ग़ज़ल लिखी जाती रही है और प्रारम्भिक रचनाकारों ने श्रग्विणी, भुजंग-प्रयात, हरिगीतिका, मधु-मालती, मोदक, पादाकुलक, लावनी, चौपाई इत्यादि छन्दों के माध्यम से ग़ज़ल की रचनाएँ की हैं।[3] कोई भी काव्य-विधा या शैली ऐसी नहीं होती है जो निश्चित किनारों में ही होकर प्रवाहित हो। वह तो स्वच्छन्द नदी की भाँति होती है जो कभी-कभी कटकर नये मार्ग भी बनाती है। इसी प्रकार का परिवर्तन हिन्दी-ग़ज़ल में भी दिखाई दे रहा है।

---

1. ग़ज़ल : चुनौतियाँ और समाधान : नित्यानंद 'तुषार' : पृ0 2.
2. 'ग़ज़ल : एक अध्ययन' चानन गोविन्दपुरी : पृ0 9.
3. 'छाँव की बयार' : सम्पादक डॉ0 मनमोहन शुक्ल : पृ0 स.

ग़ज़ल की यात्रा ज्यों-ज्यों विकसित होती चली है, त्यों-त्यों उसकी विषय-वस्तु का आकाश भी विस्तृत होता चला है इस सन्दर्भ में डॉ0 नागेन्द्र का कथन है - 'आज की वही ग़ज़ल सामाजिक विकृतियों और विसंगतियों, राजनीतिक गतिविधियों, शोषक-शोषित के सम्बन्धों, जीवन में बदलते मूल्यों-मानदण्डों, आदर्शों की व्यथा-कथाओं, सांसारिक उतार-चढ़ावों एवं वर्ग-संघर्षों की बात बड़ी शिष्टता, शालीनता और गम्भीरता से कह रही है।'[1] कुछ इसी प्रकार की विषय-वस्तु लेकर आज कुछ कलमें नहीं शताधिक लेखनियाँ अपनी अभिव्यक्ति ग़ज़ल के रूप में दे रही हैं। ग़ज़ल का भविष्य हिन्दी-ग़ज़ल के रूप में अत्यन्त उज्ज्वल दिखायी दे रहा है।

गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लें :

गुलाब खण्डेलवाल हिन्दी-साहित्य के ऐसे विलक्षण साहित्यकार हैं जिन्होंने साहित्य-साधना करते हुये ऐसी साहित्य-गंगा प्रवाहित की है जिसने न केवल मानव-हृदय की भूमि को रस-सिक्त किया है बल्कि ऐसे सुन्दर-सुन्दर घाटों का भी निर्माण किया है जहाँ बैठकर मन को शान्ति ही नहीं मिलती है अपितु बुद्धि को विचारने को भी कुछ नया मिल जाता है। वे अपनी साधना में नये-नये प्रयोग भी करते रहे हैं। उन्होंने प्रबन्ध, मुक्तक, गीत, ग़ज़ल और सॉनेट के रूप में जो सुविस्तृत रचना-संसार दिया है वह उनकी मौलिकता का परिचायक है। उन्हें यह बिल्कुल स्वीकार्य नहीं है कि वे घिसी-पिटी लीक पर चलकर यात्रा को विराम दें। नये राजमार्ग हों या नयी-नयी पगडण्डियाँ हों, उन्हें सदैव नया मार्ग निकालकर उस पर चलना अच्छा लगता है। पाठकों को भी इससे एक नया रचना-संसार मिलता है। अद्भुत काव्य-स्रष्टा गुलाब खण्डेलवाल की एक सौ नौ ग़ज़लों का प्रथम संग्रह 1973 ई0 में प्रकाशित हुआ जिसका अनुवचन लिखते हुये श्री त्रिलोचन शास्त्री ने लिखा - जो विरोध ग़ज़ल को हिन्दी में मिला वही गीत को उर्दू में। उर्दू में गीत पर जोरआजमाई चल रही है। पर उर्दू गीतकार अभी तक उपेक्षित हैं और गीत-साहित्य स्वीकृत नहीं हुआ। सोचने की बात है, गीत हिन्दी में और ग़ज़ल उर्दू में क्यों सम्मानित है। स्पष्ट है कि दोनों जगह इन विधाओं की विशिष्ठ उपलब्धियाँ हैं। उर्दू में गीत

---

1. 'रिसते घाव' : रामप्रकाश गोयल : कांधे रखी दर्द की काँवर : डॉ0 नागेन्द्र, पृ0 100.

का तिरस्कार है तो हिन्दी में ग़ज़ल का। हिन्दी में ग़ज़ल कहनेवाले इस गम्भीर भार को सँभालें।'[1] श्री गुलाब खण्डेलवाल ने इस गम्भीर भार को सँभालते हुये लिखा- 'ग़ज़लों के इस प्रयोग को मैं अपने जीवन का एक विशिष्ट मोड़ मानता हूँ। भाषा, भाव और अभिव्यंजना की दृष्टि से नवीन और सभी परम्पराओं से मुक्त होते हुये भी ये ग़ज़लें जीवन की मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित हैं और काव्य की चिरन्तन भाव-भूमि से जुड़ी हुयी हैं। उर्दू साहित्य की विशाल ग़ज़ल-परम्परा से मुहावरेदानी, कथन-भंगिमा आदि बहुत सी विशिष्टताओं को ग्रहण करते हुये इन ग़ज़लों में मैंने अपनी ओर से रसान्विति, बिम्बात्मकता आदि के रूप में उसे कुछ देने का भी प्रयास किया है।'[2] श्री गुलाब खण्डेलवाल के कथन से स्पष्ट है कि उन्होंने ग़ज़ल के क्षेत्र में पदार्पण बहुत सोच-समझकर और तैयारी के साथ किया है।

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने चौथे और अन्तिम ग़ज़ल-संग्रह की भूमिका लिखते हुये स्पष्ट किया 'हिन्दी-ग़ज़ल ने अपने लिये नये-नये क्षेत्रों का चुनाव किया है। उर्दू कविता के ठेठ पुराने माहौल और उसके अधिकांश रूढ़ प्रतीकों से तो स्वंय उर्दू के कवि ही मुँह मोड़ चुके हैं, अतः उन्हें छोड़कर मैंने किसी विशेषता का परिचय नहीं दिया है, फिर भी परम्परित ग़ज़ल को उसके कृत्रिम परिवेश से निकालकर जीवन की सहज भावभूमि पर खड़ा करने का प्रयास मैंने अवश्य किया है।'[3] ग़ज़लों की दुनिया में प्रवेश करते ही कवि को यह अनुभव हो गया कि ग़ज़ल में बहुत कुछ नया भी कहा जा सकता है - 'मैंने अनुभव किया कि ग़ज़ल की विधा जीवन की सभी प्रकार की अनुभूतियों को व्यक्त करने में सक्षम है और इसीलिए 1970 ई0 से अब तक की बदलती हुयी अनुभूतियों को मैं इसमें वाणी दे सका हूँ। हाँ, ग़ज़ल के प्रतीकों की अवश्य अपनी एक मर्यादा है और मेरा प्रयास रहा है कि वे नवीन हों, मौलिक हों, तथा ग़ज़ल की परम्परा के अनुरूप हों। यों अपनी ग़ज़लों का प्रधान और एक मात्र प्रतीक तो मैं स्वयं ही हूँ। अतः ग़ज़ल की विधा में ये मेरी नवीन कविताएँ ही हैं जिनमें मेरे जीवन की अनुभूतियों का निचोड़ विशेष प्रकार की भंगिमा में व्यक्त हुआ

---

1. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : अनुवचनः त्रिलोचन शास्त्री, पृ0 ठ.
2. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : ये गजलों : पृ0 ख.,
3. 'हर सुबह एक ताजा गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका से।

है।'[1] वास्तव में गुलाब जी ने अपनी ग़ज़लों में सर्वत्र नवीनता का परिचय दिया है।

कविश्रेष्ठ गुलाब खण्डेलवाल ने जहाँ एक ओर ग़ज़ल को एक निश्चित दायरे से निकाल अनन्त आकाश में टिका दिया है वहीं दूसरी ओर ग़ज़ल की संगीतात्मकता को अक्षुण्ण बनाये रखने का भी यथाशक्ति प्रयत्न किया है। 'पँखुरिया गुलाब की' (ग़ज़ल-संग्रह) में दो शब्द लिखते हुए कवि ने कहा 'ये ग़ज़लें बहुआयामी हैं। इनमें मेरी आत्माभिव्यक्ति ही नही, आत्म-समर्पण भी है। 'सौ गुलाब खिले' की समस्त विशेषताओं को कायम रखते हुये मैंने इनमें चेतना के नये छोरों को छूने का प्रयास किया है। हिन्दी और उर्दू, साहित्य और संगीत तथा सामान्य सहृदय और साहित्य-मर्मज्ञ, के बीच की खाई को पाटने का प्रयास तो मैंने 'सौ गुलाब खिले' में किया था; प्रस्तुत रचना द्वारा लौकिक और आध्यात्मिक प्रेम को एक साथ अभिव्यक्त करने की चेष्टा की गयी है। कवियों के लिये यह मार्ग नया नहीं है।'[2] कविवर गुलाब खण्डेलवाल का अपनी ग़ज़लों में यह प्रयत्न रहा है कि वे उसमें अधिक से अधिक कारीगरी से अपनी बात कहते हुये जीवन के अनछुये प्रसंगों को, परिवेश को और भावों को नयी भंगिमा के साथ प्रस्तुति दे सकें। गुलाब जी की ग़ज़लों के क्षेत्र में सफलता का आकलन करते हुये उनके एक प्रशंसक आचार्य विश्वनाथ सिंह ने लिखा है- 'कला में यह नित्य-नवता कथ्य की उस रमणीयता से आती है जिसकी अनन्त भंगिमाओं का उद्घाटन एक बारगी न होकर क्रमशः ही होता, शिल्प की उस प्रयोगधर्मिता से आती है जिसकी विच्छिति का झलमल कथ्य का परिच्छद नहीं, उसका शरीर बनकर सार्थक होता है। कथ्य एवं शिल्प का यह परस्पर गुलाब जी की ग़ज़लों की विशेषता तथा इन ग़ज़लों की सामान्यता है।'[3] निस्सन्देह, गुलाब जी ज्यों-ज्यों नयी ग़ज़लों से भारती का भण्डार भरते चले हैं त्यो-त्यों उनकी, ग़ज़लकारों में, प्रसिद्धि की नयी-नयी छतरियाँ सजती गयी हैं।

(ख) ग़ज़ल-संरचना और गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़ल :

जैसे आँधी में घर-आंगन से लेकर अनन्त आकाश तक में कूड़ा-कचरा

---

1. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : कवि की ओर से।
2. 'गुलाब-ग्रथावली' : तृतीय खण्ड : सम्पादक : श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 259.
3. 'हर सुबह एक ताजा गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : आवरण पृष्ठ पर

और धूल भर जाती है वैसे ही ग़ज़ल कहनेवालों की बाढ़ आयी हुई है। ग़ज़ल देखने में सरल और हृदय को रुचिकर लगनेवाली साहित्यिक विधा है लेकिन यदि उसकी कारीगरी पर ध्यान दिया जाय तो पता चलेगा कि वह बहुत नाजुक और कठोर बन्दिशों से सम्बद्ध है। जिस तरह एक अच्छा व्यापारी अपने माल को मण्डी में ले जाने से पूर्व एक निश्चित कसौटी पर परखता है, ठीक उसी प्रकार हर लेखक को अपनी रचना पाठकों तक पहुँचाने से पहले उसे सभी दृष्टिकोणों से परख लेना जरूरी है।[1] गजल को अर्थात् उसके एक-एक शेर को भाव, भाषा और अभिव्यक्ति की कसौटी पर शायर अनेक बार सोने की परीक्षा की तरह कसता है। ग़ज़ल की अपनी शर्त है। यह एक जटिल तकनीकवाली विधा है। ग़ज़ल के आवश्यक तत्त्व बहर, रदीफ़, और काफ़िया हैं। इनमें से बिना रदीफ़ के यदि कोई ग़ज़ल है तो कोई दोष नहीं है। ऐसी ग़ज़ल को ग़ज़ल गैरमुरद्दफ कहा गया है। मगर बिना काफ़िया के कोई गज़ल नहीं होती और जो चीज छिपी रहती है ग़ज़ल में वह है बहर। मेरी नज़र में बहर ग़ज़ल का प्राण है। ग़ज़ल की साँस है बहर। बिना बहर की ग़ज़ल ग़ज़ल नहीं कुछ और है।[2] खेद है कि कुछ और की स्थितिवाली अनेकानेक ग़ज़लें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, संकलनों और संग्रहों के रूप में हिन्दी-साहित्याकाश में छा रही हैं, उसे गर्द-गुबार से भर रही हैं।

ग़ज़ल की रचना के लिये सबसे पहले भाषा की सरलता और ग़ज़ल की बहरों (छन्दों) की जानकारी है। श्री पुरी ने इस सन्दर्भ में लिखा है - 'गजल कहते समय बहर की चाल को पहले दिमाग में अच्छी तरह बैठा लेना बहुत आवश्यक है। और शायर को शेर कहते वक्त इस बात का पूरा-पूरा अहसास होना चाहिए कि वह किस बहर में ग़ज़ल कह रहा है। हर बहर की अपनी एक संगीतमय चाल होती है और कई बहरें तो एक दूसरे से काफी करीब होती हैं।[3] इसलिए सावधानी के अभाव में अथवा प्रमाद के कारण बहर की पकड़ छूटने से ग़ज़ल का रूप नाकाम हो जायगा। बहर के सम्बन्ध में श्री तुषार वार्तालाप के रूप में कहते हैं- 'कितनी बहरों में कहा जाय, यह प्रश्न भी कुछ लोगों ने

---

1. 'ग़ज़ल : एक अध्ययन' चानन गोविन्दपुरी : पृ0 40.
2. 'अमर उजाला' : रविवासरीय परिशिष्ठ : 19 दिसम्बर 1993 : 'हिन्दी-ग़ज़ल : चुनौतियाँ एवं समाधान' : नित्यानन्द तुषार : पृ0 2.
3. 'ग़ज़ल: एक अध्ययन' : चानन गोविन्दपुरी : पृ0 86.

मुझसे पूछा है। एक जगह मैंने पढ़ा है कि स्वयं ग़ालिब साहब ने पन्द्रह बहरों में लिखा है। मेरे विचार से कितनी बहरों में लिखा है, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्वपूर्ण यह है कि क्या लिखा है तथा जो लिखा है, क्या वह सही है। यदि सही है तो उसे उसी बजन में आगे तक कहना चाहिए तथा इस प्रकार की रचना को जो काफिया, रदीफ से संयुक्त है ग़ज़ल कहने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए। मगर शर्त वही है, वजन के नीचे वजन आना चाहिए।[1] यह मान्यता वास्तव में सर्वमान्य है कि बहर का रख-रखाव ही शायर न कर पायेगा तो यह कैसे सम्भव होगा कि उसकी रचना को ग़ज़ल कहा जाय। हमें सन्तोष है कि महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने सतर्कता से अपनी ग़ज़लों में इस मान्यता का पूरा-पूरा ध्यान रखा है।

ग़ज़ल की संरचना में मतला, रदीफ़, काफ़िया, मकता, आदि का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है। ग़ज़ल कहने से पूर्व श्री गुलाब खण्डेलवाल ने ग़ज़ल सरंचना के सभी घटकों का पूरा ध्यान रखा है। यहाँ ग़ज़ल की संरचना के प्रमुख घटकों के आधार पर श्री गुलाब की ग़ज़लों का अध्ययन किया जा रहा है -

मतला :

मतला ग़ज़ल का वह मुख्य भाग है जहाँ से ग़ज़ल का प्रारम्भ होता है, 'उनमान' होता है। मतला की पहचान यह है कि उसकी दोनों पंक्तियों में काफिया प्रयुक्त होता है, जैसे -

आँखों आँखों मुस्कुराना ख़ूब है,
प्यार यह हमसे छिपाना ख़ूब है।[2]

मुस्कुराना और छिपाना दो काफिये हैं। कुछ शायर ग़ज़ल के उनमान में दो-दो मतला भी रखते हैं।

रदीफ़ :

ग़ज़ल में काफिया के बाद जो एक या एक से अधिक शब्द, संगीत एवं प्रभाव के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं उसे रदीफ कहते हैं, जैसे -

---

1. 'अमर उजाला' : रविवासरीय परिशिष्ट : 26 दिसम्बर 1933 : हिन्दी-ग़ज़ल : चुनौतियाँ एवं समाधान' : नित्यानन्द तुषार : पृ0 2.
2. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 44.

प्यार का रंग हज़ारों से अलग होता है
यह इशारा कभी यारों से अलग होता है
यों तो रहती है हर एक फूल की रंगत में बहार
फूल का रंग बहारों से अलग होता है।[1]

उक्त मतला एवं शेर में 'हज़ारों, 'यारों', काफ़िया के पश्चात् से 'अलग होता है' रदीफ़ है जो ग़ज़ल के अन्त तक प्रत्येक शेर की काफ़ियावाली पंक्ति में आयेगा। कुछ ऐसे शायर भी हैं जिन्होंने रदीफ़ की बंदिश को तोड़कर भी ग़ज़लें कही हैं

काफ़िया :

काफिया को हिन्दी में तुकांत कहते है। ग़ज़ल की संरचना में काफिया का विशेष महत्त्व है। ग़ज़ल का सम्पूर्ण प्रभाव काफिया के चुनाव और निर्वाह पर ही निर्भर करता है। काफिया ग़ज़ल का प्राण है, जैसे -

धुन प्यार की जो समझें न उन्हें, यह दिल की कहानी क्या कहिए।
कहना है जो कान में फूलों के, पत्तों की जुबानी क्या कहिए।[2]

कहानी और जुबानी काफिया हैं। हिन्दी के तुकान्तों की अपेक्षा काफिया में मान्यताएँ दूसरे प्रकार की हैं, जैसै -

झलक भी प्यार की कुछ उसमें मिल गयी होती,
हमारी जाँच जो दिल की नजर से की होती।[3]

'गयी'- और 'की' उर्दू के छन्द-विधान में तो काफिया की सीमा में आ जाते हैं लेकिन हिन्दी में तुकान्त नहीं हो सकते हैं। एक बात और। कर्ण-कटु काफिये ग़ज़ल में अच्छे नहीं लगते हैं, जैसे -

आदमी भीतर से भी टूटा हुआ लगता है आज,
ज़िन्दगी ! शीशा तेरा फूटा हुआ लगता है आज

---

1. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 16.
2. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 46.
3. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 46.
4. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 82.

हर नजर खामोश है, हर घर से उठता है धुआँ,
यह शहर का शहर ही लूटा हुआ लगता है आज।[1]

टूटा, फूटा, लूटा जैसे काफिये अच्छे नहीं लगते क्योंकि ग़ज़ल की सौन्दर्य-प्रियता इससे बढ़ती नहीं प्रत्युत घटती है। गुलाब जी ने इस प्रकार की ग़ज़ल न के बराबर ही कही है।

शेर :

'शेअर' मूल शब्द का हिन्दीकरण 'शेर' है। समान्य रूप से मतला को छोड़कर ग़ज़ल में चार या पाँच शेर होते हैं। वैसे शायरों ने तीस-तीस शेरों की भी ग़ज़लें कही हैं। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अधिक लम्बी ग़ज़लें प्रायः नहीं कही हैं। गुलाब जी के कुछ शेर देखिए -

1. **क्या क्या न ले के आये ग़ज़ल में सवाल हम,**
   सब का जवाब उसने दिया एक 'वाह' में।[2]

2. **यह बाजी कोई और ही खेलता है,**
   महज चाल हमसे चलायी गयी है।[3]

3. **किनारों पर किनारे आ रहे हैं,**
   मुझे अब डूबने का ग़म नहीं है।[4]

शेर के सम्बन्ध में यह ज्ञातव्य हो कि ग़ज़ल का प्रत्येक शेर पृथक् भाव-भूमि से उठाया जाता है। इसलिये प्रत्येक शेर की विषय वस्तुतः पृथक् होती है जैसे --

हर सुबह एक ताज़ा गुलाब,
आपकी बेरुखी का जवाब,
वह तो हम हैं कि कहते नहीं,

---

1. 'कुछ और गुलाब' गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 46.
2. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 46.
3. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 82.
4. 'गुलाब ग्रन्थावली': तृतीय खण्डः सम्पादक-श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 306.

कौन पीता है जूठी शराब !
आप नज़रें फिरा लें तो क्या !
आपके हो चुके हैं गुलाब।[1]

उक्त ग़ज़ल में प्रत्येक शेर अलग प्रकार की भावभूमि से उठाया गया है। यहाँ यह भी बता देने में संकोच नहीं है कि यह ग़ज़ल बिना रदीफ़ की है। गुलाब, जवाब, शराब काफिये हैं। शेर के सम्बन्ध में एक बात और। मतला में जो वजन लिया जाता है वही वजन शेर में भी रखा जाता है।

मकता :

मकता ग़ज़ल के उस अंश या शेर को कहते है जिसमें शायर अपना नाम विशेषकर उपमान या तखल्लुस रखता है। सामान्यतः देखा जाता है कि शायर अपने उपनाम को ग़ज़ल के अन्तिम शेर में रखता है और उसका यह प्रयत्न भी रहता है कि उपनाम का उपयोग सार्थक हो। गुलाब जी ने उपनाम की भाँति ही गुलाब शब्द का इस्तेमाल किया है और प्रायः प्रत्येक 'गुलाब' शब्द का मकता में प्रतीक के रूप में प्रयोग किया है, जैसे -

बिखर चली हैं पँखुरियाँ गुलाब की सब ओर,
कोई तो आके सँभालो, बहुत उदास हूँ मैं।'[2]
('सौ गुलाब खिले' , पृ0 30)

यहाँ गुलाब शब्द का सार्थक प्रयोग किया गया है। एक मकता और -
रंग उनका भी बदलता नज़र आयेगा, गुलाब,
थोड़ा इन प्यार की आहों में असर आने दो।'[3]
('कुछ और गुलाब', पृ0 30)

यहाँ गुलाब का प्रयोग सार्थक नहीं पूर्ति मात्र है। हिन्दी में भी पुराने और कुछ इस युग के कवियों ने भी अपने नाम या उपनाम का प्रयोग अपनी कविता में किया है लेकिन इतनी अनिवार्यता के साथ नहीं जितनी उर्दू ग़ज़ल

---

1. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 20.
2. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 28.
3. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 21.

कारों ने । इधर हिन्दी ग़ज़लकारों ने मकता का शेर कहने की परम्परा को प्रायः तोड़ा है। वास्तव में यह आवश्यक भी नहीं है कि मकता का शेर प्रत्येक ग़ज़ल में हो ही।

मतला, रदीफ़, काफ़िया, शेर, मकता आदि से मिलकर ही ग़ज़ल का स्वरूप गठित होता है लेकिन इसके अतिरिक्त ग़ज़ल को जो और चाहिए वह है, भाषा। हिन्दी ग़ज़ल की भाषा आम बोलेजानेवाली भाषा है जिसमें कठिन (अर्थ एवं उच्चारण) शब्दों को न लेकर बोलचाल के शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इस सन्दर्भ में श्री तुषार का कथन है - 'प्रश्न उठता है कि ग़ज़ल की भाषा कैसी हो। साधारण बोलचाल की भाषा तथा बोलचाल की शैली से ग़ज़ल में जीवन्तता आती है। फिर कहने का ढंग तो आते-आते ही आता है। यह एक सतत प्रक्रिया है, कोई इसका फार्मूला नही है।[1] वास्तव में ग़ज़ल की भाषा के लिये कोई निश्चित नियमावली नहीं बनाई जा सकती है। श्री गुलाब खण्डेलवाल ने ग़ज़लों में हिन्दी खड़ी बोली के साथ-साथ उर्दू की बोलचाल की भाषा के रूप को चुना है, जैसे -

खड़ी थी नींव ही आँसू की धार पर जिनकी
महल वे काँच के ढहते हैं आप, क्या कहिये !
कभी तूफान, कभी काँटे, कभी भौंरे हैं
गुलाब सब निबहते हैं आप, क्या कहिये ![2]

यद्यपि निबहते (सहायक क्रिया) शब्द खड़ी बोली के रूप में नही आता है तथापि कवि ने उसे ग़ज़ल की माँग के मुताबिक ढाल लिया है जबकि शब्द तो 'निबाहते' बनेगा। शायद कवि ने निबाहने के स्थान पर निबहना इस लिए किया हो कि दूसरों को निबाहा जाता है परंतु स्वयं अपने आप में निबहना होता है। गुलाब जी को ग़ज़ल में भाषा का सामान्य रूप ही स्वीकार है, यथा -

दर्द पहले दर्द है फिर और चाहे कुछ भी हो,
दर्द को ऐसे नहीं हँसकर उड़ाना चाहिए
दो न मंजिल का पता हमको मगर यह तो कहो
क्या न तुम को पास आकर मुस्कुराना चाहिए[3]

---

1. 'अमर उजाला' : रविवासरीय परिशिष्ट : 26 दिसम्बर, 1993, हिन्दी ग़ज़लः चुनौतियाँ और समाधान : नित्यानन्द तुषार : पृ0 2.
2. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 31.
3. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 61.

कहीं-कहीं ढूँढने पर ग़ज़लों में ऐसी भाषा का रूप भी मिल जाता है जो अधिक रुचिकर नहीं लगता है, जैसे स्वादिष्ट भोजन करते समय कोई पत्थर का छोटा सा टुकड़ा दाँतों के नीचे आ गया हो। एक ग़ज़ल का उनमान देखिए-

आइने में जब उसने अपना चाँद-सा मुखड़ा देखा होगा
बाग़ में कोयल कूकी होगी, गुंचा-गुंचा फूटा होगा[1]

गुंचा-गुंचा' तक पढ़ने और सुनने में आनन्द की सृष्टि हो रही थी। 'फूटा होगा' क़ाफ़िया और रदीफ़' ने आकर स्वाद बिगाड़ दिया। हमें सन्तोष है कि इस प्रकार के प्रयोग, जैसे भी हुए हों, लेकिन उनकी संख्या अँगुलियों पर गिनने भर को ही है।

हिन्दी ग़ज़ल के पुरोधा श्री गुलाब खण्डेलवाल ने ग़ज़ल के क्षेत्र में प्रचलित और अप्रचलित विभिन्न प्रकार की बहरों में ग़ज़लें कही हैं। यहाँ कुछ ग़ज़लों के मुखड़े (मतला या उनमान) दिये जा रहे हैं जिससे बहरों का सहज ही अनुमान लग जायगा क्योंकि मतला में जो वजन रखा जाता है, वही ग़ज़ल के अन्य शेरों में भी होता है -

हमें तो हुक्म हुआ सर झुकाके आने का,
नहीं ख़याल भी उनको नज़र उठाने का
('कुछ और गुलाब' : पृ0 15)

यों तो इस दिल के कदरदान बहुत कम हैं आज
फिर भी लगता है कि आँखें ये तेरी नम हैं आज
('कुछ और गुलाब' : पृ0 16)

कहनी है कोई बात मगर भूल रहे हैं
हैं और भी सौगात, मगर भूल रहे हैं
('कुछ और गुलाब' : पृ0 17)

जो भी वादे कराये गये,
सब हँसी में उड़ाये गये
('कुछ और गुलाब : पृ0 82)

---

1. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 60.

कुछ हम भी लिख गये हैं, तुम्हारी किताब में
गंगा के जल को ढाल न देना शराब में
('सौ गुलाब खिले' – हस्तलिपि का ब्लाक)

दुनिया को अपनी बात सुनाने चले हैं हम,
पत्थर के दिल में प्यास जगाने चले हैं हम
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 1)

आँख मिलते ही छलछलायी क्यों !
तीर पर नाव डगमगायी क्यों !
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 2)

बातें हम अपने प्यार की, उनसे छिपाके कह गये
देखिये, बात क्या बने, कुछ तो बनाके कह गये
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 3)

विश्व उद्यान है, भ्रमण कर लो
फूल मिल जाय तो नमन कर लो
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 4)

अब कहाँ मिलने की सूरत रह गयी !
दिल में बस यादों की रंगत रह गयी
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : पृ0 28)

ख़त्म उन पर हैं सभी शोख़ियाँ जमाने की
जिनको सूझी है सलीबों पे चढ़के गाने की
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : पृ0 35)

जो यहाँ पे आये थे सैर को, नहीं फिर वे लौटके घर गये
जो कहीं न ठहरे थे उम्र भर, वे यहाँ पहुँचके ठहर गये
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : पृ0 62)

यों नज़र से नज़र नहीं मिलती
दिल की धड़कन अगर नहीं मिलती
('गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : पृ0 292)

खुल के आओ तो कोई बात बने
रुख़ मिलाओं तो कोई बात बने
('गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : पृ0 301)

अगर आप दिल से हमारे न होते
तो नज़रों से इतने इशारे न होते
('गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : पृ0 304)

ऊपर दिये हुये ग़ज़लों के मतलों से सहज ही अनुमान हो जाता है कि श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अनेक प्रकार की बहरों में ग़ज़लों की रचना की है। यदि सभी प्रकार की बहरों का नमूना यहाँ दिया जाय तो उनकी संख्या पचास तक पहुँचती है जबकि उर्दू में 19 प्रकार की ग़ज़लों की चर्चा है और ग़ज़ल एक अध्ययन - (चानन गोविन्दपुरी) में 27 बहरों की चर्चा की गई है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना समीचीन प्रतीत हो रहा है कि हिन्दी के ग़ज़लकारों ने हिन्दी छन्दों को लेकर भी ग़ज़लों की रचना की है तथा और अनेक प्रचलित बहरों को भी ग़ज़लों के रूप में ढाल दिया है। इसलिये ग़ज़लों की बहरों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। ग़ज़ल के क्षेत्र में मौलिकता की ध्वजा फहरानेवाले श्री गुलाब खण्डेलवाल ने ग़ज़ल को अनेक नयी बहरें दी हैं। स्मरण रहे कि कभी-कभी प्रयोग असंगत भी होने लगते है। - जैसे यहाँ दी जा रही ग़ज़ल को ग़ज़ल कहने में संकोच-सा लगता है —

खुली-खुली-सी खिड़कियाँ, लुटी-लुटी-सी बस्तियाँ
बसे थे जो कभी यहाँ, गये वे छोड़कर कहाँ !
कहाँ है प्यार की कसम, कहाँ हो तुम, कहाँ हैं हम !
ढलान पर क़दम-क़दम, उतर रहा है कारवाँ
गुलाब अब भी डाल पे, भले ही तुम हो खिल रहे,

कहाँ हैं सुर बहार के, कहाँ है उनकी शोखियाँ।[1]

हिन्दी ग़ज़ल के क्षेत्र में (बहरों में) नये प्रयोगों के सन्दर्भ में श्री गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा भी हैं - मैंने ग़ज़लों की इस विधा के माध्यम से हिन्दी कविता को मात्रिक छन्दों की अनमनीयता तथा यांत्रिकता से निकाल कर उर्दू-कविता की तरह वजन पर आधारित करने का प्रयास किया है। इस विधा में दीर्घ मात्राओं को यथावसर ह्रस्व कर लेने की सुविधा से काव्य में सरलता, सहजता और स्वाभाविकता आ जाती है। वह केवल भाव-प्रकाशन का मार्ग ही सुगम नहीं कर देती है, कविता में लचीलापन, प्रवाह और गेयता भी भर देती है। उससे पंक्तियाँ आसानी से जुबान पर चढ़ जाती हैं और उनमें उद्धरणशीलता आ जाती है।[2] 'सौ गुलाब खिले' के आवरण-पृष्ठ पर श्री गुलाब की ग़ज़लों की प्रशंसा करते हुये आचार्य विश्वनाथ सिंह ने लिखा है - 'गुलाब जी ने पहली बार हिन्दी को वे ग़ज़लें प्रदान की हैं, जो उर्दू की श्रेष्ठतम ग़ज़लों के समकक्ष सगर्व रखी जा सकती हैं। ग़ज़ल की परम्परित मदिरता में गुलाब का ताजा सुरभि-संचार इन ग़ज़लों को हिन्दी का बनाता है। संयम और सुरुचि की वृत्त-रेखा के भीतर इनमें मार्मिक अनुभूतियों की उपलब्धि की गयी है। इन ग़ज़लों में काव्य के व्यंजन के साथ-साथ संगीत का स्वर भी है। ग़ज़लों की बेधकता को तीक्ष्णतर और प्रभाव को अधिक स्थायी बनाने में इनकी सांगीतिक सम्भावनाओं का योगदान प्रमाणित हो चुका है।[3] हिन्दी ग़ज़ल को जिन आयामों की आवश्यकता थी उनका सूत्रपात श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से किया है तथा ग़ज़ल कहने के लिये जिस उच्च कोटि की मानसिकता, शालीनता, गम्भीरता और अभिव्यक्ति की सहजता की आवश्यकता होती है, वह श्री गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों में भली भाँति विद्यमान है।

(ग) गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों का विकास :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने लगभग 360 ग़ज़लें लिखी हैं। यदि प्रतिदिन एक गजल गुनगुनायी जाय तो लगभग एक वर्ष तक मन को उनकी

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली': तृतीय खण्ड: सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदी: पृ0 305.
2. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका से।
3. 'सौ गुलाब खिले' : गुलाब खण्डेलवाल : आवरण-पृष्ठ से।

ग़ज़लों में रमाया जा सकता है। शायर के रूप में गुलाब ज्यों-ज्यों सीढ़ियाँ चढते गये हैं, त्यों-त्यों उनकी ग़ज़लों में शबाब (सौन्दर्य एवं पूर्ण यौवन) आता गया है। कवि ने कविता और ग़ज़ल की बड़ी गम्भीरता से सोच समझकर प्रस्तुति की है। कवि की मान्यता है - जो कविता जीवन की सहज, मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित नहीं होती, वह साहित्य में स्थायी महत्त्व नहीं पाती। काव्यात्मक संवेदना के सहारे जीवन में गहरे उतरकर कवि जो मोती लाता है उनमें सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ ढूँढ़नेवालों को भले ही कोई विशेषता न दिखाई दे, परन्तु जो कविता को कवि के भावाकुल क्षणों की वाणी मानकर उसमें अपने हृदय की निगूढ़ झंकार सुनते हैं, उन्हें काव्य की यह चिरन्तन रस-माधुरी ही अपेक्षित है।[1] वास्तव में कवि ने जो काव्यादर्श प्रस्तुत किया है, उसने स्वयं उसी आदर्श पर चलकर काव्य की रचना की है। ग़ज़ल भी काव्य की एक बहु-चर्चित एवं लोकप्रिय विधा है। उसे समृद्ध करने के लिये श्री गुलाब खण्डेलवाल ने अपनी ओर से कोई न्यूनता नहीं रहने दी है। ग़ज़ल के सन्दर्भ में कवि ने लिखा है - 'ग़ज़ल एक छन्द मात्र नहीं है। यह अभिव्यक्ति की एक अत्यन्त नाजुक विधा है जिसमें सपाटबयानी नहीं चलती। ग़ज़ल के पुराने प्रतीकों में से कुछ को स्वीकार करते हुये मैंने अपनी ओर से कुछ नये प्रतीक भी जोड़े हैं जिनमें गुलाब का प्रतीक भी एक है। नये और पुराने के बीच संतुलन कायम रखते हुये मैंने एक नयी राह, अपनी एक अलग पहचान बनाने की कोशिश की है।[1]2अलग पहचान बनाने की कोशिश ही गुलाब जी की ग़ज़ल-यात्रा का विकास हैं। उन्होंने लिखा भी है -

मेरी ग़ज़लों में ढूँढ़ लेना मुझे
नहीं कोई निशान हो भी तो ।[3]

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने जब ग़ज़लों की दुनिया में प्रवेश किया तब उसके सामने उर्दू में लिखा गया ग़ज़लों का आकाशधर्मी साहित्य था जिसमें मीर, गालिब, दाग, जिगर जैसे बीसियों शायर हो गये हैं जिन्होंने उर्दू ग़ज़ल को चरमोत्कर्ष प्रदान किया है। यह चरमोत्मर्ष गुलाब जी के सामने भी रहा

---

1. 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका से।
2. वही : भूमिका से।
3. 'सौ गुलाब खिले' -ग़ज़ल से 53.

है तभी तो उन्होंने अपने प्रथम ग़ज़ल-संग्रह के प्रारंभ में उर्दू के शायरों को प्रकारान्तर से स्मरण किया है। गीत के पश्चात् ग़ज़ल के क्षेत्र में पदार्पण करते हुये उन्होंने लिखा -

गीत तो सैकड़ों लिखे हमने
कौन आता है रास, देखेंगे
मीर, ग़ालिब को छूना खेल नही
फिर भी करके प्रयास, देखेंगे
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 22)

'करके प्रयास, देखेंगे' वास्तव में कवि ने प्रयास करके देखा है और उसे शत-प्रतिशत सफलता भी मिली है। ग़ज़ल का एक-एक शेर गुलाब जी के दिल का टुकड़ा है -

हरेक शेर था टुकड़ा मेरे दिल का ही मगर,
यही सुना उन्हें कहते, 'नशे की तान में है'
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 23)

गुलाब जी ग़ज़ल की विकास-यात्रा में ऐसे लोगों से सदैव सावधान रहे हैं जो बिना जाने, बिना समझे और बिना क्षमता के ही प्रशंसा के पुल बाँधने प्रारम्भ कर देते हैं। यह प्रशंसा कभी-कभी हास्यास्पद की सीमा को भी लाँघ जाती है। अप्रत्यक्ष रूप से सावधानी की ओर संकेत करते हुये गुलाब जी कहते हैं -

हरेक बात में कहते हो- 'कोई बात नहीं'
घड़ी-घड़ी में वही एक बात, चुप भी रहो
ग़ज़ल न पूरी हुयी थी अभी कि उसने कहा
'बहुत है, ख़ूब है, ग़ालिब भी मात, चुप भी रहो'
('सौ गुलाब खिले' : पृ0 34)

उर्दू के चुनिन्दा शायर और उनके कलाम गुलाब जी को सदैव प्रिय लगे हैं और इस प्रियता ने ही उन्हें ग़ज़लें कहने की मानो सलाह दी। उनकी ऐसी

ग़ज़लें और शेर प्रस्तुत किये जा सकते हैं जो विषय-वस्तु, वजन और शैली में अपने पूर्ववर्तियों से प्रभावित हैं। जैसे -

हमसे यह बीच का परदा भी उठाया न गया
उनको बढ़कर कभी सीने से लगाया न गया
इसपे मचले थे कि देखेंगे तड़पना दिल का
उनसे देखा न गया, हमसे दिखाया न गया
कुछ इस तरह थी नज़र, रात, हमारी बेताब
उनसे छिपते न बना, सामने आया न गया
('गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड, पृ0 267)

उक्त ग़ज़ल की कतिपय पंक्तियों में यदि विषय-वस्तु 'नज़ीर अकबराबादी' से मिलती है तो कहने का अंदाज 'ग़ालिब' से मिलता है। ग़ज़ल कहने के लिये जिसे अंदाज और नाजुकख़याली की आवश्यकता होती है, उसे ही सर्वप्रथम श्री गुलाब ने अपने हाथों में लिया, तभी वे इस पथ पर अग्रसर हुए हैं, जैसे -

(1) देखा किये हैं हमकों सदा दूर ही से आप
अब आइये भी घर में ,नज़र डूब रही है

(2) आये भी लोग आपके मिलकर चले गये
देखा किये हैं दूर खड़े अजनबी से हम

(3) जब तेरा दर करीब होता है
हाल दिल का अजीब होता है
('गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : पृ0 283)

श्री गुलाब की ग़ज़लों के रूप में हिन्दी-ग़ज़ल उर्दू के सघन कुहासे में से निकलती-सी प्रतीत होती है क्योंकि उन्होंने ग़ज़ल को नयी भाव-भूमि और शैली के नये आयाम दिये हैं। कविवर गुलाब ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते गये हैं त्यो-त्यों उनकी ग़जलों में हिन्दी की भाव-भूमि प्रकट होती चली है, जैसे -

(1) मुद्दत हुई है आपसे आँखे मिले हुए
इन सर्द घाटियों में कोई गुल खिले हुए

क्यों दौड़ती रही हैं निगाहें उसी तरफ
दिल के नहीं जो तार भी कुछ हैं मिले हुए

(2) एक अनजान के घेरे में बन्द हैं हम लोग
खुद अपने मन के अँधेरे में बन्द हैं हम लोग
उदास साँझ, हवा सर्द है, बादल हैं घिरे
और परदेश के डेरे में बन्द हैं हम लोग
('गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : पृ0 303)

परम्परावादी ग़ज़ल-प्रशंसकों को यह नयी खोजी गयी भावभूमि रुचिकर नहीं भी लग सकती है क्योंकि हिन्दी-ग़ज़ल एक नये रूप, नये रंग-ढंग और नयी विषयवस्तु लेकर प्रकट हुई है। आदर्श के रूप में प्रेम के परिकर में सभी समा सकते हैं लेकिन सब का अपना अस्तित्व होता है। अतः अस्तित्व-रक्षण का कार्य यथार्थ के धरातल पर ही सहजता से हो सकता है। इसीलिये मानवीय सम्बन्धों, सामाजिक स्थितियों, आध्यात्मिक आचरणों और राजनीतिक गतिविधियों को भी ग़ज़ल के परिसर में लिया गया है। मनुष्य का जीवन विविधताओं से घिरा हुआ है इसलिए गुलाब जी भी विविधता को ग़ज़लों के रूप में प्रस्तुति देते हैं -

धोखा कहें, फरेब कहें, हादसा कहें !
इस ज़िन्दगी को क्या न कहें, और क्या कहें !
('कुछ और गुलाब' : पृ0 26)

'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' के रूप में श्री गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों का चरमोत्कर्ष सामने आता है। ग़ज़ल कहने में जो ऊँचाइयाँ होनी चाहिए वह इस संकलन की ग़ज़लों में है -

आप क्यों दिल को बचाते हैं यों टकराने से !
ये वो प्याला है जो भरता है छलक जाने से
हैं वही आप, वही हम हैं, वही दुनिया है,
बात कुछ और है थोड़ा-सा मुस्कुराने से।
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : पृ0 9)

जब ग़ज़ल का मतला और शेर गोली की तरह चीरता हुआ विस्मित करके आगे बढ़ता है तब ग़ज़ल का वास्तविक आनन्द प्राप्त होता है। उक्त ग़ज़ल का मतला और शेर कुछ ऐसा ही अंदाज लिये हुए हैं। भावों को व्यक्त करने की जो गम्भीरता और सहजता होनी चाहिए वह यहाँ विद्यमान है। हिन्दी ग़ज़ल की भाव-भूमि भारतीय संस्कृति से जुड़ी हुई है। जैसे उर्दू-साहित्य की भावभूमि इस्लाम दर्शन और संस्कृति से प्रभावित है वैसे ही हिन्दी-ग़ज़ल हिन्दू धर्म और भारतीय संस्कृति से जुड़ी है। यद्यपि गुलाब जी ने बड़ी उदारता से भारतीय संस्कृति का आधार लिया है तथापि उक्त तथ्य के संकेत भी हमें यत्रतत्र मिलते हैं, जैसे -

जो कहा, 'मिलेंगे फिर कब', तो हँसा कि राम जानें
ये जुनून मेरे सर में कभी है, कभी नहीं है
('हर सुबह एक ताजा गुलाब' : पृ0 22)

ग़ज़ल विधा में बहुत कुछ कहते-कहते श्री गुलाब जी कहाँ तक आ पहुँचे हैं, यह देखकर उन्हें स्वयं विस्मय एवं ऐकान्तिक संतोष भी हो रहा है। फिर भी कवि की इच्छा है कि उसे वह गन्तव्य भी मिले जो चरमोत्कर्ष के अनुरूप हो। भावांजलि अर्पित करता हुआ कवि कहता है -

कहाँ आ गये चलके हम धीरे-धीरे !
कि रुकने लगे हैं, कदम धीरे-धीरे !
कभी कोई मंज़िल भी मिलकर रहेगी
बढ़ाता चल, ऐ दिल ! कदम धीरे-धीरे
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : पृ0 56)

'चरैवेति, चरैवेति' का सिद्धान्त एवं भारतीय आदर्श बड़ी गम्भीरता से उक्त शेर में समायोजित कर दिये गये हैं। यह प्रस्तुति भारतीय मानसिकता की स्वाभाविकता लिये हुये है। बलात् भावों को ठूँसनेवाली स्थिति नहीं है। हिन्दी को ग़ज़ल के रूप में अवतरित होने के लिये जिस अपेक्षित गाम्भीर्य की आवश्यकता थी, वह गम्भीरता हमें हिन्दी-ग़ज़ल के पुरोधा गुलाब खण्डेलवाल में दिखायी देती है। श्री गंगाशरणसिंह ने इस सन्दर्भ में लिखा है - गुलाब जी ने ग़ज़ल की आत्मा को पहचाना है और न केवल उर्दू-ग़ज़लों का-सा सहज शब्द-विन्यास, बाँकपन और तेवर उनकी ग़ज़लों में मिलता है बल्कि ग़ज़लों के अनुरूप वर्ण्य-विषय देने में तथा सम्प्रेषणीयता और भाव-प्रवाह उत्पन्न करने में भी वे

खरे उतरे हैं। गुलाब जी ने उर्दू ग़ज़लों के मोहक रूप को सांगोपाँग हिन्दी में उतारकर हिन्दी-साहित्य की बहुत बड़ी सेवा की है।[1]

श्री गुलाब खण्डेलवाल ने हिन्दी-ग़ज़ल को वही रूप प्रदान किया है जो हिंदी के युग-प्रवर्तक कवि भारतेंदु हरिश्चंद्र ने खड़ी बोली हिंदी की अन्यान्य विधाओं को दिया था। आज हिंदी जिन ऊँचाइयों का स्पर्श कर रही है उनमें प्रथम चरण श्री गुलाब खण्डेलवाल का ही है। ग़ज़ल के अनुरूप भाषा, रूप, भाव-भंगिमा और सहज शान्त धारावत् गाम्भीर्य देकर श्री गुलाब खण्डेलवाल ने ग़ज़ल को उच्चतम स्थान पर बैठा दिया है।

(घ) महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के अन्य काव्यों से आशय उन काव्यों से है जो गीत (संग्रह), प्रबन्ध (महाकाव्य, खण्डकाव्य और काव्य-नाटक) और ग़ज़ल (संग्रह) के अतिरिक्त हैं। अन्य काव्यों की सीमा में आनेवाले काव्यों की संख्या भी कम नहीं है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत-भारती' में कहा है - 'कच, कुच, कटाक्ष जैसे विषयों पर बहुत कुछ कहा जा चुका है अब इस तरह के पिष्ट-पेषण के लिये कोई स्थान नहीं होना चाहिए। कविता को उन्होंने आनन्ददात्री शिक्षिका कहा। उन्होंने नये-नये विषयों पर काव्य-सृजन की सलाह दी है। उनके परवर्ती कवियों ने उनका अनुसरण भी किया है। नये विषयों का संकेत इस प्रकार है -

अब तो विषय की ओर से, मन की सुरति को फेर दो
जिस ओर गति हो समय की, उस ओर मति को फेर दो
गाया बहुत कुछ राग तुमने, योग और वियोग का
संचार कर दो अब यहाँ, उत्साह का, उद्योग का[2]

यह आदर्श, उपदेश और प्रेरणा श्री गुलाब जी के निम्न गीत में प्रकारान्तर से प्रकट हुई है -

नयी रश्मियाँ आये
नयी भूमि हो, नया गगन, नव क्षितिज, नवीन दिशायें

---

1. 'कुछ और गुलाब' : गुलाब खण्डेलवाल : आशीर्वचन : गंगाशरणसिंह।
2. 'भारत-भारती' : मैथिलीशरण गुप्त : भविष्यत् खण्ड : पृ0 177.

नव कलियाँ अवगुंठन खोलें
पक्षी नये स्वरों में बोलें
वन-वन नवल समीरण डोलें
नव प्रसून लहरायें
नव नक्षत्र-लोक से चलकर
उतरें नव मानव पृथ्वी पर
खुलें द्वार पर द्वार नवलतर
नित नव हो सीमायें।[1]
('गुलाब-ग्रंथावली', प्रथम खंड : पृष्ठ 331)

कवि की कविताओं का प्रथम संग्रह 'कविता' शीर्षक से प्रकाशित हुआ जिसमें कवि को आशा, निराशा, प्रिय, प्रकृति और अपने-पराये अनुभव घेरे हुए हैं। यह सच है कि इन कविताओं में भावुकता अधिक है, क्योंकि कैशोर्य कवि को यौवन की देहरी पर अभी-अभी छोड़कर गया है। इसलिये कवि संकल्प-विकल्प की स्थिति में है। परिचय नामक कविता में कवि अपनी स्थिति स्पष्ट करता है -

अरमानों का संसार लिये आया हूँ
प्राणों में एक पुकार लिये आया हूँ
आहों में बिखर पड़ी जीवन की गाथा
साँसों में हाहाकार लिये आया हूँ
सिर दे सौदा तैयार किया करता हूँ
फिर भी जीवन को प्यार किया करता हूँ
ज्ञानी ! ये तेरे तर्क न मुझको भाते
मैं मस्ती का इज़हार किया करता हूँ[2]

'कविता' नामक संग्रह के अन्तर्गत प्रकाशित कविताएँ, रूप की दृष्टि से मुक्तक, गीत और तुकान्त कविताएँ हैं। मुक्तक रूप में कविताओं को देखकर यह सहज ही कहा जा सकता है कि भविष्य का कवि, महाकवि झाँकता-सा

---

1. 'सब कुछ कृष्णार्पणम' : गुलाब खण्डेलवाल : गीत सं 4.
2. 'कविता' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 39.

प्रतीत होता है। छायावाद और रहस्यवाद का प्रभाव भी इन रचनाओं पर स्पष्ट रूप से दिखायी देता है, जैसे -

छायावादी प्रभाव -

अब क्षीण राग
हौले सुर में बजता विहाग
फिर तार मींच
झनकार खींच
जाता नभ में अस्तित्व त्याग
कर याद मिलन के मधुर चित्र
अब भरता है ठण्डी उसाँस
लघु-लघु प्रदीप, लघु-लघु प्रकाश।[1]

रहस्यवादी प्रभाव -

दूर से मुझको बुलाती एक ध्वनि-सी आ रही है
उर्मियों के जाल में कोई सलोनी गा रही है
पास जाना चाहता मैं रूप की उस रागिनी के
स्वप्न की प्रतिमा मगर वह दूर होती जा रही है[2]

'कविता' की कविताओं पर प्रसाद, पन्त और निराला का प्रभाव सीधे- सीधे देखा जा सकता है।

जिन प्रभावों को लेकर गुलाब जी ने 'कविता' के रूप में अपनी काव्या-यात्रा प्रारम्भ की थी, उनका सबसे अच्छा उदाहरण 'ऊसर का फूल' है। मौलिकता का मुकुल धीरे-धीरे पुष्प का रूप धारण करने लगा है। गुलाब जी की सबसे बड़ी विशेषता यह दिखती है कि वे कोई भी बात उलझाकर नही, सहजता और स्पष्टता से कहते हैं। कवि ने बिछुड़ी हुई अन्तर्वासिनी प्रिया का पुनः दर्शन किया और वह विकल हो गया -

कितने दिन के बाद तुम्हें देखा मैंने, सुकुमारी !
कितने दिन पर सुनी आज, यह मीठी हँसी तुम्हारी

---

1. 'कविता' : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 36. 2. वही : पृ0 42.

भौंहों का नर्तन बिजली-सा, लज्जारुण कपोल का रंग
दीपक-से दृग में कौतूहल, हर्ष और उन्माद तरंग
किन्तु दूसरे ही क्षण छाया तम पलकों पर सिहरे अंग
उदासीनता में फिर सहसा कँपकर डूब गये भ्रू-भंग
मैंने यह सब देखा
पढ़ी भाग्य की रेखा
जाना मैंने, हाय ! उसी क्षण
संसृति का कठोर परिवर्तन।[1]
गहन निराशा बीच समायी पुनर्मिलन की मधुर उमंग
थथक उठी चेतना हृदय पर चलती थी ज्यों आरी
हुई परायी वस्तु, हाय ! जो प्राणों से थी प्यारी !

उपर्युक्त कविता में बिम्ब-विधान तो देखते ही बनता है। बिछुड़ी हुई प्रिया से पुनर्मिलन का इतना सुन्दर और स्वाभाविक चित्रण अन्यत्र सहज ही नहीं मिलेगा। भाषा में भावों का गुम्फन अत्यन्त मनमोहक है।

'नूपुरबँधे चरण' की कविताएँ रूप की दृष्टि से विविधता लिये हुये हैं। 'एक कुम्हार-बाला के प्रति', 'हवा का राजकुमार और रात की रानी' 'मृगतृष्णा', 'जादू का देश' लम्बी कविताएँ हैं जो किसी भी प्रकार के कथानक को लेकर लिखने के अभ्यास को और भविष्य के प्रबन्धात्मक रचनाओं के प्रणयन को रेखांकित करती हैं। इन रचनाओं में कल्पना-शक्ति, भावों का निर्वहन, अभिव्यक्ति की गम्भीरता और भाषा की सहजता उसी प्रकार प्रकट हुई है जैसे प्रभात में गुलाब अपना कोष खोलता है। प्रस्तुत रचना-संग्रह में मानों कवि विभिन्न रूपों में अपने यौवन की देहरी पर आ गया हैं। कुम्हार की बालिका को उसके बनाये खिलौनों के माध्यम से उसके भावी जीवन की कल्पनाओं की भी वह झलक दे देता है। कवि पूछता है -

किस राजा का कुँवर अरी, यह कौन देश से आया
चढ़ा अश्व पर तू ने जिसका तिरछा मुकुट बनाया ?

---

1. 'गुलाब-ग्रंथावली': प्रथम खण्ड: सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी पृ0 97.

बाने लाल, जड़ाऊ कटि में असि, पग बिना सजाया,
क्या यह क्षीण मूँछवाला गोरा पति तुझको भाया ?
या वह ऊँचा बाँध मुरेठा
सैनिक जो सित हय पर बैठा
अथवा जो पलड़ों पर
तौल रहा जौ झुककर,?
किम्वा इस धीवर पर तूने अपना हृदय लुटाया ?[1]
या रुचती तुझको उस तरुण खेतिहर की छवि बाँकी
जैसा एक लजाया उस दिन सुनकर बातें माँ की ?

प्रणय का अर्थ एकाकार होना और पूर्ण समर्पिण और संतुष्ट होना है, इस रहस्य को युवा कवि गुलाब खण्डेलवाल ने अपनी कल्पना-शक्ति से यथार्थ में शब्दायित कर दिया है। यथा -

साँस में तुमने जलाये दीप, मैं हँसने लगी थी,
प्रेम की मनुहार पाकर, स्वप्न में बसने लगी थी,
पी गयी ज्वाला अमरता की तुम्हारी दृष्टि से मैं
चाँद था पीला, गगन में चाँदनी धँसने लगी थी,
चटकती थीं रुपहली कलियाँ लताओं पर टँगी,
जब तुम्हारे अंक में मैं बीण-सी बजने लगी।[2]

इस प्रकार के संयोग और वियोग, हर्ष और विषाद तथा जीवन के और जीवन के बाद के शताधिक कल्पित भाव-कल्प, कृति-तल्प पर अल्प-अल्प को कलपते मन को कवि ने प्रदान किये हैं कि मन सन्तोष का अनुभव कर विभोर हो उठता है।

'मेरे भारत, मेरे स्वदेश' गुलाब जी की सर्वथा भिन्न प्रकार की कृति है। 1962 ई0 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया और हमें पराजय का मुँह भी देखना पडा। कवि ने राष्ट्र के वीरों में अतिरिक्त उत्साह की कल्पना से एक सौ आठ वीर रसात्मक दोहे लिखे हैं जो राजस्थानी वीरकाव्य डिंगल के दोहों के समकक्ष रखे जा सकते हैं। इस संग्रह की रचनाएँ भले ही साधारण हों लेकिन दोहों को देखकर ऐसा कहना पड़ता है कि ये हिन्दी-दोहा-साहित्य

---

1. 'गुलाब-ग्रंथावली': प्रथम खण्ड: सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी: पृ0 114.
2. वही : पृ0 151.

की अनूठी निधि हैं। वीर रसात्मक भावों को बड़ी ओजमयी भाषा में इनमें वाणी दी गयी है। इन दोहों को देखकर यह कल्पना कर पाना सहज नहीं है कि श्रृंगार के क्षेत्र का कवि रातो-रात वीर-रस का कवि कैसे बन गया है। महाकवि गुलाब की यह सहज प्रवृत्ति है कि उन्होंने थोड़े-थोड़े समय के पश्चात् अपने काव्य की शैलियों और रूपों का परिवर्तन कर दिया है। परिवर्तन जीवन्तता का प्रमाण है। सन् 1941 ई0 में छायावादी शैली के विरोध-स्वरूप कवि ने 'सीपी-रचित रेत' शीर्षक से 'सॉनेट' छन्द में रचना की। यह हिन्दी में सर्वथा नया प्रयोग था — एक समूची कृति में ही पाश्चात्य छन्द के रूप में। कवि ने सॉनेट के सन्दर्भ में स्पष्ट रूप से लिखा-- 'मैंने एक-दो अपवादों को छोड़कर शेक्सपीरियन शैली का ही अनुकरण किया है। इन सॉनेटों को पढ़ने में विशेष ध्यान रखने की बात है, पढ़ते समय भावों के अनुसार अर्थात् विराम चिह्नों पर रुकना, न कि पंक्ति के अन्त में, जैसा कि आम तौर पर हिन्दी-कविता में देखा जाता है। इनमें एक भाव, एक पंक्ति से उमड़कर दूसरी पंक्ति में, यही नहीं, कभी-कभी तो एक चरण से उमड़कर दूसरे चरण में सहज ही चला जाता है। मैंने प्रारम्भिक 12 पंक्तियों में तुक का क्रम पहली और तीसरी तथा दूसरी और चौथी पंक्ति में रखा है तथा अन्त में दो पंक्तियाँ समतुकान्त हैं।[1] स्पष्ट है कि कवि ने सॉनेट छन्द में हिन्दी-काव्य-रचना बड़ी सजगता और तैयारी के साथ की है। सफलता बिना साधना के कब हाथ आती है !

श्री गुलाब खण्डेलवाल प्रतिभावान सफल कल्पना-विहारी कवि हैं। कदाचित् उनके मन में यह अभिलाषा आज भी विद्यमान है कि वे नये-से-नये ढंग में काव्य-सृजन करें। यदि 'सीपी-रचित रेत' में सॉनेट छन्द का सफल प्रयोग है तो 'रूप की धूप' में अरबी छन्दों को नवीनता का आवरण पहनाते हुए काव्य-प्रणयन किया गया है। कुशल समीक्षक पं0 सीताराम चतुर्वेदी ने लिखा है - 'श्री गुलाब ने न तो अरबी छन्द-शास्त्र के ही अनुसार रचना की है और न फारसी के अनुसार ही। किन्तु जैसे अवधी और ब्रजभाषा के कवित्व, सवैये तथा चौपाई में कुछ गुरु वर्णो को भी लघु पढ़ने की प्रवृत्ति होती है उसी प्रकार कहीं-कहीं उर्दू के प्रभाव के कारण इनकी रुबाइयों में भी उसकी झलक मिल जाती है। किन्तु सामान्यतः इन्होंने हिन्दी-छन्द-रचना-पद्धति का ही निष्ठापूर्वक अनुसरण किया है।[2] उर्दू की रुबाइयों में जो नाजुकख़यालीवाला रूप देखने को

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 : 03.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड, सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 9

मिलता है उसी रूप की झलक 'रूप की धूप' में मिलती है। प्रेम की कोई अभिव्यक्ति सर्वथा नवीन नहीं होती है। यह सर्वविदित होते हुये भी गुलाब जी के शब्द नूतनता लिये हुए प्रतीत होते है -

आपका सनेह क्या है, डूबते को तिनका है
आशा की किरण है, सहारा दुर्दिन का है
और किसी कामना की चर्चा चलाये कौन
जब सहा जाता नहीं बोझ इसी ऋण का है ![1]

प्रेम में सब कुछ प्रिय का हो जाता है। तब फिर किसी कामना की चर्चा तो वह करे जिसके पास कुछ अपना हो। प्रिय की मधुर स्मृतियों में सब कुछ मधुर-मधुर ही लगता है। कवि की एक मार्मिक कल्पना देखिए

गोद में उठा के बिजलियों ने मुझे रात में,
बादलों की गोद में सुलाया छिमपात में,
नील मधु-पात्र उर्वशी ने दिया भरकर,
एक मधु-स्पर्श लगा शीतल-सा गात में।[2]

उर्दू-साहित्य में इस कोटि की कल्पनाएँ बहुत मिलती हैं कि प्रिया किसी अन्य व्यक्ति से प्रेम-प्रदर्शन करके अपने प्रेमी को तड़पाती है। प्रिय के सामने किसी और की ओर मधुपात्र बढ़ा देना, किसी से खूब हँस-हँसके बातें करना और प्रिय की ओर एक बार देखना भी नहीं आदि-आदि इसके लक्षण हैं। प्रेमी अन्य प्रेमी को अपना प्रतिद्वंदी या रकीब कहता है। इसी बात को गुलाब जी अपने अंदाज में कहते हैं-

बोलना किसीसे, देख लेना किसी और को
हृदय किसीका छीन, देना किसी और को
आपकी कला थी किन्तु काल बनी प्राण की
नाव में बिठा के मुझे खेना किसी और को[3]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : पृ0 106.
2. वही : पृ0 119.
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 4.

छिद्रान्वेषियों को यहाँ कुछ न मिलेगा तो 'बिठा के' के स्थान पर 'बैठा के' होना चाहिए था, जैसे छिद्र खोजने पड़ेंगे, जबकि यहाँ नाव में प्रेमी को बिठाकर, किसी दूसरी नौका को लेकर चल देने में कवि ने जो कल्पना की है, वह अप्रतिम है। यों बैठना का बिठानेवाला रूप उसी प्रकार है जैसे देखना का दिखाना होता है या कूदना का कुदाना होता है। इस स्तर की रुबाइयाँ 'रूप की धूप' में बहुत हैं जो शिल्प की दृष्टि से 'हरिऔध' जी का और कथ्य में उर्दू-साहित्य का स्मरण दिलाती हैं। 'हरिऔध' जी ने हिन्दी में चतुष्पदी या चौपदे विभिन्न रूपों में लिखने की जिस काव्य-विधा को प्रारम्भ किया था उसका अनुसरण गुलाब जैसे विरले कवि ने ही किया जबकि इसे अन्य कवियों को भी ग्रहण करना चाहिए था।

जैसे प्रबन्धकाव्य के क्षेत्र में 'उषा' में महाकाव्य का, 'दानवीर बलि' में काव्य-नाटक का और मुक्तक के क्षेत्र में 'गांधी-भारती' में सानेट का, 'रूप की धूप' में रुबाइयों का, 'वीर-भारती' में डिंगल के दोहों का तथा 'दोहा-शतदल' में हिन्दी खड़ी बोली के दोहों का गुलाब जी ने अद्भुत प्रयोग किया एवं ग़ज़ल में हिन्दी ग़ज़लों का नया आकाश खोल दिया है, ऐसे ही कविता के क्षेत्र में नयी कविता के शिल्प-विधान को लेकर उन्होंने ने 'व्यक्ति बनकर आ', बूँदें जो मोती बन गयीं', नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ' , 'कस्तूरी कुण्डल बसे' , 'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ' और 'रेत पर चकमती मणियाँ', नामक अपने कविता-संग्रहों में नई शैली की कविता का रूप प्रस्तुत किया है। इन संग्रहों में जिस कोटि की रचनाएँ हैं उनकी चर्चा करते हुये गुलाब जी लिखते है - 'इन कविताओं के अनुभूति-पक्ष के सम्बन्ध में मैं यही कह सकता हूँ कि कवि न तो साधक है न वैरागी। वह मानवीय दुर्बलताओं से मण्डित एक साधारण प्राणी है जो जीवन के राग और रस को स्वीकार करता है, उनसे मुँह नही मोड़ता। इन रचनाओं में भी जो अनुभूतियाँ व्यक्त हुई हैं, वे हमारे प्रवृत्ति-मार्गी जीवन की सामान्य अनुभूतियाँ नहीं हैं, फिर भी उनमें किन्हीं उदात्त क्षणों का अनुभूत यथार्थ है। वे स्वतः स्फूर्त हैं, किसी काव्य-रीति की उपज नही हैं।[1] इस कथन में कवि ने अपनी मौलिकता की पताका पुनः फहरा दी। स्पष्ट है कि कविवर गुलाब जो कुछ भी कहना चाहते हैं वह एक ख़ूबी के साथ और अपनी पहचान के साथ ही कहना चाहते हैं। वास्तव में जो भीड़ में चलता है उसकी पहचान

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्डः सम्पा0 श्रीनारायण चतुर्वेदीः पृ0 4.

सहज में नहीं बनती है। इसलिये गुलाब जी की भाँति अपने लिए नया मार्ग चुननेवालों से ही साहित्य का विकास संभव है

मुक्त कविता छंद-बंधन से मुक्त अधिकांशत अतुकांत होती है जिसमें भावों को सीधे-सीधे व्यक्त होने का अवसर प्रदान किया जाता है। यदि स्वयमेव उसमें लयबद्धता अथवा संगीतात्मकता का प्रवेश हो जाय तो उसे कोई रोकता नहीं है। बन्धन-मुक्त कविता गद्य के अत्यन्त निकट है। आजकल अपरिपक्व कवियों की साधना-रहित ऐसी कविताओं ने अतुकान्त कविता को केंचुआ छन्द, रबर छन्द, जैसी उपाधियों से अलंकृत कराया है जब कि भावों की वास्तविक अनुभूति को उतारने का यह सीधा-सा राजमार्ग है। इस प्रकार के प्रयोग को लेकर महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने कहा है -

मैं कविता से गद्य पर उतर आया हूँ -
यही तो आपको कहना है,
यह सच है, परन्तु मैंने समझ-बूझकर ही
यह सादा लिवास पहना है !
कभी तो उनकी तरह दिखूँ
जिनके बीच मुझे रहना है।[1]

कविवर गुलाब ने आगे की रचना में इसी विषय को और आगे बढाया है -

आप चाहें तो इन्हें गद्य ही कहें,
पद्य अथवा प्रपद्य ही कहें,
मुझे पूछेंगे तो मैं यही कहूँगा
कि मैने इनमें अपने हृदय की कोमलतम भावनाएँ भर दी हैं
छन्दों का मोह छोड़ कर
अलंकारों से मुँह मोड़कर
कविता की नयी सम्भावनाएँ भर दी हैं।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 15)

यह सच है कि भविष्य की कविता की सम्भावना इस नवीन शैली की कविता में निहित है जहाँ अभिव्यक्ति की सरलता और भावों की गम्भीरता को ही महत्त्व दिया जाता है। जिन भावों को लेकर उपदेशकों ने घण्टों उपदेश दिये

हैं, कविवर गुलाब ने उनके सार को कुछेक पंक्तियों में निबन्धित कर दिया है। सांसारिकता जीवात्मा को दौड़ा-दौड़ा कर थका मारती है और परमपिता का सामीप्य नहीं होने देती है। और तो और, अपने अन्तिम रूप की भी सच्चाई को स्वीकार नही करने देती है। गुलाब जी ने इस भाव को यों व्यक्त किया है —

मैं इन धूलभरी गलियों में
दौड़ते दौड़ते थक गया हूँ
मेरे खेल के सामान सभी बेकार हो चुके हैं,
मेरे पाँवों में काँटे ही काँटे चुभे हैं
मेरे वस्त्र तार-तार हो चुके हैं !
मैं किससे कहूँ कि मुझे मेरे पिता से मिलवा दे !
मुझे अपने कन्धों पर उठाकर ले चले
मेरे लिये नयी पोशाक सिलवा दे !
पता नहीं, लोग क्यों डरते हैं दर्जी के आने से
पुराने के स्थान पर नये वस्त्रों में सजाये जाने से।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 31-32.)

यह दुनिया बड़ी विचित्र है; यहाँ विरोधी और अविरोधी समीकरण मिलते हैं। यहाँ जैसे जी चाहे जिओ, खाओं पीवो, जीवन का वस्त्र सीओ तथा जैसा चाहे राग गाओ सबको सराहने और विरोध अथवा व्यंग्य से कुरेदने वाले मिल जायेंगे। प्रश्न उठते हैं, उत्तर उतराते हैं और अन्त में यही सार निकलता है कि यहाँ जैसे जी चाहे वैसे रहे, यह सोचना रहनेवाले को है कि वह कैसे रहना चाहता है। गुलाब जी इस यथार्थ को एक बाँसुरी के माध्यम से कहते हैं

दुनिया न भली है न बुरी है
यह तो एक पोली बाँसुरी है
जिसे आप चाहे जैसे बजा सकते हैं
चाहे जिस सुर से सजा सकते हैं
प्रश्न यही है - आप इस पर क्या गाना चाहते हैं
हँसना, रोना या केवल गुनगुनाना चाहते हैं।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 101)

---

1. वही : पृ0 14-15.

दुनिया विधाता का बुना हुआ एक ऐसा जाल है जिसे कुतरते या काटते ही आयु बीत जाती है। मनुष्य निरंतर अपनी प्रवृत्तियों से ही लड़ता रहता है जो मर-मरकर भी जी उठती हैं -

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार,
इन पाँचों से लड़ने में ही आयु बीत गयी
ज्ञान और वैराग्य की सारी पूँजी रीत गयी
रक्तबीज-से ये पाँचों मर-मरकर भी नया जीवन पाते रहे
पराजित होकर भी
निरन्तर अपना सिर उठाते रहे।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 124)

आयु के साथ चिन्तन स्वतः अध्यात्मोन्मुखी हो जाता है। भारतीय जीवन की तो यह विशेषता ही है, भले ही पाश्चात्य संस्कृति इस सार्वभौम सत्य को स्वीकारे या न स्वीकारे। गुलाब जी भले ही जीवन के उत्तर काल में पाश्चात्य संस्कृति के परिवेश से जुड़ गये हों लेकिन उन्होंने अपने भारतीय सोच के धरातल को नहीं बदला है। बल्कि यों कहना चाहिए कि वे ज्यों-ज्यों आयु की सीढ़िया चढ़ते जा रहे हैं, त्यों-त्यों रचनाओं में गाम्भीर्य और अध्यात्म के नित्य नूतन कलश उड़ेलते चले जा रहे हैं। श्री मद्भगवद्गीता के ज्ञान को उन्होंने भाँति-भाँति की प्रस्तुति दी है। जीवन और मृत्यु को लेकर कवि कहता है -

कोई कितनी भी आड़ क्यों न लगाये,
जन्म लेनेवाले की मृत्यु निश्चय होती है।
इस नाटक के अन्त में,
सदा खलनायक की ही विजय होती है।
काल और कुछ नहीं करता
केवल नेपथ्य में बैठा-बैठा
पर्दा उठाता-गिराता है,
हमारी दृष्टि से ओझल होने पर भी
खेल समाप्त नहीं होता, चलता जाता है।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : पृ0 202.)

मनुष्य की सीमाएँ हैं परंतु परमात्मा तो असीम है। परमात्मा तो सागर

की भाँति है जिसमें अगणित लहरें उठती और सिमटती रहती हैं। पानी सागर का सागरत्व है। पानी का रूपान्तरण ही लहर, मानव है। पानी सत्य है और लहर क्षणिक सत्य है। यह क्षणिक सत्य ही जीवन के संघर्ष का कारण है। यह संघर्ष जब तक चलता है तब तक ही जीवन की सार्थकता हैं। जीवन का यही रूप किसी लक्ष्य तक ले जाने में सफल होता है। कवि के शब्दों में -

मैं पथ में ही छूटूँ तो क्या !
तारे-सा ही टूटूँ तो क्या !
निज 'मैं' की कल्पित कारा में,
रोऊँ गाऊँ, रूठूँ तो क्या !
सुखे सिन्धु, लहर मिट जाये, जल तो बिना विवाद रहेगा,
जीवन में संघर्ष न हो तो, जीवन में क्या स्वाद रहेगा !
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : 'शब्दों से परे' : पृ0 298.)

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के सात-आठ कविता संग्रह ऐसे हैं जो विषयवस्तु, अभिव्यक्ति, चिन्तन और भाषा की दृष्टि से अन्य कविता-संग्रहों से सर्वथा भिन्न हैं। इन संग्रहों में कवि अपनी अनुभूतियों और चेतना को स्थूल से सूक्ष्म की ओर उतारता चला गया है। इन कविताओं में न आह है न वाह है बल्कि धीरे-धीरे डूबते जाने की स्थिति है, जहाँ विरोधी समीकरणोंवाला लोक नहीं है और कल्पित परलोक भी नहीं है, बल्कि यों कहना चाहिए, एक ऐसा लोक है जिसमें दिन-रात से रहित भिन्न प्रकार का अलौकिक प्रकाश है, जिसके समक्ष बहुरूपियापन नहीं चल सकता है और न वाक्पटुता ही काम कर सकती है। यदि इन रचनाओं में कुछ है तो गूँगे का गुड़ है, जिसका स्वाद अंदर ही अंदर अनुभव तो किया जा सकता है कहकर बताया नहीं जा सकता। जो जितना चाहेगा इनसे सुख और आनन्द प्राप्त करेगा और भौतिकता से अपेक्षित आध्यात्मिकता की गहराई में मौन भाव से उतरता जायगा। इन रचनाओं में कवि सच्चे अर्थों में मनीषी के रूप में अवतरित हुआ है।

षष्ठ अध्याय

प्रबन्धरूपात्मक काव्यों का मूल्यांकन

-: षष्ठ अध्याय :-

:: प्रबन्धरूपात्मक काव्यों का मूल्यांकन ::

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के साहित्य-सृजन की विलक्षणता सर्वथा अवलोकनीय है कि उन्होंने प्रबन्ध-काव्य, महाकाव्य, खण्ड-काव्य और मुक्तक-काव्य, गीत-काव्य आदि हिन्दी के प्रचलित रूपों में तो रचना की ही है, इसके अतिरिक्त डिंगल-शैली में 'वीर-भारती', हिन्दी की दोहा-शैली में 'दोहा शतदल', अरबी-फारसी-शैली में मुक्तक (चौपदे), अंग्रेजी के प्रसिद्ध छन्द 'सानेट' में 'गांधी-भारती' तथा 'सीपी-रचित रेत' और उर्दू की प्रसिद्ध काव्य-शैली ग़ज़ल को चार ग़ज़ल-संग्रहों के रूप में प्रस्तुति दी है। कहने का आशय यह है कि कवि ने हिन्दी-काव्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है तभी वे गुलाब की भाँति मन-मस्तिष्क में रचते-पचते चले जा रहे हैं।

कविवर गुलाब खण्डेलवाल को हिन्दी-काव्य की सेवा करते हुये छठा दशक प्रारम्भ हो गया है। उन्होंने अपने काव्य में हिन्दी-साहित्य की विलक्षण ऊँचाईयों का स्पर्श किया है। कवि का प्रतिपाद्य बहुआयामी है और व्यापक भी है। कवि के सम्पूर्ण प्रतिपाद्य को सामने लाने के लिये एवं अध्ययन को सम्यक् रूप देने के लिये 'षष्ठ अध्याय' (प्रस्तुत अध्याय) में प्रबन्ध-रूपात्मक काव्यों को तथा सप्तम अध्याय में मुक्तक-काव्यों को लिया जा रहा है। प्रबन्ध रूपात्मक दृष्टि से कवि ने एक महाकाव्य 'उषा' तथा 'अहल्या', 'कच-देवयानी' और 'आलोक-वृत्त', तीन खण्डकाव्य तथा 'दानवीर बलि' काव्य-नाटक की रचना की है। यहाँ प्रत्येक रूपात्मक रचना के प्रतिपाद्य पर मूल्यांकनात्मक दृष्टिपात किया जा रहा है -

(क) 'उषा' महाकाव्य का प्रतिपाद्य :

'उषा' महाकाव्य महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की कीर्ति का मेरुदण्ड है। कवि ने अपने अभिलषित को प्रतिपादित करने के लिये सर्वथा काल्पनिक कथानक को चुना है जिससे कवि घटनाओं, पात्रों और चरित्रगत मान्यताओं को पूर्वाग्रहों से मुक्ति दिलाकर अभीप्सित की ओर बढ़ सके। 'उषा' महाकाव्य की कथा काल्पनिक अवश्य है, लेकिन अविश्वसनीय कदापि नहीं है। सामान्य जीवन

में इस प्रकार घटनाओं को लेकर लोग जीवन जीते हैं और कड़वे घूँट पीते हुए अनुभवों के सहारे आगे बढ़ते हैं। राजीव और प्रभात-रूपी दोनों कोणों को उषा-रूपी बिन्दु से निबन्धन मिलता है लेकिन कष्ट की कठिन आग उषा और राजीव को झेलनी पड़ती है जबकि प्रभात का जीवन प्रेम की ऐसी पाठशाला बन चुका है जो अनन्त विषय-वस्तु अपने में समेटे है। किरण एक ऐसी नारी-पात्र है जो सांसारिक संघर्षो से प्रायः दूर शान्त पयस्विनी की भाँति है। वह राजीव के जीवन के तमस को मानों अपने आलोक से भरकर आनन्द बना देती है। 'उषा' के पात्र जीवन के सुख को तलाशते हैं, जिसे प्रेम के प्रंसग में जानते हुये भी परिस्थितियों के मोहजाल में भटकते हैं। कवि जीवन और प्रेम की सीमा का अंकन करता हुआ कहता है -

भीख स्नेह की सजल नयन कितनी ही माँगें,
कोई लौट सका है जीवन में बढ़ आगे !
जीवन तो बस एक दाँव, हारे या जीते,
आये मुट्ठी बाँध, चले युग कर ले रीते।
('उषा' एकादश सर्ग : पृ0 127)

आधुनिक युग में मानवता को सर्वोपरि माना गया है। इसीलिए साहित्य की किसी भी विधा को देखा जाय तो उसमें मानवता को सर्वोच्च शिखर पर बैठाने की बात सतर्कता के साथ अवश्य कही गयी है। मानवता के आँगन में रखे हुये गमलों में सभी धर्मो के पौधों को समान रूप से विकसित होने का अवसर मिलता है। मानवता और प्रेम 'उषा' महाकाव्य के प्रतिपाद्य हैं। प्रभात उषा से समस्त सामाजिक बन्धनों को तोड़, एकाकार होने की बात कहता है। मानवता धर्म को श्रेष्ठ बताते हुये कवि ने अन्य मान्यताओं को छलना कहा है। प्रभात-उषा से कहता है -

आप बने अपने बन्धन हम, तोड़ सभी सीमाएँ,
मानव मन की उज्ज्वलता के गीत विहग-से गायें,
जीवन-पल्लव गूँजे ऊपर, नीचे, दायें, बाँयें,
बस मानवता धर्म एक है, अन्य सभी छलनाएँ।
(उषा : प्रथम सर्ग : पृ0 6)

लेकिन विचित्रता देखिए; मनुष्य ने ही मनुष्यता पर क्रुरतम छाया बिखेरी है। मनुष्यता के ह्रास से सृष्टि को आघात पहुँच रहा है। यदि ह्रास का क्रम यों ही चलता रहा तो पृथ्वी तेजहीन हो जायगी और आकाश तक धरती पर आ गिरेगा, यथा -

मनुष्यते ! अनन्त में विलीन हो, विलीन हो
कही न व्योम से गिरे दिनेश जोतिहीन हो
कहीं न पाप-ताप से, समस्त सृष्टि क्षार हो
भला यही, निमेष में, धरा विमुक्त-भार हो
('उषा' : अष्टम सर्ग : पृ0 80)

वास्तव में मनुष्य के लिये ऐसे परिवेश को रचना होगा जिसमें मानव-रचित शोक न हों और सर्वत्र सद्प्रवृत्तियों और सद्विचारों की सुन्दर सृष्टि हो। मानवता के निवास एवं प्रकाश के लिये धरित्री के अंक का सम्पन्न होना नितान्त अपेक्षित है। राजीव अपने मन में ऐसी ही कल्पना करता है -

खड़ी नवीन मानवी, नवीन प्राण-दान को
पुनः नयी मनुष्यता, पुनः नया विधान हो
विषाद को, प्रमाद को, भले न रोक हो वहाँ
मनुष्य के रचे नहीं परन्तु शोक हों वहाँ।
समस्त सद्प्रवृत्तियाँ, समस्त सद्विचार ले
नयी मनुष्यते ! उठो, विमुक्त-पंक क्षार से।
उषा-मुखी निशा सुखी, दुखी कहीं न सृष्टि हो
अचिन्त्य आयु सर्वदा, यथेष्ठ स्वर्ण-वृष्टि हो
अयत्न रत्न-सम्भवा, धरा अनुर्वरा न हो
समस्त शक्ति सर्जिका, वृथा परम्परा न हो
('उषा' : अष्टम सर्ग : पृ0 81)

राजीव मानवता का प्रबल पक्षधर है। वह साहस और शौर्य की प्रतिमूर्ति है। विदेश की धरती पर वह जब विजयी होकर लौटा तो उसका उल्लास के साथ स्वागत किया गया। इस कोटि की मनुष्यता एवं मनुष्यता-रक्षक मनुष्य के पगतल में भवविभूतियाँ स्वतः लोटती ही हैं। वह जनता का नयन-रंजन हो

उठता है।[1]

मानवता के पश्चात्, प्रेम 'उषा' महाकाव्य का उल्लेखनीय प्रतिपाद्य है। प्रेम का सम्बन्ध अन्तर्मन से है। समर्पण के अभाव में प्रेम की परिपक्वता सम्पन्न नहीं हो पाती है। सौन्दर्य और सौन्दर्य-रक्षक श्रृंगार तो अस्थायी होता है। हृदयगत प्रसन्नता और सम्बन्धों की प्रगाढ़ता ही प्रेमिल जीवन का आदर्श है और उसे स्थायित्व प्रदान करती है। उषा इस सन्दर्भ में अपने विचारों का अवगुंठन खोलती है -

फिर होगा जीवन का विचार
पहले तो कुसमित यौवन को, दुलरा लेने दो एक बार
बलि देकर भी अपना निजत्व,
मैं बाँध सकूँगी यह परत्व
चल प्रणय, चपल चिर हृदय-तत्त्व,
पल की छवि, पल भर का सिँगार
('उषा' : दशम सर्ग : पृ0 108.)

सम्बन्धों की प्रगाढ़ता और आत्मीयता के अतीन्द्रिय सामीप्य से ही प्रेम की सृष्टि होती है। प्रेम की साक्षात् मूर्ति उषा प्रेम को सम्बोधित करती हुई कहती है -

तुम प्रेम न इतने बनो क्रूर
साँसों में साँस बने फिरते, अन्तर से रहते दूर-दूर
छू लूँ प्रकाश की तरल किरण,
सम्पूर्ण बने स्नेहालिंगन,
छवि की छाया हो निरावरण,
इंगित पर नाचे मन-मयूर
('उषा: दशर्म सर्ग : पृ0 110.)

---

1. **हृदय में शान्ति स्नेह का स्वर्ग,**
दृगों में आशा नव उत्साह।
लालसा से लिपटा अभिमान,
प्राण में भरता शीतल दाह।
('उषा' : अष्टम सर्ग : पृ0 83)

प्रेम की पराकाष्ठा प्रिय की स्मृति में (वियोग की) तपना है। यह संसार का अटल नियम है कि प्रेम करके संसार में किसी को चिर-सुख नहीं मिला। इस यथार्थ से सभी परिचित हैं लेकिन फिर भी इस पथ पर लोग बढ़ते चले जा रहे हैं। उषा प्रभात से प्रेम करती है लेकिन विवाह राजीव के साथ होने जा रहा है। उषा प्रभात से अपने हृदय की बात कहती है -

लिये धड़कता हृदय कभी मैं फिर न यहाँ आऊँगी
प्राण ! तुम्हारी यह मुख-छवि भी देख नहीं पाऊँगी
अब न कभी रख शीश तुम्हारे उर पर मैं गाऊँगी
दीपशिखा-सी कल प्रभात के साथ चली जाऊँगी
देखो तुम अतिशय भावुक हो, मन का धैर्य न खोना
रोना हो तो श्याम निशा में मौन धुप-से रोना
दास परिस्थितियों का सब को ही पड़ता है होना
यही बहुत, मेरे हित उर का रखना कोई कोना
('उषा' : प्रथम सर्ग : पृ0 3)

'उर का रखना कोई कोना' वाक्यांश से उषा के हृदय में प्रेम के प्रति अगाधता झलकती है। समय आने पर जब राजीव प्रभात को लेकर पहुँचता है तो उषा में परिवर्तन आ चुका होता है। लेकिन एकान्त पाकर उषा और प्रभात के नेत्र कुछ और लिखने लगे। यह सब राजीव को विचित्र लगा -

स्मित नयनों से देख रही थी उषा दूसरी ओर
ढँक प्रभात को, जहाँ ले रहा था जन-जलधि हिलोर
दोनों के नयनों में था खिल रहा एक ही भाव
टूट गया था आज हृदय का ज्यों काल्पनिक दुराव
('उषा' : तृतीय सर्ग : पृ0 35)

उषा के मन में प्रभात के प्रति अटूट प्रेम रहा था। उसने अपना तन भले ही राजीव को समर्पित कर दिया लेकिन उसके हृदय में प्रच्छन्न रूप से प्रभात सदैव निवास करता था। अन्त में वह राजीव के साथ न रह कर प्रभात के साथ ही अनन्त में विलीन हो जाती है। राजीव प्रेम और प्रेमिल नारी को लक्ष्य कर अपने अनुभव बतलाता है -

विश्वास प्रेम का ! चंचल लहरों के समान
अनसमझ, अकारण, चिर-अनियंत्रित, अप्रमाण
तिरना जिसमें डूबना पहुँचकर बीच धार

विष अमृत, व्यथा वरदान, जलन शीतल तुषार
मानापमान, सत्पात्र कुपात्र, अनीति नीति
मर्यादा से विपरीत सदा जो चले रीति
* * * * *
धिक् प्रेम ! स्वार्थ के जनक, कनक के भवन दिखा
सीधे नयनों को भी तूने छल दिया सिखा
('उषा' चतुर्थ सर्ग : पृ0 39)

वास्तव में प्रेम का यह भी एक यथार्थ है और इस यथार्थ से कवि ने 'उषा' में अवगत करा दिया है।

नारी के स्वरूप को लेकर आधुनिक युग के साहित्यकारों ने न केवल चर्चा की है प्रत्युत वे किसी निष्कर्ष पर भी पहुँचे हैं। 'उषा' महाकाव्य में नारी के स्वरूप को प्रतिपाद्य बनाया गया है। राजीव उषा के साथ पूर्ण समर्पित भाव से रह रहा था। उसने उसका लगाव पुत्रवती होने पर भी प्रभात के प्रति देखा तो कहा -

दुर्बोध रूप, नारी का मानस क्षितिज गूढ़
तृष्णाकुल फिरता यौवन मृग-सा स्मिति-विमूढ़
वंचना दुग्ध-सी दृष्टि, मुग्धता का श्रृंगार
मधुभरे वचन वे, प्रणय-निशा में प्रथम बार
हृदयों का मधुर मिलन, नयनों का सम्भाषण
परिचय प्राणों का, लाजभरा स्नेहालिंगन
उन्माद मधुर, अपनत्व-भाव, गृह का प्रकाश
वंचना, हाय ! नारी की स्मितिमय भ्रू-विलास
('उषा' : चतुर्थ सर्ग : पृ0 38.)

नारी के वंचना-रूप की बात ही कवि ने 'उषा' में प्रभात के कथन के अन्तर्गत कही है

आज अधिक सुंदर लगती हैं ये आँखें रतनारी
प्रिये ! सत्य ही यह जीवन की अन्तिम भेंट हमारी ?
तुम वंचना नहीं तो क्या हो , ओ रहस्यमय नारी !
अपने हाथों आप चिता पर सोने की तैयारी !
('उषा' : प्रथम सर्ग : पृ0 4)

नारी के सन्दर्भ में भारतीय आदर्श तो यह है कि भारतीय नारी एक बार ही वर चुनती है और विषम से विषम परिस्थितियों में भी उसके साथ जीवन का निर्वाह करती है। नारी को लक्ष्य करके कवि ने कहा है -

एक बार ही नारी का मन नव कदली-सा फलता
एक बार इस उपवन से मधुर वसंत निकलता
('उषा : प्रथम सर्ग : पृ0 5)

'उषा' महाकाव्य की नायिका उषा परिस्थितियों के यथार्थ-जाल में उलझी है। वह राजीव के साथ विवाह को मना नहीं कर पाती है और मन से प्रभात को हटा भी नहीं पाती है। जाने से पूर्व प्रभात से कहती है -

नारी का सर्वस्व हृदय दे दिया बिना कुछ जाने
शेष रहा फिर क्या देने को जाऊँ जिसको लाने !

ऊषा अपने परिवर्तित जीवन में नारीत्व के रहस्य को जान पाती है कि नारी को सुख सर्वस्व-समर्पण से ही मिल सकता है। अतः वह अपने आप को समर्पित कर देने के लिए राजीव के पास पहुँचती है और कहती है -

'उत्सर्ग बिना नारीत्व वृथा' कहती निज आकृति के समीप
ऊषा मन की व्याकुलता से, दोलित आयी पति के समीप
तनु काँप रहा था तिनके-सा बहता अथाह जलधारा में
'सर्वस्व लुटाकर बदले में, पाऊँ बस एक सहारा मैं
आधार किसीका पाकर मन सारा दुख-सुख सह सकता है
सर्वस्व समर्पण करके ही, नारीत्व सुखी रह सकता है'
('उषा' : द्वितीय सर्ग : पृ0 18-19.)

दुर्बल मन से अथवा भावुकता में अथवा अनिश्चय की स्थिति में जो निर्णय लिये जाते हैं उनमें स्थायित्व कम होता है। परंतु नारी के सर्वस्व-समर्पण में उसके जीवन की सार्थकता भी है। समर्पण उसकी दुर्बलता नहीं, उसके प्रेम की विजय है -

दुर्बल मन का संकल्प-पत्र, आँसू की रेखा से लिखती
नारी निज कोमलता में भी दृढ़ प्रस्तर प्रतिमा-सी दिखती
('उषा' : द्वितीय सर्ग : पृ0 22)

जहाँ तक राजीव का सोच है, वह नर-नारी के सम्बन्धों को बड़ी गम्भीरता से लेता है। यह सम्बन्ध तो धरती पर गंगा की निर्मल धारा के समान है। इसे निरन्तर अग्रसर होना चाहिए जिससे सर्वत्र सुख हो -

टिक सकें न जिसमें भाव अपर, वह तीव्र अटल दुस्सहता हो
जीवन गंगा-जल-सा निर्मल, युग तट पावन कर बहता हो
('उषा' : द्वितीय सर्ग : पृ0 24)

नर-नारी-सम्बन्धों को गंगा-सा पवित्र माननेवाला राजीव जब उषा का आकर्षण प्रभात के प्रति देखता है तो उसे उषा का रूप वंचिका नारी का लगता है जिसमें पत्नीत्व की मर्यादा का स्खलन हुआ है। उसका मन ऐसी नारी को धिक्कारता है और वह अपने प्रति उसके प्रेम की भी अवमानना करता है। नारी-हृदय की दुर्बलता को लक्ष्य करके वह कहता है -

विश्वास हृदय का ! शिशु-सा सरल विवेक हीन
खींचा करता जो चित्र प्रणय के नित नवीन
चंचल भावना-नटी का कर-कंदुक अशांत
निशि-दिवस, ज्वलित नक्षत्र-पुंज-सा भ्रमित, भ्रांत
निर्लज्ज, कृतघ्न, कुबुद्धि, कुटिल, दृग-मधुप-संग
फिरता वन-वन कस्तूरी-मोहित ज्यों कुरंग
('उषा' चतुर्थ सर्ग : पृ0 39.)

नारी को लोक में छलना, माया, कुलटा ,इन्द्रजाली आदि के रूप में चित्रित किया जा रहा हो लेकिन राजीव के लिए वह श्रद्धा की पात्र ही रही थी। राजीव ने उषा में जब छलना का रूप देखा तो वह मानो आवेश में इन शब्दों में पुकार उठा -

था भेद यही, नारी ! नारी ! तू सत्य वही
जो युग-युग से मानव की बुद्धि पुकार रही
पढ़ पाया कौन वक्र तेरी भ्रू-लिपि चंचल
स्मिति में है रोष, रोष में प्रेम, प्रेम में छल

तू कनक-भुजंगिनि, उफ, कितनी व्याकुलता ले
मैं सुमन-हार-सा तुझे गले में था डाले !
(उषा : चतुर्थ सर्ग : पृ0 43)

राजीव के चले जाने के बाद उषा उसके प्रति पत्नी का पूर्ण कर्तव्य निभाती है। जब वह राजीव के जाने के बाद प्रभात के प्रेम को अस्वीकार कर देती है तो वह चिढ़कर कहता है -

उषे ! इसी भावुकता ने तो, बेच दिया मन को बेमोल
अपना बन्धन आप बनी जब नारी, कौन सके फिर खोल !
('उषा- : पंचम सर्ग : पृ0 56)

नारी के सम्मानपूर्ण जीवन के लिये पुरुष को सयत्न होना पड़ेगा। नारी स्वयं भी अपने लिये प्रयत्न करे लेकिन उसे सफलता तभी मिलेगी जब पुरुष के मन में वंचकता न हो, भोग, विलास मात्र न हो और उसमें छिपा उसका दोहरा चरित्र न हो। नर और नारी यदि पृथक्-पृथक् प्रयत्न करते हैं तो संसार सुखमय नहीं बन सकता है। इसके लिये नारी से पूर्व नर को सचेत होना पड़ेगा। प्रभात के चरित्र में प्रेम की पवित्रता है और वह सच्चे मन से उषा को चाहता है। वह उसे सुख पहुँचाना चाहता है और इसी लिए वह कहता है -

नारी ! मुक्ति का विधान रचूँगा तेरा मैं
हर लूँगा मन का दैन्य, विराग, अँधेरा मैं
अनुभूति हृदय की सत्य, वंचना माप और
आत्मा को दास बना देता है पाप घोर
(उषा : चतुर्थ सर्ग : पृ0 42)

राजीव ने जब परिस्थितियों पर शनैः-शनैः विजय पायी और किरण ने उसके जीवन में प्रवेश किया तो उसने पुनः सुखी पारिवारिक जीवन का उपभोग किया। किरण का जीवन सांसारिक ऊहापोह की स्थिति से मुक्त हैं । वह एक सहृदया सपत्नी के रूप में, एक आदर्श पत्नी के रूप में और एक उदारमना नारी के रूप में सामने आती है। वास्तव में नारी का रूप किरण के समान होना चाहिए। किरण में भारतीय नारी का रूप समाविष्ट है।

'उषा' महाकाव्य के प्रतिपाद्य की ओर इंगित करते हुये कविवर सुमित्रानन्दन पन्त ने लिखा है - 'नारीत्व के व्यापक पट पर उषा और किरण की भावना का सामंजस्य तथा एकता दिखलाकर कवि ने त्याग और भोग को एक जीवन-सत्य के दो पहलुओं के रूप में अंकित कर विश्व-जीवन की परिस्थितियों के वैचित्र्य को नवीन सार्थकता प्रदान की है और परिस्थिति तथा स्वभाव-सीमा-जनित विफलता तथा निराशा में नवीन आशा का प्रकाश उड़ेल दिया है।'[1] कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने विश्व-स्तर पर नर-नारी सम्बन्धों को लेकर लगे प्रश्न चिह्नों का त्याग और भोग के सन्तुलित बिन्दु पर ले जाकर समाधान करना चाहा है। भारतीय आदर्श है - 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा'। संसार में जो कुछ है उसका त्यागपूर्वक भोग करो। उषा के चरित्र में हम इसी आदर्श का प्रतिफलन देखते हैं।

नारी जब तक नारी-सुलभ दुर्बलता और भावुकता के वृत्त से बाहर आकर गम्भीरता से विचार नहीं करती है तब तक उसका जीवन, संसार और परिवेश सुखमय नहीं हो सकता। नारी-जीवन का सुखी परिवेश ही सुखी संसार की सृष्टि कर सकेगा और दुख-द्वन्द्वों का सहज अन्त हो सकेगा। वह जीवन केवल भोग पर आधारित नहीं होगा। त्याग-वृत्ति हृदय में रखकर ही जीवन को सफल संतुलित और सुखमय बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि महाकवि गुलाब खण्डेलवाल का महाकाव्य, प्रेम के स्वरूप, नारी-नर सम्बन्ध और मानवता के विकास के लिये प्रयत्न जैसे बिन्दुओं को लेकर रचा गया है। इन्हीं प्रतिपादित बिन्दुओं को कवि ने बड़ी उच्चाशयता से अभिव्यक्ति दी है। यदि कवि ने पौराणिक, ऐतिहासिक अथवा ख्याति-प्राप्त कथानक को महाकाव्य के कथाबंध के लिए चुना होता तो इतनी स्वच्छन्दता से अभिलषित को प्रतिपादित नहीं किया जा सकता था।

(ख) 'दानवीर बलि' काव्य-नाटक का प्रतिपाद्य :

'दानवीर बलि' की रचना काव्य-नाटक के रूप में की गयी है। महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने इस काव्य-नाटक को सर्वथा अभिनेय बनाकर और अधिक प्रभावी बना दिया है। 'दानवीर बलि' का प्रतिपाद्य अहंकार से विनाश

---

1. 'उषा' : प्रस्तावना : सुमित्रानन्दन पन्त : गुलाब खण्डेलवाल : पृ0 ख.

है। द्वितीय स्तर पर प्रतिपाद्य दानवत्व पर देवत्व की विजय है। देवासुर-संग्राम अनादि काल से वर्तमान तक चला आ रहा है और देवत्व दानवत्व को अहं से विरत होने का तथा ज्ञान-दान एवं उदारता का सन्देश देता रहा है। देवत्व और दानवत्व अहं को त्याग कर ही समता के बिन्दु पर मिल सकते हैं।

देवराज इन्द्र को इस बात का गर्व है कि धरती जो मक्खी की तरह सूर्य का चक्कर लगा रही है, आज तक कोई भी ऐसा नर-रत्न नहीं दे सकी जो शतक्रतु होकर उसकी सीमा को लाँघ स्वर्ग की सीमा में प्रवेश कर पाता। देवगुरु आचार्य वृहस्पति इन्द्र को गर्व त्यागने के लिये कहते हैं क्योंकि उन्होंने दिव्य नेत्रों से भविष्य की आहट पा ली है —

कुशासनस्थ दिव्य नेत्रों से, सहसा मैंने देखा आज
बलिपुर में उन्मत्त दैत्यगण, सजा रहे थे रण का साज
कोटि-कोटि भीमांग असुर से, रण-यात्रा को उद्यत-से
कज्जल मेघों की आँधी ज्यों रुकी हुई हो पर्वत से
बिजली के गिरने से पहले हो जाता जो नभ का रंग
वैसा ही कुछ खिँचा, शान्त भी तिर्यक था बलि का भ्रू-भंग
(दानवीर बलि : पृ0 3)

शक्ति और सत्ता का मद सबसे भंयकर होता है। देवराज इन्द्र के पास देव-सत्ता और शक्ति के केन्द्र एवं उत्स भी हैं। अतः इन्द्र ने देव गुरु वृहस्पति की बातपर ध्यान न देकर, आक्रोश और प्रतिशोध की आग से जलते हुये बलि के विरुद्ध, शक्ति और सत्ता-मद की हुंकार सुना दी -

1.लाखों बार मक्षिका धरती, रवि का चक्कर काट चुकी
मधु के हित, मधु-संग्रह करके बार सहस्रों बाँट चुकी
तारा के चुम्बन से ऊबे, जलधि-सुता की ओर सकुच
चक्कर लाख लगा आये शशि, यद्यपि सके न पास पहुँच
कलियों का आलिंगन करते, मरुतदेव मलयाचल से
कोटि-कोटि आवर्त भर चुके, नभ, भू-लोक, तलातल से
नही शतक्रतु कहलाने का मिला किसीको श्रेय अभी
तत्त्वों के बल से है दैवी शासन-चक्र अजेय अभी
(दानवीर बलि : पृ0 2)

तपो आज आदित्य बारहों, प्रलय घटायें उमड़ रहीं
उठ पानी में आग लगा दो, जल में डूबी जले मही
धरो दिशाओं को दिग्पालो ! बढ़ो युगल अश्विनीकुमार
आठों बसु, ग्यारहों रुद्रगण, रण को हो जाओ तैयार
काल-महिष पर बैठ भयंकर, शीत मृत्यु का दण्ड लिये
त्रिभुवन के भक्षक यम देखो, आज न कोई असुर जिये
(दानवीर बलि : पृ0 4)

अहंकार की विजय नहीं होती है। इन्द्र की अतुल शक्ति कुछ क्षणों में ही चुक गयी। दूसरी ओर, राजा बलि को प्रतिशोध की आग जला रही थी। इस आग ने इन्द्र को ध्वस्त कर दिया। उन्हें अपना अहं याद आया और वे नत-मस्तक होकर कहने लगे -

दम्भपूर्ण अधिकार, स्वार्थ या चिर-अबाध वासना-विलास
काल बना देवत्व-हेतु, अनियंत्रित शासन-सत्ता ही
हाय, सभी दोषों की जड़ थी, भूल गये, हम भी हैं दास
प्रकृति-शक्ति के और अमरता भी है अन्य-प्रदत्ता ही।
(दानवीर बलि : पृ0 15)

इन्द्र की पराजय और राजा बलि की विजय हुई अर्थात् अथाह और व्यापक अधिकार पाला बदल कर राजा बलि की ओर आ गया। मायावी इन्द्र इन्द्रजाली हो उठा और सहायता, सुझाव और शक्ति की टोह में घूमने लगा। ब्रह्मा ने इन्द्र को परितोषित किया -

व्याकुल बने क्यों, इन्द्र ! सृष्टि का नियम ध्रुव,
पतन के अन्त में उत्थान, उत्थान के
अन्त में पतन-क्रम चक्र-सा है चलता,
सुख-दुख दोनों धूप-छाँह सी हैं नेमि की।
कौन ऐसी माता है, प्रसव-पीड़ा झेले बिना,
देखा मुख जिसने अभीष्ट पुत्र-रत्न का !
(दानवीर बलि : पृ0 31)

इधर राजा बलि ने बाणासुर, कालनेमि, राहू, केतु आदि को देवताओं

से छीने हुए पद दे दिये। बलि को भी अहंकार न ग्रस्त कर ले इस लिए गुरु शुक्राचार्य ने कहा – 'प्रिय वत्स ! तुम्हें तुम्हारे अनुकूल जय-लक्ष्मी मिली है लेकिन उसके अनुरूप तुम्हें बनना भी है। नदी, तालाब की भाँति हलका न हो तुम्हें सागर की तरह गंभीर बनना चाहिए। तुम्हें गर्व को भूलकर साधना में लगना चाहिए –

दानवेन्द्र ! पूरे करो शत अश्वमेध यज्ञ,
शम-दम-नियम कठिन व्रत ठानकर।
सौवीं यज्ञ-आहुति पड़ेगी ज्यों ही अग्नि-मध्य,
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, तीनों झुकेंगे वचन-दत्त
रक्षा को तुम्हारी, मान लेंगे देवराज तुम्हें
लोक-साक्ष्य देकर चिरकाल को प्रसन्न हो।
(दानवीर बलि : पृ0 27)

शुक्राचार्य द्वारा दिया गया यह समय-सापेक्ष प्रबोध है। अहंकार से सुरेन्द्र पद प्राप्त नहीं किया जा सकता है। हाँ, अहंकाररूपी मल को यज्ञादिक जल से धोया जा सकता है।

दानवेन्द्र राजा बलि के अहं को चूर-चूर करने तथा देवों की स्वर्ग में पुनः स्थापना करने को भगवान विष्णु बलि की राजसभा में वामनावतार के रूप में प्रकट हुए और उन्होंने तीन पग भूमि माँगी। राजा बलि ने दान में अहंकार मिला दिया, उन्हें भूमि नापने को कहा –

विप्रवर तीन नगरों की तो बिसात ही क्या
याचक के हित आज तुच्छ तीन लोक भी
तीन पग-से हैं मुझे, साक्षी अग्नि-कुण्ड यह,
('दानवीर बलि' : पृ0 43)
फिर एक बार आप
कीजिए समझ-सोच कोई बड़ी याचना
तीन पग भूमि से,
('दानवीर बलि' : पृ0 44)

अहं और मोहांधकार से दूर शुक्राचार्य देवताओं के छल को जान गये और उन्होंने याचक को विष्णु बताया। लेकिन दानवीरता के अहं में बलि ने

गुरुवर को उत्तर दिया-

आर्य ! धृष्टता क्षमा करें।
विष्णु आप जिन्हें कहते हैं मुझे तो वह
एक दीन, बुद्धिहीन दीखता भिखारी है,
तीन पग भूमि ही बड़ी है जिसके लिये
तीन लोकों-सी
('दानवीर बलि' : पृ0 45)

अहंकार दुर्बुद्धि का जनक है। गुरु अहंकार को दूर कर सद्बुद्धि देता है। लेकिन बलि जैसा अहंकारी गुरु की बात भी नहीं मानता है। तीन पग भूमि का दान करके स्वर्ग का राज्य गँवा देने पर शुक्राचार्य बलि से कहते हैं :-

आँख फाड-फाड़कर किये का फल देख अब,
मूढ़ दानवेश ! आज अपने ही सामने।
पाया हुआ स्वर्ग ज्यों गँवाया तूने, बुद्धिहीन !
निज हठ से ज्यों, हाय, मिट्टी में मिला दिया
सारे दैत्यवंश को, विमूढ़, अविवेकी कौन
होगा ऐसा अन्य सुरासुरों के पुराण में !
भाग्यहीन ! रो अब सदा को राज्य-च्युत हो,
(दानवीर बलि : पृ0 57)

दानवीर बलि के अहंकार की समाप्ति के साथ ही देवताओं की विजय होती है। अहंकार में व्यक्ति अपनी क्षमता और सीमाएँ भूल जाता है। अतः अहंकारी को अन्त में दुख देखना पड़ता है। सुरेन्द्र को जैसा अहंकार था वैसा उन्हें भी दण्ड मिला है। सात्विक मनोवृत्तियाँ ही अर्जित की जानी चाहिए। उनसे ही सर्वांगीण विकास सम्भव है।

'दानवीर बलि' काव्य-नाटक का समय-सापेक्ष प्रतिपाद्य भी है। मातृभूमि के प्रति स्वतन्त्रता से पूर्व, साहित्यकारों के हृदय में अगाध प्रेम था। 'दानवीर बलि' में भी मातृभूमि के प्रति अगाध स्नेह दिखलाया गया है।

युद्धवीर बलि ने इन्द्र के अहंकार को जब धूलि-धूसरित किया तब इन्द्र को अपनी मातृभूमि को छोड़ते हुये आत्यंतिक कष्ट हुआ। इस कष्ट को शब्द देते हुये कवि कहता है -

मातृभूमि ! सुरभूमि ! विदा ओ जन्मभूमि, सुख-भोगों की सुषमामयी प्रतीक, आज से तेरे नन्दन-कानन में, दुग्धवती नदियों में, हीरक-भवनों में, उद्योगों की, कलापूर्ण पुरशालाओं में, चिर-कुसुमायित गिरि-वन में, चिर-वसन्त-गुंजित कुंजों में, नूपुर के रव से मुखरित चिर-नवयुवती बालाओं से कूजित केलिगृहों के बीच, रंभा-तिलोत्तमा-नूपुर-रव-मुखरित, मणि-मुक्ता-मंडित देवसभाओं में अब से मैं फिर न सकूँगा, बरबस खींच निज को दूर लिये जाता हूँ तुमसे, मातु ! क्षमा करना स्वर्गों से सौगुनी बड़ी है और अधिक है प्यारी भी मुझको मेरी प्रिय स्वतंत्रता।
('दानवीर बलि' : पृ0 16)

सुरभूमि जन्मभूमि को छोड़ते समय इन्द्र को अपार कष्ट होता है। इन्द्र के कथन में - 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की कोमल और मानव-जीवन की श्रेष्ठतम भावना अन्तर्निहित है। इन्द्र के हृदय में यह विश्वास है कि आज मैं भले ही जन्म-भूमि को परतन्त्रतारूपी पतझड़ में छोड़कर जा रहा हूँ लेकिन वसन्त अवश्य आयेगा, यथा -

निज को दूर लिये जाता हूँ तुमसे, मातु ! क्षमा करना,
स्वर्गों से सौगुनी बड़ी है और अधिक है प्यारी भी
मुझको मेरी प्रिय स्वतन्त्रता, मत उदास घुट-घुट मरना,
अब पतझड़ है तो आयेगी कल वसन्त की बारी भी।
('दानवीर बलि' : पृ0 16)

काललेमि के कथन में एक अद्भुत उत्प्रेक्षा दी गयी है जिसमें आकाश की ओर बढ़ते हुये दानव-समुदाय को 'माता मही का हर्ष' कहा गया है -

खड़े हो रहे नभ को छूते मानों मातृ मही का हर्ष।
('दानवीर बलि' : पृ0 19)

हम विनम्रतापूर्वक कह सकते हैं कि 'दानवीर बलि' काव्यनाटक में महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने अहंकार पर बुद्धि और विवेक की विजय को

तथा समय-सापेक्ष स्वतन्त्रता तथा मातृभूमि के प्रति अगाध स्नेह को प्रतिपाद्य के रूप में प्रस्तुति दी है। कवि अपने पौराणिक मिथकों से ही परिचित नहीं है बल्कि वह अपने पूर्व गौरव से भी अवगत है। अतः इस गौरव को सामने लाने में वह सर्वथा समर्थ हो सका है।

(ग) 'अहल्या' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य :

कविवर गुलाब खण्डेलवाल द्वारा विरचित 'अहल्या' खण्डकाव्य के कथानक का आधार पुराण और वाल्मीकि रामायण है। 'अहल्या' खण्डकाव्य में कवि ने यह दिखाया है कि भोगों के प्रति अनुरक्ति सहज ही होती है। पूर्ण आत्मसंयमित व्यक्ति भी अद्वितीय सौन्दर्य को सामने पाकर स्वयं को आत्मकेंद्रित नहीं रख पाता है। मनुष्य में अध्यात्म एवं आध्यात्मिक-पुरुष भोगों से विरक्ति को जगाते हैं। इसी सन्दर्भ से मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचन्द्र ने क्षमा की अद्भुत शक्ति से अहल्या के मन को पाप-शाप से मुक्ति देकर आनन्दमयी भक्ति से परिचित कराया। यही 'अहल्या' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य है।

महर्षि गौतम निरन्तर तपोनिष्ठ रहे लेकिन जब गौतमी अकल्पनीय यौवन-राशि ले उनसे मिली तो ऋषिवर अपने को सँभाल न सके। अप्रतिम सुन्दरी अहल्या उन्हें तपस्या की सिद्धि-सी दिखायी दी--

मुड़ देखा मुनि ने ज्यों पूनो की चन्द्रकिरण
मानसलहरों पर करती आयी मधुवर्षण
रजनी की प्रथम तारिका ज्यों आलोक-चरण
उतरी नीले नभ के गवाक्ष पर से निःस्वन
या सिद्धि स्वयं अनुगत थी।

('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द - 17)

भले ही अहल्या में (यौवनागम) के प्रभाव से भोग की स्वाभाविक वृत्ति जगी हो लेकिन प्रथम समर्पण में कवि ने भारतीय नारी के स्वरूप को ही 'अहल्या' में आरोपित किया है -

दृगतारों से छलके छल-छल आँसू कज्जल,
मुनि-चरणों पर झुक कहा अहल्या ने विह्वल
मैं संकल्पित कलिका, कर में लो या दो मल

दे दिया पिता ने जिसे, वही मेरा सम्बल
यह जीवन हाथ उसीके।
तृण-सी समस्त सिद्धियाँ, सुखाशायें भव की
अभिलाषा मुझे ने सुरविलास, पदगौरव की
दो चरण-शरण, प्रभु ! खड़ी पुजारिन यह कब की
प्राणों ने जिसमें स्वीय पूर्णता अनुभव की
नारी तो साथ उसीके।
('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द 23)

उक्त पद्यांश में 'कर में लो या दो मल' से लेकर 'नारी तो साथ उसीके' द्वारा भारतीय नारी के हृदय की एकनिष्ठता पल्लवित, पुष्पित हो गयी है। भारतीय नारी ने जिस पुरुष को एक बार मन में पति के रूप में संकल्पित किया, उसी के सान्निध्य में अपना जीवन बिता दिया है। पौराणिक साहित्य एवं इतिहास में ऐसे शताधिक आख्यान भरे पड़े हैं। 'अहल्या' भी एक ऐसी ही पात्रा है जिसने अपना सर्वस्व समर्पण वृद्ध ऋषि को कर दिया। इसी समर्पण ने मुनि के तपस्वी-मन की छिपी आग में घृत का कार्य किया था।

इन्द्र देवराज है, शक्तिशाली है, श्रीसम्पन्न है और गौरव तथा महिमाओं से मण्डित है लेकिन सब प्रकार से सक्षम होते हुये भी रसिक है, ईर्ष्यालु है, स्त्रैण है तथा लोकशक्ति-निन्दक है।[1] इन्द्र ने जब अहल्या को देखा तो उसमें रसिकत्व जागा और उसका स्त्रैण-दुर्गुण प्रकट हुआ। वह अहल्या को पाने को विकल हो उठा--

1. नभ से जाते सुरपति ने, भू की देख ओर
अन्तर की शान्ति गँवाई
('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द 28)

* * * * *

---

1. मैं क्षीणकाय, निःसम्बल, निर्बल, संन्यासी
तुम वज्रायुध, स्वर्गाधिप, नन्दन के वासी
इस पर भी बुझी न तृषा तुम्हारी सुरसा-सी
कर गये मलिन चोरी से घर आ, मधुहासी
यह सुमन स्नेह-क्रीड़ा का
(प्रथम सर्ग : छन्द - 53)

जीवन से क्या ! सुरपुर से , कल्प वयस से क्या !
धन से, प्रभुता से, त्रिभुवन-विजयी यश से क्या !
विद्युत बन नस-नस में न बहा उस रस से क्या !
रमणी-अपांग विद्धांग प्राण परवश से क्या !
छूटें, छूटें, सब छूटें।

(अहल्या : प्रथम सर्ग : छन्द - 29)

इन्द्र गौतम का वेश धारण करके अहल्या के कुटीर में आया। गौतम ऋषि प्रात के धोखे में संध्या-वंदना के लिए अहल्या को छोड़कर चले गये थे। इन्द्र अहल्या के निकट आकर कहता है -

रानी ! जीवन की ज्योति ! प्रेयसी प्राणोपम !
लगता जैसे तुम मिली आज ही मुझे प्रथम
अन्तर में भर दो, प्रियें ! हृदय का स्नेह चरम
कल मिले या न मिल सके पुनः यह सुखसंगम
रजनी ऐसी मतवाली।

('अहल्या' : प्रथम सर्ग छन्द - 43)

तपस्चर्या से लौटकर इन्द्र को अपनी परिणीता के साथ एकान्त में रस-मग्न देख ऋषिवर ने उसे बहुत फटकारा। अहल्या को भी उन्होंने शापित किया। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि इसमें अहल्या, इन्द्र और ऋषिवर में दोषी कौन है ? कवि के शब्द इस प्रकार हैं -

अपराधी-सा पत्नीत्व खड़ा नत-नयन, मौन,
यौवन-अल्हड़-सा कहता, 'इसमें पाप कौन !'
हँसती सुन्दरता, 'अपना-अपना दृष्टिकोण'
चेतना भीत भी पिये प्रीति की सुरा शोण
दीपक-सी डोल रही थी

('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द - 52)

'इसमें पाप कौन' और 'अपना-अपना दृष्टिकोण' द्वारा कवि ने सर्वथा विचारणीय बिन्दु दिये हैं। भारतीय दृष्टिकोण से अहल्या का कार्य पाप की श्रेणी में है। उसे अपने पतिप्रेम पर अडिग रचना चाहिए था। लेकिन वह किन परिस्थितियों में पतित होती है, यह भी विचारणीय है। यौवन की कुछ अपनी

आकांक्षाएँ होती हैं। यदि अहल्या कहीं स्वयं जाती तो पतित होती लेकिन इन्द्र स्वयं आया और उसके रूप, वाक्चातुर्य तथा सहायकों ने कुछ ऐसा परिवेश बुना कि वह आत्मसमर्पण कर बैठी। अतः उसके पाप की सम्भावना नहीं है। दूसरी ओर, 'अपना-अपना दृष्टिकोण' से स्पष्ट है कि कुछ इस घटना को पाप ओर कुछ इसे पाप-रहित मानेंगे। यदि हम इसके मूल में जायें तो देखेंगे कि ऋषिवर गौतम से दो बार भूल होती है। उन्हें आयु से छोटी कन्या से विवाह नहीं करना चाहिए था जिसे सन्तुष्ट करने की क्षमता उनके तपस्वी-जीवन और वृद्धावस्था में कदापि न थी। भ्रमर-वृत्ति या लम्पट-वृत्ति को तो भटकना ही है। गौतम ऋषि ने दूसरी बार त्रुटि अहल्या को शाप देकर की।[1] वास्तव में, गौतम के इस कार्य में पुरुष-प्रधान सामाजिकता की, नंपुसक क्रोध तथा प्रतिशोध की गंध आती है। अपनी त्रुटियों पर ध्यान न देकर अभिशाप देना तपस्या से अर्जित शक्ति का दुरुपयोग नहीं है तो और क्या है ! साधु-सन्त तथा तपस्वी के लिए यह क्रोध अशोभन है।

ऋषिप्रवर विश्वामित्र के मन में अहल्या के जीवन को दूसरी दिशा में मोड़कर पापमुक्ति की बात आयी। अतः वे राम से बोले -

बोले मुनि - राघव रघुकुल का गौरव न झुके
परित्यक्ता गौतमवधू पाप से शतक्रतु के
यह अबला, दीन, बिचारी
आहत हरिणी-सी उर में विष की लिये चोट
बस तनिक तुम्हारी चरण-रेणु-हित रही लोट
प्रभु ! दो कलंकिनी को करुणा की अभय ओट
ढह जायें जिससे कोटि जन्म के पाप-कोट
फूले उदास फुलवारी।

('अहल्या' : द्वितीय सर्ग : छन्द - 36)

---

1. **जीवन के जड़ सुख-भोग, भोग जो इष्ट तुझे,**
   पत्थर सी आत्मा-रहित न जिसकी प्यास बुझे
   दे मुक्ति चला मैं अब मत देना दोष मुझे

(- 'अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द - 57)

मंगलकर्ता और अमंगल के हर्ता राम ने उसे पाप-मुक्त किया अर्थात् उसे भक्ति की दिशा में मोड़ दिया। अहल्या अपने पाप को भी प्रभु-दर्शन एवं प्रभु-कृपा का हेतु मानने लगी। जीवन में दिशाबोध सहज कार्य नहीं है। अहल्या बोली -

जीवन में जो भी पाप, शाप, लांछना, व्यथा
सब बनें आज कंचन-सी पारस परस यथा
कैसे कह दूँ मैं, देव ! कि जीवन गया वृथा ?
जब जुड़ी अहल्या के सँग पावन रामकथा
कल्याणी, मंगलकारी
जलता न हृदय में ग्रीष्म, नयन सावन होते !
क्यों आते जग में राम न जो रावण होते !
होते न पतित तो कहाँ पतितपावन होते !
प्रभु ! चरण तुम्हारे कैसे मनभावन होते
बनती न शिला जो नारी !

('अहल्या' : द्वितीय सर्ग : छन्द - 40)

राम के अद्भुत और समयोचित प्रबोध से अहल्या न केवल पाप-मुक्त हुई, वह गौतम के साथ ही नयी सृष्टि की रचना में संलग्न हुई।[1] व्यक्ति का सुख सांसारिक भोगों में भटकना नहीं है बल्कि सुखों को इस प्रकार जीवन से लपेटना है कि जीवन लांछित भी न हो और उसे वांछित मिल भी जाय। व्यक्ति को अपने में दृढ़ होना चाहिए। उसे इन्द्र की तरह लोलुप और गौतम की तरह अस्थिर नहीं होना चाहिए जो अहल्या के जीवन को दूषित कर दें।

---

1. **बोले प्रभु करुणा-सजल अहल्ये ! न रो भला,**
तू पावन सदा पूर्णिमा की ज्यों चन्द्रकला
अब और नहीं तपना है।
वह क्षणिक हृदय की दुर्बलता, वह पाप-भार
कल का सारा जीवन जैसे बीती बयार
वह देख आ रहे गौतम, पहला लिये प्यार
अब से नूतन जीवन, नव संसृति में सँवार
जो बीत गया सपना है।
('अहल्या' : द्वितीय सर्ग : छन्द - 41)

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 'अहल्या' खण्डकाव्य के माध्यम से यह बताने का प्रयत्न किया है कि भोगों के प्रति अतिशय एवं सीमाहीन (अमर्यादित) अनुरक्ति लोकापमान तथा अपयश का कारण होती है। इन्द्र जैसी महत्ता को गौतम ऋषि जैसा सामान्य तापस भी सहज अपमानित कर देता है और शाप देता है, यथा –

धिक् सुरपति ! जिस नारीत्व हेतु सुरसदन त्याग
तुम आये इस निर्जन में, वही सहस्रभाग
अंगों में होगी व्याप्त तुम्हारे ज्यों दवाग
यह अयश-कालिमा ले शिर पर, चिर-मलिन काग !
तुम भटकोगे त्रिभुवन में।

('अहल्या' : प्रथम सर्ग : छन्द – 54)

'अहल्या'' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य भोगों की मर्यादा को इंगित करता है। भटकने से पाप, अभिशाप, लांछना, अपयश ही मिलता है। अतः संयमित जीवन को लक्ष्य के रूप में चुनना चाहिए।

(घ) 'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य :

कविपुंगव गुलाब खण्डेलवाल ने महात्मा गांधी के जीवन-वृत्त के कुछ अंशों को लेकर आलोक-वृत्त खण्डकाव्य की रचना की है। गांधी जी ने अपने युग को जो आलोक दिया उससे आलोकित हो कितनी गहन गुफाओं का न केवल उद्धार हुआ बल्कि वे गौरवान्वित हो उठीं। गायकों ने गीत गाये तो भक्तों ने उन्हें पतितपावन कहा और कवियों ने मुक्तक-काव्यों, खण्डकाव्यों और महाकाव्यों की रचना कर अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये। इस महान व्यक्तित्व के पावन चरित्र को देखने का दृष्टिकोण भले भिन्न रहा हो लेकिन अभिलषित यही रहा है कि हम इस महान ज्योतिपुंज की कुछ विशिष्टताओं को ही शब्दायित करें। कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य में कुछ ऐसी घटनाओं को प्रस्तुति दी है जो गांधी जी के दृढ़संकल्पी जीवन को निरूपित करती हैं जिससे भारतीय जीवन में नये-पुराने उन मूल्यों का समायोजन हुआ जिनसे त्याग और तपस्या जैसी आध्यात्मिक क्रियाओं का जीवन के यथार्थ में

अवतरण हुआ और देवत्व का जीवन में समावेश हुआ। 'आलोक-वृत्त' के प्रतिपाद्य को संकेतरूप में यों कहा जा सकता है -

मंत्र पुराने काम न देंगे, मंत्र नया पढ़ना है
मानवता के हित मानव का रूप नया गढ़ना है।
सागर के उस पार शक्ति का कैसा स्रोत निहित है ?
ज्ञान और विज्ञान कौन वह जिससे विश्व विजित है ?
मुझे सिंह की गहन गुफा में घुसकर लड़ना होगा
दह में धँस कर कालिय के मस्तक पर चढ़ना होगा
मुक्ति नहीं, पिँजरे में पक्षी कितना भी पर मारे
बिना युक्ति के राम न मिलते, कोई लाख पुकारे
('आलोक-वृत्त' : तृतीय सर्ग : पृ0 10.)

अंग्रेज स्वयं को सभ्य, संस्कृत, शिक्षित, कुशल और सक्षम बताकर और प्रपंच फैलाकर भारतीयों को पिँजरे में वन्दी पक्षी की स्थिति में रखे हुये थे। ऐसी भयानक स्थिति में गांधी जी ने मुक्ति का, पूर्ण स्वतन्त्रता का नारा बुलंद किया जिसके फलस्वरूप भारत को स्वतन्त्रता की उपलब्धि हुई।

महात्मा गांधी ने भारत को स्वतंत्र करने का व्रत लिया था। जब वे शाकाहारी सम्मेलन में गये थे तो वहाँ उनके ब्रह्मचर्य-व्रत की भी परीक्षा हो गयी थी जिसमें भगवत-कृपा से वे उत्तीर्ण हुए थे। भारत लौटने पर उन्हें अपनी माता की मृत्यु की सूचना मिली तो उन्हें ऐसा लगा मानों उनकी माता स्वयं प्रकट होकर उनसे कह रही है कि प्रिय पुत्र ! मैंने तुझे व्यापक रूप से करोड़ों पुत्रोंवाली माता को सौंप दिया है। तुझे अब उसीके दुख का निवारण करना है -

दुखी न होना पुत्र ! न मिल पाऊँ यदि धरती पर मैं
सौंप गयी हूँ तुझको एक बड़ी माता के कर में
कोटि-कोटि पुत्रों के रहते भी वन्ध्या-सी होती
माता वह जंजीरों में जकड़ी सदियों से रोती
रामकृष्ण की माता वह, जननी गौतम, शंकर की
खोकर गौरव-मान सेविका बनी पराये घर की
वचन एक ही मेरा है अब जिसे निभाना होगा
भारतमाता का कलंक यह तुझे मिटाना होगा

('आलोक-वृत्त' : तृतीय सर्ग : पृ0 14)

'धूर्तराज अंग्रेजों से स्वतन्त्रता पाना इतना सहज नहीं है। स्वतन्त्रता रावण के वन्दीगृह में सीता के समान है। स्पष्ट है कि बिना वलिदान के सीता-रूपी स्वतन्त्रता को नहीं पाया जा सकता है। जैसे राम ने अपनी प्रिया को प्राप्त किया था उसी प्रकार जन-चेतना को जगाकर तुम्हें भी स्वतन्त्रता-देवी को अंग्रेजों के चंगुल से मुक्त करना होगा' —

वन्दी है स्वतन्त्रता सीता-सी रावण के घर में
लौटाना है उसे राम बनकर इस महासमर में
चारों कोनो से आ-आकर चढ़ा चुके निज मस्तक
महाकाल की जिस वेदी पर वीर सहस्रों अब तक
उस वेदी पर, पुत्र ! तुझे भी शीश चढ़ाना होगा
स्वतन्त्रता का मंत्र करोड़ों तक पहुँचाना होगा
('आलोक-वृत्त' : तृतीय सर्ग : पृ0 15)

'आलोक-वृत्त' खण्डकाव्य के प्रतिपाद्य महात्मा गांधी का स्वतंत्रता की प्राप्ति में सबसे बड़ा योगदान है। गांधी जी ने हिंसा पर अहिंसा की विजय के लिये बड़ी दूरदर्शिता से कार्य किया। बलहीनों में संगठन हेतु पारस्परिक प्रेम को महत्त्व दिया। प्रेम संसार में महाशक्ति है। इस प्रेम के प्रसार के लिये महात्मा गांधी ने स्वयं को समर्पित कर दिया -

प्रेम सृष्टि का मूल धर्म, चेतन का नियम सनातन
इसके कारण ही विनाश से बचा आज तक जीवन
यदि धारा बहती न प्रेम की, जननी के अन्तर में
केवल पय से बच पाता मानव-शिशु विश्व-समर में !
यही प्रेम की महाशक्ति लेकर मैं आज बढ़ूँगा
छोड़ूँगा न इसे, ईसा-सा सूली भले चढ़ूँगा
('आलोक-वृत्त' : चतुर्थ सर्ग : पृ0 20.)

गांधी जी ने सत्य, अहिंसा, प्रेम आदि का इस प्रकार जनमानस में संचार किया कि सर्वत्र जाग्रति की एक लहर-सी उठ गयी। इस जाग्रति को काव्य की भाषा में इस प्रकार कहा जा सकता है -

शत मानव-पंक्तियाँ चलीं, जीवन के नये विधान चले
समता, स्वतन्त्रता लाने को, युग के नव अभियान चले
महानाश से लोहा लेने, जैसे नव निर्माण चले
भूमि चली, नभ चला, दिशायें चलीं, अचल निष्प्राण चले
(आलोक-वृत्त'' : षष्ठ सर्ग : पृ0 29)

गांधी जी संगठन की अद्भुत क्षमता रखते थे। उन्होंने इस संगठन के बल से शत्रु को पराजित किया। कवि की स्वयं की मान्यता है कि पशुबल पर आत्मा की विजय का यह पहला उदाहरण है -

यह नूतन इतिहास आज कवि लिखने जिसे चला है
पशुबल पर आत्मा की जय का उदाहरण पहला है
विजय असत्य अनाचारों पर सत्याग्रही विनय की
मृण्मय पर चिन्मय की, जड़ पर चेतन की गतिमय की
राजनीति पर लोकनीति की, बल पर बलिदानी की
यह जय थी ज्वाला की लपटों पर शीतल पानी की
('आलोक-वृत्त' : नवम सर्ग : पृ0 52)

बदलती ऐतिहासिक परिस्थितियों में भी गांधी जी ने धैर्य नहीं खोया और हिन्दू-मुस्लिम दंगों को शांत करने में उन्होंने अदम्य और अद्भुत आत्मबल का परिचय दिया। भारतीय वसुन्धरा को, सत्य-न्याय-अहिंसा की धरती को, रक्तपात से बचाने के लिए उन्होंने अथक प्रयत्न किया और उसके लिए आमरण उपवास का व्रत (अनशन) तक लिया -

धर्म बने हिंसा का साधन, देश रुधिर में खाये गोता
देखूँ मैं असहाय बना, यह सहन नहीं अब मुझसे होता
रुके न बाढ़ घृणा की तो मेरे जीवन का अर्थ नहीं है
कोई भी बलिदान मनुजता की सेवा में व्यर्थ नहीं है
सत्य-अहिंसा की धरती पर क्यों यह रक्तपात मचता है ?
मैं सौ बार मरूँ यदि मेरे मरने से भारत बचता है
('आलोक-वृत्त' - दशम सर्ग ' पृ0 61)

'आलोक-वृत्त' खण्ड काव्य के प्रतिपाद्य की पूर्णाहुति की झलक त्रयोदश

सर्ग में दिखाई देती है। गांधी जी के अथक और अनवरत् साधनों से स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई लेकिन बँटवारे में जो त्रासदी हुई उससे दुखी होकर गांधी जी ने प्रभु से प्रार्थना की -

प्रभो ! इस देश को सत्पथ दिखाओ
लगी जो आग भारत में बुझाओ
मुझे दो शक्ति इसको शान्त कर दूँ
लपट में रोष की निज शीश धर दूँ
जिसे मैंने हृदय-शोणित दिया है
जिसे तुमने हरा फिर से किया है
रहे सुख शान्ति का उसमें बसेरा
न कुम्हलाये, प्रभो ! वह बाग़ मेरा
('आलोक-वृत्त' : त्रयोदश सर्ग ' पृ0 77-78)

स्वतन्त्रता-प्राप्ति में गांधी जी के योगदान को 'आलोक-वृत्त' में प्रतिपादित किया गया है। इसके साथ-साथ उन ऐतिहासिक पात्रों, घटनाओं और गतिविधियों को स्वयमेव प्रकाश मिल जाता है जो स्वतन्त्रता-प्राप्ति में कहीं सहायक, कहीं बाधक और कहीं मूक दर्शक के रूप में सामने आयी हैं। इस प्रकार प्रतिपाद्य के साथ लगभग पूरी सदी का इतिहास सिमट आया है। ज्ञातव्य हो कि यह इतिहास क्रमबद्ध नहीं सांकेतिक है।

(ङ.) 'कच-देवयानी' खण्ड-काव्य का प्रतिपाद्य :

'कच-देवयानी' खण्डकाव्य कविवर गुलाब खण्डेलवाल का बहुचर्चित खण्डकाव्य है। प्रस्तुत खण्डकाव्य में देवयानी के एकपक्षीय प्रेम को बड़ी मार्मिकता के साथ वर्णित किया गया है। श्री गुलाब खण्डेलवाल जी रूप-सौन्दर्य और प्रेम-प्रसंगों के कवि हैं। वे अपने काव्यों में ऐसे सांध्यकालीन सिन्दूरी रंग भरते हैं जिनका अवलोकन कर कोई भी प्रमत्त हो सकता है। कवि ने 'कच-देवयानी' में देवयानी के रूप-सौन्दर्य का बड़ा ही मोहक वर्णन किया है। देवयानी की वेदना ही इस खंण्डकाव्य का मुख्य प्रतिपाद्य है।

कच की एक मात्र अनन्य प्रेमिका देवयानी को जब यह ज्ञात हो जाता है कि शिक्षापूर्ण हो जाने के कारण अब कच देवलोक चला जायगा तो उसे आत्मिक क्लेश होता है क्योंकि वह अपने प्रेम को कच के समक्ष कभी व्यक्त

नहीं कर सकी थी। देवयानी का प्रेम निष्कलंक और निर्दोष है। प्रेम के क्षेत्र में बुद्धि कम और भावुकता अधिक काम करती है। देवयानी ने जैसे ही कच को देखा था वह अपना मन हार बैठी थी।[1] कच विद्याध्ययन में लीन हो गया और देवयानी तिल-तिल जलती हुई वर्तिका की भाँति कच के प्रेम में व्याकुल रहकर दिन बिताने लगी। संकोच और लज्जा ने उसे कच के निकट जाने से रोके रखा। वह उचित समय की प्रतीक्षा करती रही। धीरे-धीरे विद्यार्जन की सारी अवधि व्यतीत हो गयी और जब कच दीक्षा ग्रहण कर जाने लगा तो देवयानी अपना धैर्य खो बैठी और उसे उपालंभ देती हुई बोली -

1. **देखा था पहली बार तुम्हें, जब मैंने लतिका-अंचल से**
   अकलंक कलानिधि-सा कढ़ते, धुलकर नभगंगा के जल से
   श्रद्धा की नत-शिर भेंट लिये, कोमल कुसुमों के दोने में
   निःश्वास सुधा-धारा भरते, निर्जन के कोने-कोने में
   ('कच-देवयानी' प्रथम सर्ग : पृ0 20.)

2. **मैं अपने कोमल सपनों का, संसार सजाती थी तुमसे**
   नव पारिजात की माला-से, जो उतरे थे कल्पद्रुम से
   तुम ऐसे विद्यालीन रहे, पुस्तक से आगे बढ़ न सके
   पढ़ लिये शास्त्र-इतिहास सभी, नारी के मन को पढ़ न सके
   ('कच-देवयानी' : प्रथम सर्ग : पृ0 21.)

कच उसके रूप और उसकी बातों से प्रभावित हो जाता है और उसके प्रेम को स्वीकार कर लेता है परंतु प्रभात में, रात की बातें भूलकर जब वह जाने को उद्यत होता हैं तो देवयानी उसके सम्मुख आकर उसे रात की बातों का स्मरण कराती है। कच जब चकित होकर उसे देखता है तो वह कहती है -

मेरी तम-रजनी के प्रभात ! देखों न मुझे यों चकित, मौन
छिपकर रसाल की डालों से, देखो, गाता है वहाँ कौन
यह वेत्रवती का खर प्रवाह, ये हवन-धूम से भरे गेह
प्रिय, अतिथि ! आज इन तरुओं के है सुमन-सुमन में नया स्नेह
माना, इन कुंजों में खिलते वे पारिजात के फूल नहीं
फिर भी इनकी शीतल छाया, प्रेमी पाते हैं भूल नहीं
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 38.

कच देवयानी के कथन का आशय स्पष्ट रूप से समझ गया लेकिन अब उसका मन स्वर्ग में अपनी संजीवनी-विद्या लेकर जाने को उत्सुक था। वह देवयानी के साथ असुर-पुर में जीवन नहीं बिताना चाहता था। उसने देवयानी को अपनी बहन बताकर उससे पिंड छुड़ाने की चेष्टा की और गुरु-पुत्री होने का बहाना बनाया —

गुरु-कन्या भगिनी तुम मेरी, श्रद्धाकी प्रतिमा प्रभापूर्ण
अब उसकी याद दिलाओ मत, जो स्नेह-स्वप्न हो चुका चूर्ण
इस पावन नव छवि से मण्डित, तुम कितनी सुन्दर आज बहन !
स्वर्गंगा की लघु लहरी-सी, तारक-आभा का चीर पहन
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 43)

कच का यह कथन सुनकर देवयानी को मर्मांतक आघात लगा उसने कच के प्रति कल्पना के जितने घरौंदे बनाये थे सब के सब क्षण भर में नष्ट हो गये। वह अपने दुख को व्यक्त करती हुई बोली -

'कच' मैं तुम्हारी बहन नहीं हूँ। यह आश्रम तो दो शिशु-हृदयों की प्रणयस्थली है। मैं सर्वथा तुम्हारी पत्नी बनने के योग्य हूँ। अतः मिथ्या संकोच-भावना का त्याग कर जीवन को पूर्णता की ओर जाने दो। मैंने तुम्हें अपना जीवन-सर्वस्व माना है। कविवर गुलाब इस भावना को शब्दायित करते हुये कहते हैं -

मैं बहन तुम्हारी होती यदि, कौमार्य-कठिन-व्रत धारण कर
यह प्रिय मुखचन्द्र चकोरी-सी, देखा ही करती जीवन भर
पर संगम-स्थल शिशु-हृदयों के, इस गुरु-गृह में मैंने देखा
परिणय-बन्धन में बँध जाती, प्राणों की परिचित विधु-लेखा
मिथ्या संकोच-भावना यह, तोड़ो, पौरुष-निर्झर तुम हो
मेरे जीवन-वन के वसन्त, मेरे सुहाग के कुंकुम हो।
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 47)

बदले में कच ने देवयानी को ऐसे प्रबोधित किया जैसे वह कोई उपदेशक हो। 'प्रेम-भावुकता के भाव क्षण-जन्मा हैं। समुद्र में उठती लहरों के समान इस भाव-वृत्ति को शान्त करने में ही लाभ है। जीवन का गौरव क्षणिकता

की संज्ञा को मिटाने में है।'[1] लेकिन देवयानी के प्रेम की दृढ़ता तो एकनिष्ठता का मूर्तिमान रूप थी। वह बोली -

तुम चेतन पुरुष समर्थ किन्तु, अबला जड़-बुद्धि बिचारी मैं
अस्तित्व प्रेम में ही जिसका, जीती हूँ अथवा हारी मैं
क्षण-भंग कुसुम नारी-जीवन, विकसित जब तक न छुआ समझो
अन्तिम पहला ही दाँव इसे, छूते ही धूल हुआ समझो
वह धूल चरण में रह सकती, आधार न उसको त्रिभुवन में
मिलता जिसको बस एक बार मधुमास प्रेम का जीवन में
(कच-देवयानी : द्वितीय सर्ग : पृ0 51)

देवयानी के निम्न कथन में कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने नारी के मन में स्थित प्रेम को ही नहीं है बल्कि भारतीय नारी के आदर्शात्मक दृष्टिकोण को भी प्रस्तुत किया है -

अस्पर्शित तन भारतीय नारी की अपनी विशेषता है। वह जिसकी ओर आकर्षित होकर समर्पित होती है उसीको अपना समस्त जीवन सौंप देती है। कवि देवयानी की वाणी में कहता है -

मैं हाथ जोड़ती हूँ , मेरे जीवन की धूल उड़ाओ मत
यह हृदय तुम्हारी थाती है, ले, देख इसे लौटाओ मत
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 52)

कच के मन में देवयानी के अनुनय-विनय, प्रणय-निवेदन और समर्पण का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने उसे अपनी पत्नी बनाने के प्रस्ताव को स्पष्ट शब्दों में अस्वीकार कर दिया।[1] देवयानी के सपनों का संसार ही मानों उजड़ गया और उसके जीवन में पश्चाताप के अतिरिक्त कुछ नहीं बचा। वह कातरता में कहती है -

---

1. **मानस की वृत्ति क्षणिक जिसको, कहते हैं प्रेम, स्नेह, ममता**
जीवन की कैसे हो सकती, जीवन के क्षण भर से समता !
इस क्षणिक विकलता में तुम निज जीवन का गौरव भूलों मत
संध्या के घन-सी किरणों के, केशर-डोरों पर झूलो मत

यश भोगो तुम, स्वदेश हारे, हो सत्य सुरों का जय-सपना
सचमुच अपने ही हाथों से, मैंने घर फूँक दिया अपना
मैं कुल-कलंकिनी युग-युग तक, शापित दानव-शिशुओं द्वारा
दिन-रात रहूँगी जलती ही, जैसे कोई पुच्छल तारा
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 59)

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने देवयानी के रूप में भारतीय नारी के उस रूप को चित्रित किया है जिसमें वह अपने स्थापित जीवनमूल्यों को सीमाओं में रहकर प्राप्त करना चाहती है। यदि देवयानी में भोगवादी मनोवृत्ति होती तो कच को कभी भी अपनी ओर आकर्षित कर सकती थी लेकिन वह कच को पहले अपने मनोरथ में सफल होने देती है। यही नहीं, इसके लिए उसने तीन बार उसे जीवन-दान भी दिलाया। 'कच-देवयानी' खण्डकाव्य का प्रमुख रूप से देवयानी का प्रेम ही प्रतिपाद्य है जिसकी सुन्दर उपलब्धि कवि ने अपनी प्रतिभा से सहज ही कर ली है।

'कच-देवयानी' खण्डकाव्य में सौन्दर्य की सुमधुर कल्पना भी प्रतिपाद्य है। यद्यपि नारी के सौन्दर्य की मोहक कल्पना 'उषा' महाकाव्य तथा, 'अहल्या' खण्डकाव्य में भी है तथापि कल्पना की जो उड़ान 'कच-देवयानी' में है वह मुक्तक-काव्य 'सीपी-रचित रेत' में भी नहीं है। वास्तव में 'कच-देवयानी' खण्डकाव्य का कथानक तो अल्प है लेकिन सौन्दर्य के विलक्षण चित्रण से खण्डकाव्य अत्यंत मोहक बन पड़ा है।

देवयानी का सौन्दर्य असाधारण है जिसे प्राप्त करनेकी न जाने किस-किसने अभिलाषा की होगी लेकिन उसने जिसे चाहा उसीने उसे स्वीकार नहीं किया। सौन्दर्य-प्रेमी कवि इस प्रसंग को इस प्रकार अभिव्यक्ति देता है -

'सपना देखा करते जिसका, सम्राट् विजय-क्षण अपने में
वह शोभा निखिल भुवन-मन की, क्या देख रही थी सपने मे ?
खुल व्यस्त लजीली ग्रीवा से, श्यामल अलकें छू भूमि रहीं
तुम किसके शर से विंधी विकल, वन-वन हरिणी-सी घूम रही ?

1.होलिका मनाना चाह रही, तुम आग लगा अपने घर में।
इस मोह-स्वप्न के हटते ही, सब देख सकोगी क्षण भर में।
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 50-51.)

कल्लोलभरी लहरी तट पर, मणियाँ समेटने लगती ज्यों
तनु-तंत्री में मूर्च्छना-सदृश, मृदु व्यथा ऐंठने लगती ज्यों
कलिका-से कोमल अधरों से, सुरभित साँसों में सनी हुई
कौमार्य-काकली फूट पड़ी, आक्रोश-सजल-सी बनी हुई
(कच-देवयानी' : प्रथम सर्ग : पृ 18-19)

यद्यपि 'कच-देवयानी' के अद्भुत और अनूठे सौन्दर्य को देखकर कच मन में बहुत उलझन का अनुभव करता हैं लेकिन वह एक अलग प्रकार की मानसिकता में बँधा है -

सौन्दर्य-कला की यह सीमा, मैं धन्य स्पर्श यदि कर पाता
ज्वाला-नद-सा पथ रोक रहा, पर भगिनी का पावन नाता
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 53)

यह आवश्यक नहीं कि जो सुन्दर हो वह कोमल भी हो। कच को देवयानी ने शाप दे दिया। लेकिन कच ने मात्र इतना ही कहा कि देवयानी तुम तो बहन बनने के योग्य भी नहीं थी -

प्रतिहिंसा बनता प्रेम कभी, अपने को सदा मिटाता जो !
विश्वेश्वर का चिति-अंश अमर, प्राणों का पावन नाता जो !
मनसापि स्वप्न में भी मेरी, गुरु-दुहिता तो उपभोग्य न थी।
भूला मैं भगिनी कहते क्षण, तुम तो इसके भी योग्य न थी।
('कच-देवयानी' : द्वितीय सर्ग : पृ0 65)

'कच-देवयानी' खण्डकाव्य का प्रतिपाद्य देवयानी की अन्तर्वेदना है जो कच की बिदाई की पूर्व संध्या में मुखर होती है तथा कच के द्वारा विवाह के लिए अस्वीकृत होने पर जो विदा के समय प्रकट होती है। इसमें नारी-मन की स्वाभाविक गति का अवरोध है जिससे पाठक के मन में सम्वेदना उत्पन्न होती है। सम्वेदना के उद्वेलन में देवयानी का अद्वितीय सौन्दर्य भी है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल को 'कच देवयानी' खण्डकाव्य के प्रतिपाद्य में सफलता मिली है। इसे कवि की असाधारण उपलब्धि माना जायगा।

सप्तम अध्याय

गुलाब खण्डेलवाल के मुक्तक-काव्यों का मूल्यांकन

:: सप्तम अध्याय ::

गुलाब खण्डेलवाल के मुक्तक-काव्यों का मूल्यांकन

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल रचित काव्य-जगत अत्यन्त मोहक, सुन्दर, व्यापक तथा बहुआयामी है। कवि ने विभिन्न विषयों और देशी-विदेशी काव्य-शैलियों को लेकर मनोज्ञ काव्य की सृष्टि की है। निस्सन्देह कवि के पास कल्पना के लिये अनन्त आकाश हैं, उड़ने के लिये अदम्य साहस, शक्ति तथा अभ्यास है और किस बात या भाव को किस प्रकार से अभिव्यक्ति दी जाय, इसकी गहरी सूझ और अच्छी पैठ है। जो जितना अच्छा लेखक होता है वह उतना ही उच्च कोटि का अध्येता भी होता है। यदि महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने सतत गम्भीर साहित्य-साधना न की होती तो वे यश की सीढ़ियों पर कैसे चढ़ते जाते !

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने महाकाव्य, खण्डकाव्य, काव्य-नाटक आदि प्रबन्धात्मक कोटि की जो रचनायें की हैं (जिनका मूल्यांकन षष्ठ अध्याय में किया जा चुका है) उन कृतियों का प्रतिपाद्य अत्यन्त उच्च कोटि का है। अब हम प्रस्तुत अध्याय (सप्तम) में कवि के गीति-काव्यों, ग़ज़ल-संग्रहों , विभिन्न शैलियों में रचित अन्य काव्यों तथा कविता-संग्रहों के प्रतिपाद्य पर मूल्यांकन-परक दृष्टिपात करने का विनम्र प्रयास कर रहे हैं। चूँकि कविवर गुलाब का रचना-संसार आकाशधर्मी है अतः उसका सम्यक अध्ययन विभिन्न चरणों में ही सम्भव है।

(क) गीत-काव्य का प्रतिपाद्य :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल के रचना-संसार के सम्यक अवलोकन से ज्ञात होता है कि गुलाब जी ने सबसे अधिक सृजन गीतों का किया है। उनके गीतों की लोक-मंगलकारिणी गंगा निरन्तर प्रवहमान रही है

सुरों की धारा बहती जाती
जो भी तृषित तीर पर आता, पल में प्यास बुझाती
प्रेमाकुल-मानस से ढलकर
अगणित ग्राम-पुरों से चलकर

भावुक उर के तीर्थ-स्थल पर
थम-थमकर बल खाती।
('कितने जीवन, कितनी बार' गीत-संग्रह : पृ0. 68)

यह धारा सर्पणशीला अनेक मोहक और मनोरम घाटों का निर्माण करती चली है, जहाँ पाठक रूपी स्नानार्थी अवगाहन कर सरसता ग्रहण करते हैं। यह गीत-गंगा ज्यों-ज्यों अग्रगामिनी होती गयी है त्यों-त्यों गीतों में निखार आता गया है - कथ्य की दृष्टि से, शिल्प की दृष्टि से। अध्ययन की सुविधा के लिये हम श्री गुलाब खण्डेलवाल जी के गीतों को तीन चरणों में विभाजित कर रहे हैं, प्रारंभिक, मध्यकालीन तथा संध्याकालीन -

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के प्रारम्भिक गीतों का प्रतिपाद्य :

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के प्रारम्भिक गीतों की श्रृंखला पर्याप्त लम्बी है। कवि ने जो गीतों के संकलन प्रकाशित किये हैं उनमें भी प्रारम्भ के गीत संकलित हैं, लेकिन 'कविता', 'चाँदनी' और 'ऊसर के फूल' के गीतों को प्रारम्भिक गीतों की श्रेणी में लिया जा सकता है। इन गीतों में संकल्प-विकल्प की स्थिति है और संसार को विस्मय से देखने की आतुरता मुखरित हुई है। यौवन की देहरी पर पग रखता हुआ गीतकार जो छायावादी संस्कारों से प्रभावित है, चिन्तित होता हुआ गाता है -

यों ही दिन बीते जाते हैं
सुख जीने में आया न कभी
जीवन में सुख पाया न कभी
जाने किस सुख की आशा से, फिर भी हम जीते जाते हैं
जब हैं अटूट दुख का बन्धन
फिर क्यों यह सुख का आकर्षण
यह द्वन्द्व चला करता प्रतिक्षण कुछ भी न समझ हम पाते हैं
यों ही दिन बीते जाते हैं
(कविता : गीत-संख्या 5)

प्रिय (लक्ष्य) की प्राप्ति की मिलन की आकांक्षा धूमिल हो जाती है लेकिन प्रिय मिलता नहीं और इसी क्रम से व्यक्ति का जीवन व्यतीत हो जाता है, सांध्य बेला आ जाती है। गुलाब जी इस शाश्वत भाव को अपने प्रारम्भिक गीत

में इस प्रकार पिरोते हैं -

अपने गान लो मैं चला।
भर पिकी के कंठ में कुछ रख सुमन में
कुछ सजाकर तारकों की तिमिर-स्नाता
श्याम चितवन में
साँझ की मैं वायु-सा, प्रिय ! जा रहा हूँ
छोड़ उन्मन विरह के निःश्वास अपने
आज निर्जन में
जो दिये तुमने सुरभि के वे मधुर वरदान लो, मैं चला
अपने गान लो, मैं चला
(गुलाब-ग्रन्थावली खंड-1 : पृ0 70)

चाँदनी के गीतों के प्रतिपाद्य की ओर इंगित करते हुये पद्मभूषण श्रीनारायण चतुर्वेदी ने लिखा है - 'कवि ने प्रत्येक गीत में चाँदनी के रूपक के निर्वाह के साथ-साथ प्रेम की विविध मनोदशाओं के भी सफल चित्र उतारे हैं। कवि के अन्तर्जगत की भी झलकियाँ इनमें स्पष्ट हैं और लगता है कि चाँदनी के माध्यम से कवि ने किसी प्रेम-गाथा का आद्यन्त चित्रण किया है। हिन्दी के विशाल गीत-साहित्य तथा रवीन्द्रनाथ के गीत-साहित्य से अलग जहाँ चाँदनी के गीत अपनी एक अलग पहचान बनाते हैं, वहीं इनमें चाँदनी के रूपक और प्रेम की मनोदशाओं के साथ-साथ कवि के अन्तर्जगत से जुड़ी एक प्रेमगाथा का भी सफल निर्वाह आद्यन्त देखा जा सकता है।'[1] चाँदनी के गीतों में गीतकार प्रकृति के मनोरम रूपों के माध्यम से प्रिया के रूप सौन्दर्य और मोहक तथा प्रेमिल व्यवहार का चित्रण करता है। उदाहरण के लिए चाँदनी-रूपी प्रिया अपनी सहेलियों सहित जल-बिहार करने आयी है। सरोवर का सौंदर्य मानों उसके रूप के बिम्ब-प्रतिबिम्ब से जगमगा उठा है -

चाँदनी जल विहार को उतरी
झिलमिल किरणों की फुलझरियाँ,
काँप उठी लघु लोल लहरियाँ,
सँग ले संग-सहेली परियाँ,
तट पर आ ठहरी।

---

1. गुलाब ग्रथावली : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : भूमिका पृ0 ज,च.

नव मराल गति से उज्ज्वलतर,
श्वेत रजत के पंख खोलकर
चली तैरती जल में मंथर,
सखियों बीच धरी।
('चाँदनी' : गीतसंख्या - 40)

चाँदनी-रूपी प्रिया अलौकिक सौन्दर्य से सम्पन्न है। ऐसा प्रतीत होता है मानों वह चन्द्रझरोखे में बैठी अपने सौन्दर्य से सारे संसार को चमत्कृत कर रही है -

चांदनी बैठी चन्द्रझरोखे।
झिलमिल मधुर झकोर मलय की,
खन-खन, क्षण-क्षण कनक वलय की
झाँक रही झुक पुतली भय की
विफल प्रतीक्षा में उलझाये दोनों नयन अनोखे
* * * * *
मृग-नयनी पिक-वयनी बाला
पहने स्वर्ण-किरण-मणिमाला
मुड़ दिशि-दिशि करती उजियाला
छोड़ रहे पक्षी नीड़ों को, जग प्रभात के धोखे
चाँदनी बैठी चन्द्रझरोखे
('चाँदनी' : गीत-संख्या -46)

'ऊसर का फूल' गीत-संग्रह में कवि का प्रतिपाद्य गम्भीरतर हो चला है। वह नित्य नयी कल्पनाओं को अपने सुमधुर गीतों में पिरोता है। एक जगह स्थिर रहना, उसे रुचिकर नहीं लगता है। गीतकार यथार्थ के धरातल पर उतर रहा है। युवा मन को कवि ने बड़ी शालीनता से प्रतिपादित कर दिया है -

प्रतिदिन नयी-नयी लहरों से मैं खेला करता हूँ
मुझे न भाता जीवन में आडम्बर इतना ज्यादा,
मन में रहती भरी सदा बड़वा-सी भीषण ज्वाला
कैसे वाणी पर संयम हो, अधरों पर वरमाला !
उड़ें तितलियाँ, मधुकर गायें
पंछी मधु स्वर में इतरायें

फूल रहे क्यों मौन लिये सुंदरता की मर्यादा !

मेरी आँखों में आँसू बन, भावुकता पलती है
जाने किस भूले-से जीवन की स्मृतियाँ हैं जगती
जग की सब वस्तुएँ मुझे हैं चिर-परिचित सी लगतीं
देख प्रकृति जड़-चेतन-संसृति
मानव, उसकी निखिल कलाकृति
रोम-रोम से फूट, प्रेमकी सरिता बह चलती है
मेरी आँखों में आँसू बन भावुकता पलती है
(ऊसर का फूल : गीत संख्या - 5)

निश्चय ही गीतकार का मन कल्पनालोक से यथार्थ के धरातल पर उतर आया है और उसे सृष्टि में मानव विधाता की श्रेष्ठ रचना लगने लगी है तथा मनुष्य में प्रेम-सरिता प्रवहमान दिखायी देती है।

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के मध्यकालीन गीतों का प्रतिपाद्य :

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का दूसरा चरण 'नूपुर-बँधे चरण' के साथ प्रारम्भ होता है यद्यपि इस गीत संग्रह में 1940 ई0 तक के गीतों को भी संग्रहीत किया गया है। शारीरिक दृष्टि से एवं मानसिक विकास का दृष्टि से मनुष्य के जीवन में 35 वर्ष तक की आयु बड़ी महत्त्वपूर्ण होती है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने इस आयु तक अपने गीतों के विकास का दूसरा चरण छू लिया है। 'इन गीतों में रूपगत मान्यता प्रारंभ से ही उनकी प्रचलित शैली से भिन्न रही है और मैंने अपने गीतों में उसका निर्वाह भी करने की कोशिश की है। मेरी समझ में गीतों में आत्मकथ्य और आत्मानुभूति के अतिरिक्त भावान्विति का होना भी आवश्यक है जिससे रसनिष्पत्ति हो सके। भिन्न मनःस्थितियों में रचित कुछ गीत इस संग्रह में दिये गये हैं।'[1] कहने का आशय यह है कि कवि ने अपने गीतों को शोकगीत, सम्बोधन-गीत आदि गीतों के रूप में प्रस्तुति दी है। अब गुलाब जी का गीतकार कल्पना के पंखों से अनन्त आकाश में उड़ने लगा है।

---

1. आधुनिक कवि : 19 गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : पृ0 12.

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल स्वयं को जीवन और जगत में नियति की कठपुतली से अधिक नहीं पाते हैं। उन्हें संसार के सुख-दुख यथार्थ लगने लगे हैं। वे गीतों के क्षेत्र में भले ही नवीन प्रयोगों से अपने भावों को अभिव्यक्ति दे रहे हों लेकिन यथार्थ से उन का मन विचलित हो उठा है 'एक कुम्हार-बाला के प्रति' , 'हवा का राजकुमार', जैसे लम्बे गीत हों अथवा 'गड़ेरिये का गीत' हो या 'शोक-गीत' हों या 'गीत गुच्छ' हो सभी में गीतकार का मन चिन्ताकुल दिखाई देता है। उसके हृदय में स्थिरता, धैर्य या शान्ति नहीं है। एक गीत की कुछ पंक्तियाँ देखिए -

मेरा लक्ष्य खो गया, साथी ! जैसे तारा भोर का
मेरा मीत नहीं हो पाया, जैसे चाँद चकोर का
मैंने समझा था यह जीवन, फूलों की मुस्कान है
मैंने समझा था यह यौवन, कलियों का मधुपान है
सपनों की नगरी में बेसुध बनकर चलना भूल थी
आँख खुली तो कुसुम नहीं वह कली न वह उद्यान है
लघु तरणी को घेर गरजता सागर चारों ओर का

* * * * *

आओ, मिल लूँ बाँह पसारे, अबकी जाना दूर है
घुटती साँस, छूटता साहस, तन-मन थककर चूर हैं
वही देश अनजाना जिसकी ओर सभी जन जा रहे
जीवन के सारे कर्मों का अन्त एक जो क्रूर है
आनेवाले रहें समझते आशय सुरभि-झकोर का
('नूपुरबँधे चरण' : गीत संख्या' 7/ट)

उक्त गीत में 'वही देश अनजाना किसकी ओर सभी जन जा रहे' पंक्ति से मानों कवि ने अपने प्रतिपाद्य की परिवर्तित दिशा की ओर संकेत किया है - 'अब तो वही दिशा पूर्ण रूप से अनुकरणीय है जिसकी ओर सभी उन्मुख हो रहे हैं'। 'नूपुर-बँधे चरण' के अन्तिम गीत से तो यह बात बिल्कुल ही स्पष्ट हो जाती है -

मेरा अन्त न होगा,
पतझड़ के पत्तों से ओझल कभी वसन्त न होगा।
मेरे सिर पर तना हुआ है स्नेह-वितान किसीका,
तिल भर ओट न होने देता मुझको ध्यान किसीका,

उसकी कृपा-किरण से मेरा शून्य दिगन्त न होगा
मेरी आयु चुराकर क्षण-क्षण काल अमरता पाता,
मर-मरकर जीता जाता मैं मिट-मिटकर मुस्काता,
अमृत-मूल, फल-फूल विवर्जित मेरा वृन्त न होगा।
मेरा अन्त न होगा।

इस गीत की पंक्तियों से स्पष्ट है कि गीतकार का लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम की ओर झुक गया है। आयु के साथ-साथ सोच में परिवर्तन हो चला है। प्रकृति के सौन्दर्य में कवि को प्रिय नहीं प्रियतम दिखने लगा है।

'नूपुर-बँधे चरण' के प्रतिपाद्य के सन्दर्भ में एक बात और। गुलाब जी अपने प्रेम को व्यक्तिगत घेरे से निकाल कर विराट् की ओर ले चले हैं तथा उन्हें मनुष्य मात्र के सुख-दुख की चिन्ता हो चली है। इतना ही नहीं, गीता का ज्ञान भी प्रच्छन्न रूप से गीतों में आने लगा है।[1] जैसे - मैं बार-बार यही जन्म लूँगा तथा प्रभु से जो लगन लगी है, वह नहीं छोड़ूँगा -

मैं तो धरती का अंकुर हूँ, नया-नया फूटूँगा
रंग उषा के जावक का मैं, कभी नहीं छूटूँगा।
मेरी नख-नखतावलि-अंकित गगन अनन्त न होगा !

जातस्य हि ध्रुवं मृत्यु ध्रुवं जन्म मृतस्य च।

अर्थात् जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है और मरे हुये का जन्म निश्चित है। : श्रीमद्भगवद्गीता।

'आयु बनी प्रस्तावना' के गीत 'नूपुर-बँधे चरण' के 'मेरा अंत न होगा' के प्रतिपाद्य का अगला चरण हैं। इन गीतों के प्रतिपाद्य के सन्दर्भ में कवि ने लिखा है - 'ये गीत मेरी तत्कालीन मन-स्थिति के परिचायक हैं। गीत की विधा आत्मनिष्ट होती है। इसलिये मात्र कला-पक्ष से प्रेरित गीत प्राणहीन होंगे। मेरे हर गीत के पीछे हृदय का कोई उद्रेक अवश्य रहा है। हाँ, यह जरूर है कि बच्चन जी की पद्धति से हटकर मैंने उसमें कुछ गहरे रंग और वक्रतायें भरने का प्रयास भी किया है।' गुलाब जी के 'स्व' का समर्पण सर्वान्तरयामी के

---

1. 'आयु बनी प्रस्तावना' गुलाब खण्डेलवाल : आमुख : पृ0 2.

प्रति हो गया है। वही सर्वव्यापक प्रत्येक में विद्यमान है। स्पष्ट है कि वह प्रिय में भी है। इस तत्त्वज्ञान को कविवर गुलाब गीत में इस प्रकार मधुर-मधुर गुनगुनाते हैं -

देह नहीं देहेतर से मैं करता प्यार रहा हूँ
तुममें एक और जो 'तुम' है उसे पुकार रहा हूँ
एक झलक के लिये सतत मेरी आत्मा अकुलाती
युग-युग की पहचान प्राण की, काम नहीं कुछ आती
तन के गाढ़ालिंगन में भी उसका स्पर्श न मिलता
अधरों के चुम्बन में भी वह दूर खड़ी मुस्काती
तन के माध्यम से मैं जिसकी कर मनुहार रहा हूँ
तुममें एक और जो 'तुम' है उसे पुकार रहा हूँ
('आयु बनी प्रस्तावना' : गीत संख्या - 13)

कवि गुलाब जी के रोम-रोम में प्रिय की झलक समायी हुई है। वे उसके साथ रास-सा रचाते हैं और प्रत्येक श्वास में एक त्यौहार का आनन्द पाते हैं। स्पष्ट है कि कवि का प्रतिपाद्य सांसारिकता की सीमा को लाँघने लगा है। इस आत्मानुभूति को गीत में इस प्रकार पिरोया गया है -

ऐसी लगन लगी प्राणों में, पीड़ा ही गलहार बन गयी
रोम-रोम ने रास रचाया, साँस-साँस त्यौहार बन गयी
सारी आयु लुटाकर मैंने पल को छुआ काल का कोना
सब धरती की धूल बटोरी, तब पाया चुटकी भर सोना
मेरी सब साधना, तुम्हारा पल भर का श्रृंगार बन गयी
('आयु बनी प्रस्तावना' : गीत-संख्या - 17)

भक्त भगवान के आगे जब सर्वस्व समर्पित करता है तभी उसका हित होता है। कवि का आत्म-निवेदनपरक गीत देखिए -

प्रतिदिन प्रतिपल साथ तुम्हारे
मेरा जीवन हाथ तुम्हारे
मन के स्वामी, अन्तर्यामी ! तुम रख लो पत कौन उतारे !
तुम से जग को मैंने जाना
तुम से पाया जो कुछ पाना

मेरा हँसना, रोना, गाना
सब में एक तुम्हीं-तुम, प्यारे !
('आयु बनी प्रस्तावना' : गीत संख्या - 27)

'सर्वं खल्विदम् ब्रह्म' अथवा 'एकोहम् द्वितीयोनास्ति' अथवा 'ईशवास्यमिदं सर्वम्' का सार-तत्त्व उक्त गीत में कवि ने बड़ी शालीनता, सहजता और स्पष्टता से पिरो दिया है। स्पष्ट है कि गीतकार गुलाब ज्यों-ज्यों आयु की सीढ़ियाँ चढ़ते चले हैं त्यों-त्यों उनके गीतों में आध्यात्मिकता का समावेश होता चला है। अनेक स्थलों पर कवि की अभिव्यक्ति सन्तकवि कबीर की इस वाणी के प्रतिपाद्य से मिलती है - 'नैनाँ अन्तर आव तू पलक ढाँकि तोहि लोउँ'। कवि अपने प्रेमास्पद से एकनिष्ठ हो जाना चाहता है, यथा -

जी करता है आँखे मूँदूँ,
तुम को इन बाँहों में कसकर, तम के अतल जलधि में कूदूँ
तन का सूत्र भले खो जाये
मन का तार नहीं टूटेगा
प्रिये ! हमारे मुग्ध क्षणों का
यह संसार नहीं छूटेगा
मिट न सकेगा प्रेम हमारा, चिर-विस्मृति का तट भी छू दूँ
('आयु बनी प्रस्तावना' : गीत संख्या - 44)

'शब्दों से परे' का प्रतिपाद्य वह अनादि, अव्यक्त और अज है जिसे शब्द देने का प्रयत्न सदा से किया जाता रहा है। यद्यपि शब्दों से उसका कोई अर्थ नहीं है, संगति नहीं है, फिर भी उसके लिए और हमारे लिए भी शब्द ही माध्यम हैं-

मैंने जो लिखा है
बुझते हुये दीपक की शिखा है
शब्दों का कोई यहाँ अर्थ नही
तम से लड़ने में ये समर्थ नहीं
फिर भी यह जलना था व्यर्थ नहीं
माना सब लिखा अनलिखा है
बुझते हुए दीपक की शिखा है
('शब्दों से परे' : गीत-संख्या - 1)

अनन्त का सान्त से जब सामीप्य होता है तो लौकिक शक्तियों तथा क्षमताओं की सत्ता का लोप होने लगता है। साधना में साधक को अराध्य के अतिरिक्त और कुछ भी दृष्टिगत नहीं होता। यद्यपि इस अनहद की अवस्था को गीत में अभिव्यक्ति देना सहज नहीं है तथापि कवि के प्रयत्न की सफल गति श्लाघनीय है -

इस लिए मैं व्यक्त से अव्यक्त होना चाहता हूँ
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा प्रकृति है
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा नियति है
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा अगति है
इसलिए मैं अमृत से संप्रक्त होना चाहता हूँ
('शब्दों से परे' : गीत-संख्या : 2)

'शब्दों से परे' का जो उपजीव्य है वह सर्वतोभावेन श्रेष्ठ, महान और अनन्त है। उसके समक्ष तो सर्वस्व समर्पण में ही सुख है। कदाचित् इसीलिए गीतकार श्री गुलाब खण्डेलवाल ने 'सब कुछ कृष्णार्पणम्' शीर्षक से 'त्वदीयं वस्तु गोपालं तुभ्यमेव समर्पये' अर्थात् 'जो कुछ भी है सब आपका है और आपके लिये ही समर्पित है, का उद्घोष अपनी कविता-पुस्तक, सब कुछ कृष्णार्पणम् में किया है-

सब कुछ कृष्णार्पणम्
ज्ञान ध्यान, शक्ति श्रम
राग, द्वेष, मोह, भ्रम
दाह, दीनता, अहम्
सब कुछ कृष्णार्पणम्
भोग, योग, यम, नियम
श्रेय, प्रेय, प्रेयतम
लाभ, हानि, सम, विषम
सब कुछ कृष्णार्पणम्

आगे चलकर वह कहता है
बैठा हूँ आकर तेरी देहली के पास
आशा-प्रत्याशा नहीं, कोई अभिलाषा नहीं

सबसे ले लिया है संन्यास।
तेरी ही मधुर तान सुनता हूँ
तेरी ही शुल पर सिर धुनता हूँ
तेरे ही गुण मन में गुनता हूँ
देखता हूँ तेरा महारास
('सब कुछ कृष्णापर्णम्' : गीत संख्या - 49)

यदि सर्वस्व प्रभु के चरणों में समर्पित कर दिया तब तो कवि विशुद्ध निर्वेद की अवस्था में पहुँच गया। फिर वह जो कहता है मानों प्रभु के समक्ष ही कहता है। 'सब कुछ कृष्णार्पणम्' के पश्चात् गुलाब जी ने जो गीत रचे हैं उनका संग्रह 'हम तो गाकर मुक्त हुए' शीर्षक से किया गया है। इस पुस्तक की प्रस्तावना में डॉ0 कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने लिखा है - 'इस संग्रह के गीतों में कवि के प्रौढ़ साधना-संस्थापित जीवन का प्रच्छन्न प्रवाह और संयम है। सहज स्वच्छन्द कवि के काव्य-प्रवाह की प्रखरता इन गीतों में नहीं है, इनमें व्यापक और गहन जीवनानुभूति से उत्पन्न विवेक, आनन्द, विषाद और अवसाद का विलक्षण योग है।'[1] 'हम तो गाकर मुक्त हुए' संग्रह के गीतों का प्रतिपाद्य संसार से मुक्ति और प्रभु के सामीप्य की उत्कट लालसा है। ये गीत किसी सिद्धहस्त सन्त कवि की वाणी का स्मरण दिलाते हैं, यथा-

जिस क्षण चलने की वेला हो
गति को रोके हुये न शत-शत स्मृतियों का मेला हो
ज्योति रहे या रहे अँधेरा
तनिक न व्याकुल हो मन मेरा
सिर पर रहे हाथ बस तेरा
जग की अवहेला हो
आये मधुर सुरभि का झोंका
पल में मोह मिटे प्राणों का
जैसे एक खेल गुड़ियों का
जीवन भर खेला हो

1.'हम तो गाकर मुक्त हुए' : गुलाब खण्डेलवाल : भूमिका : डॉ0 कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह : पृ0 3.

जिस क्षण चलने की वेला हो
('हम तो गाकर मुक्त हुए' : गीत संख्या - 21)

सांसारिकता का जीवन में विशेष महत्त्व नहीं है। लेकिन काया और माया दोनों पर ही प्राणी का विशेष रूप से मोह रहता है। कवि 'मेरे जीवन-स्वामी' शीर्षक से प्रभु से आत्म-निवेदन करता है -

मेरे जीवन-स्वामी !
कैसे भुला दिया तुझको मैंने, ओ अन्तर्यामी !
क्यों है इतना मोह मुझे निज, क्षण-भंगुर काया पर ?
लय हो जाने की चिन्ता से क्यों रहता मन कातर ?
यदि विश्वास मुझे है, मेरी बाँह किसीने थामी !
मेरे जीवन-स्वामी !
('हम तो गाकर मुक्त हुए' : गीत संख्या - 58)

गुलाब खण्डेलवाल के तृतीय चरण के गीतों का प्रतिपाद्य :

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के तृतीय चरण के गीत-संग्रहों (नाव सिन्धु में छोड़ी', 'कितने जीवन, कितनी बार' 'गीत-वृन्दावन' और 'सीता-वनवास में परमहंस मनोवृत्ति का चित्रण है जिसमें कवि अपना सर्वस्व प्रभु को समर्पित कर चुका है और प्रभु की प्रभा में ही विलीन हो जाना चाहता है। गीतकार आत्म-विभोर होने पर कभी अनुनय-विनय करता है, कभी पौराणिक सन्दर्भों को लेकर निवेदन करता है, कभी राधा-कृष्ण का स्मरण करता है और कभी आत्म-निवेदन करता-करता विह्वल होने लगता है। कवि की एक मात्र अभिलाषा प्रभु की कृपादृष्टि पाने की है। प्रत्येक क्षण उसी प्रभु का लीला-गायन करना और सामीप्य की इच्छा करना ही एक मात्र उसका ध्येय है -

जीवन गाते गाते बीते
और पहुँचकर अन्तिम सुर पर, सुमनांजलि-सा रीते
दिन भर सागर-तट पर गाँऊ
बालू के घर बना, मिटाऊँ
गाते ही गाते घर आऊँ
सोच न हारे जीते

नव-नव धुन जागे क्षण-क्षण में
नित नव राग उठे जीवन में
गीतों में सज दूँ जो मन मे
दुख हों मीठे-तीते
('नाव सिन्धु में छोड़ी' : गीत-संख्या 21)

कवि प्रभु की कृपा से पूर्णतः अभिभूत हो चुका है और कृतज्ञता के भार से दब गया है। उसकी संसार में कोई इच्छा शेष नहीं है। अतः अब वह क्या माँगे और क्या न माँगे, क्योंकि प्रभु ने तो बिना माँगे ही उसे सब कुछ दे दिया है। वह कहता है -

अब क्या माँगूँ आगे !
सब कुछ तो दे डाला तुमने पहले ही बेमाँगे
काक मानसर में जा पैठा
रजकण रत्न-मुकुट पर बैठा
फिरे नहीं क्यों ऐंठा-ऐंठा !
भाग्य अचानक जागे
यही विनय है, छोड़ न देना
किया दिये से जोड़ न देना
बीच नृत्य के तोड़ न देना
कठपुतली के धागे
अब क्या माँगू आगे !
('कितने जीवन, कितनी बार' : गीत-संख्या - 34)

'कितने जीवन, कितनी बार' के प्रतिपाद्य में आध्यात्मिकता के साथ दार्शनिक भावों की अधिकता है। कवि के भावों में सार्वभौम उदारता और संतोष की पराकाष्ठा दिखाई देती है। यहाँ उसे अब कुछ भी पराया नहीं लगता, सब कुछ अपना ही अपना है। यह उत्कृष्ट भाव इस प्रकार शब्दायित किया गया है -

सारी धरती, डेरा अपना
सातों सागर घर, आँगन हैं, अम्बर घेरा अपना

चमक उठे किरणों के धागे
ध्वनि आयी, 'आगे ही आगे
बढ़ता जा जितना मन माँगे
सब है तेरा अपना'
('कितने जीवन, कितनी बार', गीत-संख्या - 77)

'गीत-वृन्दावन' और 'सीता-वनवास' के गीतों का प्रतिपाद्य राधा और कृष्ण का अलौकिक प्रेम और राम और सीता का, कर्तव्य-बोध से संयुक्त आत्मिक प्रेम है। राधा और सीता का क्रमशः अपने प्राणवल्लभ श्री कृष्ण और श्री राम से एक-एक क्षण का वियोग एक-एक युग की भाँति व्यतीत होता है। वे उन्हें भुला नहीं पाती हैं। गीत-वृदावन में राधा की विरह-कातरता देखिए -

राधा मुरली कर में लेती
जहाँ झुके थे अधर श्याम के, वहीं अधर धर देती।
दौड़-दौड़ जाती पनघट पर
भर-भर कर लुढ़काती गागर
चूम-चूम लेती झुक-झुककर
यमुना-तट की रेती।
जपती माला सतत नाम की,
साध लिये अन्तिम प्रणाम की
वह भी क्या कर सकी, श्याम की
जो भी कभी चहेती !
('गीत-वृन्दावन : गीत-संख्या - 11)

'सीता-वनवास' के गीतों का प्रतिपाद्य रामकथा को स्मृति में रखते हुए सीता का अद्भुत प्रेम और निष्कलंक तथा निर्द्वन्द्व चरित्र है। सीता को दूसरे वनवास-काल में बहुत अधिक दुख मिलते हैं लेकिन वे किसी भी प्रकार से श्री राम पर दोषारोपन नहीं करती हैं। जब परिजन, पुरजन और प्रियजन सीता को सादर अयोध्या ले चलने को आते हैं, तब वसिष्ठ के कथन में मानों प्रतिपाद्य सम्पूर्णता के साथ मुखरित हो उटा है, यथा -

सीता ! शोक भुला दे मन का

बोले उठ वसिष्ठ, बेटी ! स्वागत कर इस शुभ क्षण का
पीड़ा में तपकर ज्यों कंचन
तूने किये युगल कुल पावन
फिर से सजा अवध-सिंहासन
आँसू पोंछ नयन का
जननी, जनक, सास, पति, देवर
लेने आये पुर-नारी-नर
आ बेटी ! आ जा अपने घर
मान कहा गुरुजन का
('सीता-वनवास' : गीत-संख्या : 45)

गीतकार गुलाब खण्डेलवाल के गीतों का प्रतिपाद्य जीवन के विकासात्मक चरणों का, सांसारिक अनुभवों और मधुर कल्पनाओं का, अन्तःबाह्य प्रकृति के मनोरम चित्रों का, प्रेम-प्रसंगों, मनुहारों तथा संयोग वियोग के विविध रंगों का, क्षणिक सुखों की नश्वरता का, निर्वेद भावों का, भक्ति-ज्ञान, वैराग्य, दर्शन आदि आध्यात्मिक साधना के विभिन्न चरणों का, मनोहर कल्पनाओं का, पौराणिक पात्रों तथा सन्दर्भों का ऐसा सुन्दर स्वच्छ और आकर्षक दर्पण है जिसमें पाठक को अपनी स्थिति ही दृष्टिगत नहीं होती है बल्कि जीवन का यथार्थ और आदर्श भी जो इनमें अभिलषित के साथ शब्दायित हुआ है, उसके मन-प्राणों को लोकोत्तर सात्विक आनंद से भरकर उसकी भावनाओं को भी परिष्कृत कर देता है।

गुलाब खण्डेलवाल के ग़ज़ल-संग्रहों का प्रतिपाद्य :

हिन्दी-ग़ज़लों के पुरोधा श्री गुलाब खंडेलवाल ने अपने चारों संग्रहों में मिला कर करीब 365 गजलें लिखी हैं जिन्हें प्रतिदिन एक ग़ज़ल के हिसाब से गाकर एक पूरा वर्ष बिताया जा सकता है।

'सौ गुलाब खिले, 'पँखुरियाँ गुलाब की' , 'कुछ और गुलाब' तथा 'हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' शीर्षकों से गुलाब जी की ग़ज़लें संग्रहीत हैं। इन ग़ज़लों के सन्दर्भ में श्रीनारायण चतुर्वेदी ने लिखा है - 'समसामयिकता और सामाजिक संदर्भ के अभाव में तथा कवि की प्रचार-सम्बन्धी उदासीनता के कारण यद्यपि

इन ग़ज़लों का उतना प्रचार-प्रसार नहीं हुआ है जितना होना चाहिए था परन्तु विद्वानों द्वारा इन्हें बहुत सराहा गया है और ग़ज़ल-प्रेमियों एवं सहृदयों ने इन्हें खूब अपनाया है। ग़ज़ल के सुपरिचित प्रेम-रस से सराबोर रहने पर भी भारतीय संस्कृति की मर्यादा का इनमें पूर्ण निर्वाह है और कहीं भी संयम और सुरुचि की रेखा का अतिक्रमण नहीं हुआ है। इनमें उर्दू-ग़ज़लों की गूँज नहीं मिलेगी जो स्वयं में एक बड़ी उपलब्धि है।[1] गुलाब जी की ग़ज़लों का प्रतिपाद्य श्रृंगार (संयोग-वियोग) प्रेम, मनुहार आत्म-निवेदन, सौन्दर्य, प्रकृति-चित्रण सांसारिकता, आदर्श और यथार्थ के अनुभव तथा लोक के लिए कुछ मनोरम सुझाव आदि हैं।

ग़ज़ल की यह विशेषता होती है वह इतनी अर्थवत्ता लिये रहती है कि कोई भी सहृदय उसमें अपने मनोनुकूल भावों की झाँकी देख सकता है। गुलाब खण्डेलवाल ने ग़ज़लों को इतनी सजगता और कलात्मकता से प्रस्तुति दी है कि वे सीधे-सीधे हृदय पर चोट करती हैं। उनमें पाठक अपने ही अंतर के भावों की गूँज सुनकर रसमग्न हो जाता है। कवि का दावा भी है-

शेर तो ये हैं सभी उनको सुनाने के लिए
कुछ मगर हैं दिल ही दिल में गुनगुनाने के लिए
('पँखुरियाँ गुलाब की' : गजल-संख्या - 27)

ग़ज़ल की विशिष्टता को ध्यान में रखकर कवि ने लिखा है -
ग़ज़ल में दिल तड़पता है किसीका
उन्हें कह दो कलेजा थाम लेंगे
('सौ गुलाब खिले' : ग़ज़ल-संख्या - 96)

विश्व का कदाचित् ही कोई ऐसा साहित्यकार हुआ हो जिसने जीवन को परिभाषित न किया हो। गुलाब जी की कितनी ही ग़ज़लों का उनमान (प्रारंभ) ही ज़िंदगी के नाम से है। इसके साथ ही उन्होंने प्यार को भी जगह-जगह पर परिभाषित किया है -

जिन्दगी दर्द का दाह है
प्यार छाँहों भरी राह है

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : भूमिका पृ0 4.

जलते हैं आँसुओ के दिये
उम्र अब आह ही आह है
('सौ गुलाब खिले' : गजल-संख्या - 19)

एक अहसास की रंगत के सिवा कुछ भी नही
ज़िन्दगी ग़म की हकीकत के सिवा कुछ भी नहीं
('पँखुरियाँ गुलाब की' : ग़ज़ल-संख्या - 84)

रूप-सौन्दर्य ग़ज़लों का मुख्य प्रतिपाद्य है। गुलाब जी ने अनेक ग़ज़लों में प्रिय के रूप को अंकित किया है। प्रिय ने लजीली आंखों से देखा तो मानो ज़िन्दगी पुकार गयी -

किसीके रूप का उन्माद कैसे भूले कोई
पिघलती आग-सी सीने के आर-पार गयी
पलटके देखा जो तुमने लजीली आँखों से
लगा कि फिर से मुझे ज़िन्दगी पुकार गयी
('सौ गुलाब खिले' : गजल-संख्या - 9)

सौन्दर्य तो सौन्दर्य होता ही है लेकिन जिसे जो रूप भा जाये वही रूप उसके लिए अच्छा है। इस अनुभूत सत्य को प्रतिपादित करते हुये गुलाब जी कहते हैं -

फूल काँटों के संग अच्छा है
उनको भाये जो रंग अच्छा है
('पँखुरियाँ गुलाब की' : ग़ज़ल-सख्या - 46)

प्रिय के रूप-सौन्दर्य के प्रतिपादन में कविवर गुलाब ने अभिधा से नहीं लक्षणा-शक्ति से बात कही है। जैसे -

(1) हट गयी चाँद की आँखों से झिझक पिछली रात
काँपती झील के दर्पन में जो हुआ सो ठीक
('सौ गुलाब खिले' : ग़ज़ल-संख्या - 6)

(2) हमने माना कि हरेक रंग में मादक है रूप
रूप चितवन से जो बरसा है कभी, और ही है
प्यार में और ही आँखों में महकते हैं गुलाब
चाँदनी रात में फूलों की हँसी और ही है
('सौ गुलाब खिले' : गजल-संख्या - 7)

'वह चितवन औरै कछु, जिहि बस होत सुजान' (बिहारी लाल) जैसे रूप को गुलाब जी ने भी निरूपित किया है -

वही पँखुरियाँ, वही बाँकपन, वही रंग-रूप की शोखियाँ,
वो गुलाब और ही था मगर, जिसे तुम खिलाके चले गये
('सौ गुलाब खिले' : गज़ल-संख्या - 8)

रूप-सौन्दर्य के साथ प्रेम की चर्चा अवश्य की जाती है। रूप का सम्मोहन हृदय को प्रेम की परिधि में खींच कर अवश्य ले जाता है। प्रेम आन्तरिक सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध को गुलाब जी कोई नाम नहीं देना चाहते हैं -

प्यार को हम न कोई नाम दिया चाहते हैं
बस उन्हें एक नज़र देख लिया चाहते हैं
('सौ गुलाब खिले ' : गजल-संख्या - 107)

कवि गण आज तक प्रेमिका से प्रेम न पा सकने की पीड़ा ही ग़ज़लों में और गीतों में व्यक्त करते आये हैं परंतु गुलाब जी इस संबंध में एक सर्वथा मौलिक और अनूठी बात कहते हैं -

तेरा प्यार मिल भी जाये, तेरा रूप मिल न पाता
जो हज़ार बार मिलते, यही इंतज़ार होता

प्रेम में सबसे अधिक महत्त्व समर्पण का होता है। बाद में दुनिया कुछ भी कहे, सम्मान दे या घृणा, फूल बरसाये या पत्थर, इन सब का प्रेमिल मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। मन प्रेमी की एक मुस्कान पर सर्वस्व लुटाने को तैयार रहता है, यथा -

हैं बिछी पलकें हमारी हर अदा पर आपकी
आप भी इस ओर थोड़ा मुस्कुराकर देखिए

एक-से हैं अब हमें, बरसा करें, पत्थर कि फूल
ज़िन्दगी यह हमको लायी है कहाँ पर, देखिए
('सौ गुलाब खिले' : गजल-संख्या - 104)

प्रेमियों को प्रेम की अमरता अपेक्षित है। जिन्दगी तो आनी-जानी चीज है। परंतु प्रेम का नाता जन्म-जन्मांतर तक चलता रहता है -

दिल को तुम्हारे वादे का एतबार तो रहे
यह जिन्दगी रहे न रहे, प्यार तो रहे
('सौ गुलाब खिले' : गजल-संख्या - 79)

ज़िंदगी फिर कोई पाते तो और क्या करते !
आपसे दिल न लगाते तो और क्या करते !
('पँखुरियाँ गुलाब की' ग़ज़ल-संख्या-89)

प्रेम निराशा में आशा का संचार करता है। वह अँधेरे में दीपक के समान है। प्रेम की पीड़ा भी आनंददायक होती है। इस लिए कवि सब के लिए प्रेम का संदेश देना चाहता है। इसी भावना को व्यापकता से लेकर कवि गुलाब जी कहते हैं -

निराश प्राण में आशा के सुर सजाते-चलो
अँधेरी रात है, कोई दिया जलाते चलो
दिलों में प्यार की पीड़ा नयी जगाते चलो
कुछ और रूप की दुनिया को जगमगाते चलो
किरन-किरन में मधुर बाँसुरी बजाते चलो
कली-कली के कलेजे को गुदगुदाते चलो
('सौ गुलाब खिले' : ग़ज़ल-संख्या - 78)

प्रिय को देखने, पास रहने और उसके सुख-दुख की जितनी चिन्ता प्रेमी-मन को होती हैं उतनी किसी और को नहीं। संयोगावस्था को लेकर भी कवि ने ग़ज़लों में कई चित्र उकेरे हैं। इन चित्रों की प्रगाढ़ता भी दर्शनीय है -

नहीं एक दिल की लगी छूटती है
भले ही भरी ज़िन्दगी छूटती है

वे घबराके यों मेरी बाँहों में आये
पहाड़ों से जैसे नदी छूटती है
('सौ गुलाब खिले' : ग़ज़ल-संख्या 49)

प्रिय से आत्म-निवेदन करने का सभी को अधिकार है। प्रिय का सामीप्य जीवन की ख़ुशनसीबी है। ज़िन्दगी में प्रेम के द्वारा ही प्रकाश भरा जा सकता है। गुलाब जी प्रिय से निवेदन करते हैं -

मुझे भी अपना बना लो, बहुत उदास हूँ मैं
गले से आके लगा लो, बहुत उदास हूँ मैं
अँधेरा लूटने आया है रौशनी का सुहाग
दिया कोई तो जला लो, बहुत उदास हूँ मैं
नये सिरे से सजायेंगे ज़िदगी को आज
फिर अपने पास बुलालो, बहुत उदास हूँ मैं
('सौ गुलाब खिले' : ग़ज़ल-संख्या - 31)

यदि संयोग श्री गुलाब खण्डेलवाल का प्रिय विषय है तो वियोग भी उनका उतना ही प्रतिपाद्य है। प्रिय के व्यवहार में जैसे ही परिवर्तन आता है। वैसे ही प्रेमी-मन में चिंता के बादल मँडराने लगते हैं -

उनका बदला हुआ हर तौर नज़र आता है
अब न पहले का वही दौर नज़र आता है
यों न झुकती थीं हमें देखके उनकी नज़रें
आज नज़रों में कोई और नज़र आता है
('पँखुरियाँ गुलाब की' : ग़ज़ल-संख्या - 50)

प्रिय की बेरुख़ी को, नज़रअन्दाजी को और ग़ैरियत को लेकर प्रेमी न दुखी होते हैं न चिन्तित। प्रिय यदि इस तरह ही याद रखता है तो भी उन्हें तसल्ली होती है। गुलाब जी के साथ भी कुछ ऐसा ही घटित हुआ है -

दर्द कुछ और सही, दिल पे सितम और सही
आपको इसमें ख़ुशी है तो ये ग़म और सही
ज़िन्दगी रेत के टीलों में गुज़ारी हमने
इस बयावान में दो चार क़दम और सही

वे भी दिन थे के निगाहों में खिल रहे थे गुलाब
आज कहते हैं हमें और तो हम और सही
('पँखुरियाँ गुलाब की' : ग़ज़ल-संख्या 73)

प्रेम की पीर का कोई हिस्सेदार नहीं हो सकता, भले ही हमारे प्रियजन हमारे लिये आहें भरा करें। वियोग मे जीनेवाले को तूफान का कभी डर नहीं होता क्योंकि उसकी नौका तो नदी की भँवरों से ही खेलती है -

दर्द दिल का तो नहीं बाँट सका कोई
आये जो दोस्त, गये आहें भर-भर के
उनको तूफान के थपेड़ों का डर क्या
नाव यह रही है सदा सामने भँवर के
('कुछ और गुलाब' : ग़ज़ल-संख्या - 36)

प्रेम लौकिकता से अलौकिकता की ओर कैसे मुड़ चलता है, इस वास्तविकता को गुलाब जी के शब्दों में देखिये -

दिन गुज़रते गये, रात होती रही
ज़िन्दगी ख़ुद-ब-ख़ुद मात होती रही
प्यार की कोई ख़ुशियाँ मनाता रहा
और आँखों से बरसात होती रही
हमने देखी न उनकी झलक आज तक
और हर दम मुलाक़ात होती रही
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : ग़ज़ल-संख्या - 22)

प्रेम के परिवेश का जो अनन्त आकाश है उसे ग़ज़लों में उतारने के लिये ग़ज़लकार श्री गुलाब कल्पनाओं के डैने लगाकर केवल उड़े ही नहीं हैं, उसमें पहले रमे हैं और पीछे एक-से-एक सुन्दर शेर कहते गये हैं।

संसार विचित्रताओं के समूह का नाम है। आदमी जिस जीवन को जीता और भोगता है, उसीको समझने में सदा असफल-सा रहा है। संसार की असाधारणता में फँसी ज़िन्दगी को देखकर श्री गुलाब जी ने कहा है -

धोखा कहें, फरेब कहें, हादसा कहें
इस जिन्दगी को क्या न कहें, और क्या कहें !

खुद बेहिसाब, हमसे हरेक बात का हिसाब
तुमको अगर खुदा न कहें और क्या कहें !
('कुछ और गुलाब' : ग़ज़ल-संख्या - 10)

संसार और जीवन को शायर गुलाब ने एक और दृष्टि से भी प्रतिपादित किया है। एक और प्रकृति के संकेत देखिए और दूसरी और जीवन की संगतियों के साथ विसंगतियों को देखिए -

एक अनजान के घेरे में बन्द है, हम लोग
खुद अपने मन के अँधेरे में कैद हैं हम लोग
उदास साँझ, हवा सर्द है, बादल हैं घिरे
और परदेश के डेरे में बन्द हैं हम लोग
('पंखुरियाँ गुलाब की' ' ग़ज़ल-संख्या 96)

कविवर गुलाब ने वर्तमान जीवन को बहुत नजदीक से देखा है। आदमी का जीवन अकेलेपन का उदाहरण बनकर रह गया है। उसको आज न किसी का सहारा है और न ही कोई आशा। सब ओर से कटा हुआ-सा आदमी जी रहा है, सिर्फ जी रहा है। आम आदमी की मनोव्यथा को प्रतिपादित करते हुये श्री गुलाब लिखते है -

जिन्दगी में यह सवाल उठता है अक्सर, 'क्या करें' ?
बेसहारा, बेअसर, बेआस, बेपर, क्या करें
जब क़यामत में ही होगा फैसला हर बात का,
तू ही बतला, हम तेरे वादों को लेकर क्या करें
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : ग़ज़ल संख्या 21)

संसार की उपेक्षा के कारण अपनी निराशा एवं असंगता को रेखांकित करते हुए कवि कहता है -

पूछनी थी जब न पूछी बात, मुरझाये गुलाब
फूल अब बरसा करें उन पर कि पत्थर, क्या करें

आजकल दिखावे का प्रचलन मनुष्य के जीवन में बड़ी गम्भीरता से घुल गया है। आडम्बर, स्वार्थ आदि इतने बढ़ रहे हैं कि सांसारिकता से सम्पन्न

शहर वीरान जैसी स्थिति में परिवर्तित होते जा रहे हैं। आपस में लोग परिचित हैं, लेकिन आतंकित-से, भयभीत-से, जीवन जी रहे हैं। इस विसंगति को कवि मात्र चार पंक्तियों में अभिव्यक्ति दे देता है -

कहने को तो वे हम पे मेहरबान बहुत हैं।
फिर भी हमारे हाल से अनजान बहुत हैं।
क्या किससे पूछिये कि जहाँ मुँह सिये हों लोग !
हैं नाम के ही शहर ये वीरान बहुत हैं।
('हर सुबह ताज़ा गुलाब' : गजल-संख्या - 37)

जीवन की प्रसन्नता की झलक घरों, आंगनों, द्वारों और मनुष्य के व्यवहारों से मिलती थी। आज कवि देखता है कि ऐसा कहीं कुछ नहीं लगता जिससे जीवन्तता की झलक आती हो। कवि के शब्दों में -

फूल अब शाख से झड़ता-सा नज़र आता है
ठाठ पत्तों का उजड़ता-सा नज़र आता है
और ले चल कहीं, ऐ दोस्त ! हर एक घर से यहाँ
एक कंकाल उघड़ता-सा नजर आता है
('हर सुबह एक ताज़ा गुलाब' : ग़ज़ल-संख्या - 40)

उक्त उद्धरणों से यह आशय नहीं लगाना है कि कवि ने अपनी ग़ज़लों में निराशा, हताशा, और कुण्ठा का चित्रण किया है। कविवर गुलाब भारतीय संस्कृति के आस्थावादी स्वर हैं। जगतनियन्ता की समीपता में रहने की सन्मति देते हैं। जीवनरूपी नाटक का जो प्रतिपादक है, उसका स्मरण हमें प्रत्येक पल रखना चाहिए -

ज्योति किसकी है दूर अम्बर में
क्षुद्र अणु में समा रहा है कोई
कोई है दृश्य, कोई द्रष्टा है
और परदा उठा रहा है कोई
देखिये खोलके आँखे तो जरा
सामने मुस्कुरा रहा है कोई
('सौ गुलाब खिले' : ग़ज़ल-संख्या - 11)

श्री गुलाब खण्डेलवाल की ग़ज़लों का प्रतिपाद्य व्यक्ति के अन्तः-बाह्य

सुन्दर-असुन्दर को दिखानेवालें निर्मल दर्पण की भाँति है।

(ग) गुलाब खण्डेलवाल के अन्य काव्यों का प्रतिपाद्य :

अन्य काव्यों से आशय उन प्रकाशित रचनाओं से है जिनमें प्रमुख रूप से गीत प्रकाशित हुये हैं, साथ ही कुछ कविताएँ भी मुद्रित हुई हैं। ऐसी पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं - 'कविता' , 'शब्दों से परे' , 'ऊसर का फूल' , 'नूपुर-बँधे चरण' आदि।

कविवर गुलाब खण्डेलवाल का प्रथम काव्य संग्रह 'कविता' शीर्षक से प्रकाशित हुआ जिसमें गीत और कविताएँ, दोनों ही संग्रहीत हैं। इन कविताओं में कवि ने कहीं प्रिय की छवि प्रकृति के विभिन्न मनोरम रूपों में देखी है, कही विस्मय के साथ स्वयं से अनेक प्रश्न किये हैं और कहीं जीवन और जगत के प्रति चिन्ता व्यक्त की है। 'कविता' संग्रह की एक कविता का शीर्षक है 'मरण'। इस रचना का प्रतिपाद्य ही मानों इस संग्रह की कविताओं का प्रतिपाद्य है। संसार की मरणधर्मिता से कवि आकुल है और अन्तर्मन की व्यथा इन शब्दों में व्यक्त करता है-

मरण ! मेरे सर्वोच्च विकास
तुमको पाकर पूर्ण हो गया जीवन का इतिहास
क्या हो यह सौन्दर्य, विभा, यह सुषमा, यह उल्लास
जब न तनिक हम ले पाते हैं यहाँ शान्ति की साँस
वहाँ अँधेरी घाटी के उस पार तुम्हारा घर है,
जो जग के उत्थान-पतन की सीमा के बाहर है
वहाँ सदा मधुमास, वहाँ कुम्हलाने कुसुम न पाते
हो न बहुत कुछ, पर जो कुछ है वह तो अविनश्वर है ![1]

'कविता' की कविताओं में कवि विश्व को कौतूहल से देखता तथा अपने लिये उस भूमि को खोजता है जहाँ खड़े होकर वह साहित्य-साधना में लग सके। इसकी सजग अभिव्यक्ति 'भावों का राजकुमार' में भी हुई है।

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 21.

'ईश्वर है सौन्दर्य, प्रेम ही एक धर्म है मेरा' इस आदर्श का प्रतिपादन कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 'ऊसर का फूल' की कविताओं में किया है। वास्तव में गुलाब जी प्रेम और सौन्दर्य के पुजारी हैं।[1] 'तितली और पतझर' में जीवन और संसार को प्रतीक बनाकर कवि संसार की निर्ममता और कठोरता को प्रतिपादित करता है -

यहाँ थके-माँदे परदेशी लेते नहीं बसेरा,
शुक-पिक-कूजित डाल बनी है गिलहरियों का डेरा,
तितली ! तू क्यों आज कुसुम-कानन से दौड़ी आयी
रूँठ, अरी ! यह कर न सकेगा समुचित स्वागत तेरा।[2]

'ऊसर का फूल' की कविताओं में कविवर गुलाब वैयक्तिक सीमा से निकल कर संसार की व्यापकता में प्रविष्ट हो गये हैं। आम आदमी की पीड़ा से उनका अन्तर्मन दुखी है। कवि इस पीड़ा को शब्द देता है -

कैसे जाओं चिनगियों-से शब्द मेरे
उड़ निखिल संसार में
दूर काँबों के निभृत गृह के अँधेरे
दीनतम परिवार में
मनुज-पाप-कलंक, कृश कृमि-से सरकते
वृद्ध जरजर के जहाँ
हाथ भर ऊँचे घरौंदे, जो दरकते
स्पर्श से, जाओं वहाँ[3]

'नूपुर-बँधे चरण' गीत और कविताओं का एक अनूठा संग्रह है जिसमें कथ्य और शिल्प दोनों की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रचनाएँ संग्रहीत हैं। यद्यपि गीत और कविताओं का प्रतिपाद्य सृष्टि-रहस्य, मानव-जीवन और आदर्श और यथार्थ हैं तथापि कवि ने उन सन्दर्भों को भी प्रस्तुति दी है जो मानवीय जीवन

1.ऊसर का फूल : प्राक्कथन : इम्तियाजुद्दीन खाँ : पृ0 75.
2. वही : पृ0 30.
3. वही : पृ0 101.

के लिये अपेक्षित हैं। आसृष्टि जो कुछ भी है वह सब मनुष्य के लिये है। अतः मनुष्य को लक्ष्य करके कवि कहता है –

> आत्मा के हित लोक-विभव सब, मानव तुच्छ न कहना
> जल के समतल-सा समाज को, अविरल होगा रहना
> धन का त्याग, शक्ति का करुणा, कर्म ज्ञान का गहना
> धन्य हुआ जीवन में जिसने सरल नाव से पहना
> लिये लुकाठी जला कबीरा, घर फूँके सो आवे
> हवा और पानी-सी धरती जन-जन में बँट जावे[1]

मनुष्य के जो जीवन-मूल्य और आदर्श हैं उनको अपनाये बिना जीवन को सुन्दर और जीने योग्य नहीं बनाया जा सकता। कविवर गुलाब निम्नांकित पंक्तियों से यह बताना देना चाहते हैं कि कंचन की कारा में बँधे रहकर जीवन का वास्तविक रंग-रूप नहीं पाया जा सकता। मानवता का शुभ त्याग में ही निहित है। विनोबा के भूमि माँगने के प्रसंग को लक्ष्य करके कवि ने यही सत्य उजागर किया है –

> निर्मल हो लो, उज्ज्वल हो लो, करुणा की धारा में
> सीता-सी आत्मा बन्दी क्यों, कंचन की कारा में !
> मानवता का महापर्व यह, सर्वत्याग की वेला
> वामन आ पहुँचा है फिर से बलि के भंडारा में
> कभी-कभी होता है ऐसा, दाता हाथ बिछावे
> हवा और पानी सी धरती, जन-जन में बँट जावे
> महामंत्र लाये जीवन का संत विनोबा भावे[2]

सांसारिक सुखों पर एक वर्ग अपना ही स्वामित्व मानता है। कवि अपना भाव प्रतिपादित करता हुआ कहता है कि यह धरती और प्रकृति के वरदान सभी को समान रूप से मिलने चाहिए क्योंकि यह सब दृश्यमान विधाता का दिया हुआ है। इस पर एकाधिकार जताना अपने अहं को ही अभिव्यक्ति देना है। कवि अपनी मनोरम वाणी में कहता है –

> सबल की न धनवान की
> धरती है भगवान की

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक श्रीनारायण चतुर्वेदी: पृ0 162.
2. वही : पृ0 162.

जैसे मुक्त समीर है
ज्यों सरिता का नीर है
आतप और प्रकाश है
जैसे नीलाकाश है
वैसे ही हर प्राण की
सब को जीवन प्रेय है
सुख सब का अभिप्रेय है
त्यागी जन ही गेय है
बलिदानी को श्रेय है
जैसे राघव-जानकी।[1]

कल्पना और यथार्थ की दो चक्कियों में पिसते अपने कवि-जीवन को गुलाब जी इस प्रकार रेखांकित करते हैं -

तम से बँधा प्रकाश, मृत्यु से जीवन, जड़ता ने गति बाँधी
बँधा इस तरह मैं, भू-नभ के बीचों-बीच बँधे ज्यों आँधी।
सरिता के दोनों कूलों पर मैंने नाव टिकानी चाही
दो दुनिया हैं मेरे दो हाथों में, दोनों आधी-आधी
* * * * *
कहा जीवितों ने मृत मुझको, मृत्यु साँस से डरकर भागी,
काया लादे हुआ प्रेत-सा फिरा चतुर्दिक् मैं गृहत्यागी,
खड़ी दो युगों के सन्धिस्थल पर ज्यों किसी महाकवि की कृति
मैं जागा तब दुनिया सोयी, मैं सोया तब दुनिया जागी।[2]

'शब्दों से परे' संग्रह की 'अकेलेपन का सफर' कविता में कवि को बीते हुए जीवन की और बिछुड़े हुए साथियों की याद विकल कर देती है -

वे कहाँ गये जो इन भवनों में रहते थे !
अब भी जिनके पदचाप सुनाई पड़ते हैं
हो चुका सभा का अन्त, गये गानेवाले

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 164.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 182.

फिर भी मुझको आलाप सुनाई पड़ते हैं
* * * * *
कैसी-कैसी मूर्तियाँ यहाँ पर आती हैं !
रचनेवाला भी कितने रूप रचाता है !
फिर झपट बाज-सा, पर उनको पल भर में ही
जाने अनन्त में कहाँ उड़ा ले जाता है ?[1]

भले ही मनुष्य के हाथ में सर्वशक्तिमान के समान कुछ भी न हो लेकिन संघर्ष करना तो उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। इसीलिए कविवर गुलाब खण्डेलवाल की मान्यता है कि जिस जीवन में संघर्ष नहीं है उसका स्वादहीन होना स्वाभाविक ही है। मनुष्य को सुख-दुख, मिलन-वियोग जैसे विपरीत समीकरणों में ही जीने में आनन्द मिलता है। इसी आनन्दोपलब्धि के लिये कवि कहता है -

जीवन में संघर्ष न हो जीवन में क्या स्वाद रहेगा !
पीड़ा की उष्मा न मिलेगी,
पतझर और वसन्त न होगा
सुख, दुख, मिलन, विरह, स्मिति, आँसू
आदि न होगा अन्त न होगा
समरसता निर्बाध अकुण्ठित, पर क्या उसके बाद रहेगा
माना जीवन दुख ही दुख है
पर क्यों पग पड़ता सम्मुख है
सदा अनागत के स्वागत की
उत्सुक आकुलता में सुख है
बिछुड़न की पीड़ा का दंशन, सदा प्रेम की याद रहेगा[1]

अत्यन्त संक्षेप में कहा जा सकता है कि कवि ने इस भाव को विभिन्न कविताओं में पल्लवित किया है कि यह संसार सुन्दर और प्रेम से पूर्ण है लेकिन इसके प्रति मनुष्य को राग-भाव जागृत नहीं करना है बल्कि प्रभु के प्रति आस्थावादी रहते हुये सुख-दुख के मध्य संघर्षशील रहना है जिससे मनुष्य का अपना अस्तित्व बना रहे।

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खंड : पृ0 277.

गुलाब खण्डेलवाल के अन्य काव्य-संग्रहों का प्रतिपाद्य :

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की रचनाओं का संसार विविध तथा व्यापक है। कवि ने कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों में मौलिकता का परिचय दिया है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल की कविताओं के अनेक संग्रह हैं जिनका प्रतिपाद्य भी पृथक्-पृथक् है। हम यहाँ अध्ययन की सुविधा के लिये कविता-संग्रहों को अलग-अलग ले रहे हैं –

'मेरे भारत, मेरे स्वदेश', का प्रतिपाद्य :

सन् 1962 ई0 में चीन ने 'हिन्दी चीनी भाई-भाई' का नारा देकर भारतीय भू-भाग पर आक्रमण बोल दिया। समस्त भारत इस दुर्घटना से स्तब्ध रह गया। कवियों ने भी अपनी ओजमयी वाणी से भारतीयों को उनके उज्ज्वल अतीत का स्मरण दिलाया और कविवर गुलाब ने भी 'वीर-भारती' शीर्षक से प्रेरणापरक 108 दोहे तथा अन्य कवितायें लिखीं। इस संग्रह की समस्त रचनाओं में अस्मिता की रक्षा का प्रयास है। कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं –

यह परिवेश समुद्रगुप्त का, यह शकारि का साका है
राणा का चित्तौर लड़ाका, गढ़ यह वीर शिवा का है
गुरु गोविंद सिंह का प्यारा यह रणमंदिर बाँका है
यह सुभाष की स्वर्ण-कीर्ति, गाँधी की विजय-पताका है
शांत, सहिष्णु देश यह जितना, उतना उग्र, प्रबल भी है
हिमगिरि में शीतलता जितनी, उतना तरल अनल भी है
तू समुद्र तो हम अगस्त, शिव हम तू अगर गरल भी है
ब्रह्मपुत्र का जल यह तेरी जन-संख्या का हल भी है
('गुलाब खण्डेलवाल' : तृतीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 71)

'चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर' का प्रतिपाद्य :

कविवर गुलाब खण्डेलवाल का प्रस्तुत कविता-संग्रह भारतीय अस्मिता को रेखांकित करता है। इन कविताओं में कवि शताब्दियों की दासता के उपरान्त मिली स्वतन्त्रता को प्रणाम करता है, बिहार-हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के

गया-अधिवेशन पर, मानस-चतुश्शती पर, नेहरू के निधन पर, पाकिस्तान के आक्रमण पर समयानुकूल अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है और अंत में अपनी उपेक्षा से खीजकर कहता है -

क्या सुनिये, क्या कहिये
अन्धों में हाथी ले आये, सिर धुन-धुनकर रहिये
कुछ बोले हैं तना ताड़ का, कुछ बोले अजगर है
कुछ बोले गर्भिणी भैंस चढ़ गयी एक छत पर है
जितने मुँह उतनी ही बातें, सब सुनिये सब सहिए
सत्य बड़ा है, फिर भी अक्सर दाँव हार जाता है
चतुराई की नाव बिना, कब, कौन पार जाता है !
बिना युक्ति के निकल न पाते धँसे पंक में पहिये[1]

कवि ने प्रस्तुत संग्रह की कविताओं के माध्यम से महापुरुषों के प्रति श्रद्धांजलियाँ भी अर्पित की हैं तथा देशभक्ति की भावनाओं को ओजमयी वाणी में व्यक्त किया हैं

'सीपी-रचित रेत' की कविता का प्रतिपाद्य :

हिन्दी-साहित्य में पाश्चात्य छन्द सॉनेट को प्रथम बार साधिकार और पर्याप्त मात्रा में लाने का श्रेय श्री गुलाब खण्डेलवाल को है। इन सॉनेटों में जो प्रतिपाद्य हैं उसके सन्दर्भ में कविवर गुलाब ने स्वयं लिखा है - 'इनमें से अधिकांश में किशोर-प्रेम की अभिव्यक्ति है जो प्रेम का सबसे सरस, भावक और काव्यमय रूप है। कभी-कभी समालोचकों को छायावादी काव्य की वायवी प्रेमानुभूति के बीच यथार्थ प्रेम की ये अभिव्यक्तियाँ चौंका भी सकती हैं। कोई-कोई इनमें मेरी ग़ज़लों की कुंजी भी ढूँढ़ सकते हैं।[2]

एक रूमानी सॉनेट देखिए -

मैं न कभी सुनता, वे क्या कहते हैं, कानों के अंदर
ध्वनियाँ बजतीं वेणु-कुंज ज्यों ज्या मलयानिल का झोंका

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सम्पादक - श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 297-98.
2. 'सीपी रचित रेत' : गुलाब खण्डेलवाल : ये सॉनेट : पृ0 4.

मैं तो उन पतले-पतले होंठों का हिलना-डुलना भर
मुग्ध बना देखा करता उठना-गिरना उन भौंहों का
कभी न मेरे जी में आता, मैं भी कोई उत्तर दूँ
यही सोचता रहता, इन मद-गुंजित-चंचल-उच्छृंखल
अधर-मधुप-बालों को अधर-मृणालों में नीरव कर दूँ
पलकों की ढालों से ढँक दूँ भालों-सी ये भौंह युगल
पर मैं मुग्ध देखता रहता बरबस रोक हृदय के भाव
मूक बना सुनता रहता उन मृदु शब्दों की झनकारें
बेसमझे भी, सतत निकलते जो उस मुख से बिना प्रभाव
एक-एक कर निकल रहे हों साँध्य गगन से ज्यों तारे।
उसकी वाणी की वीणा में प्राणों का स्वर भर देता
वह तो अधरों से कहती, मैं नयनों से उत्तर देता
(सीपी-रचित रेत : सॉनेट सं0 9)

अक्सर देखा जाता है कि सारे सुखों के रहते भी मनुष्य को यदि जरा-से दुख का भी सामना करना पड़े तो वह अधीर हो उठता है। इस भाव को निम्न-लिखित सॉनेट में कवि ने यों व्यक्त किया है -

जीवन सुखमय कर सकती है एक फूल की मधुर सुगन्ध,
एक गीत कोयल का इसमें सुन्दरता भर सकता है।
क्यों उपवन में भी काँटों में फँसे विवश रोते जन अंध,
जब कि एक कलिका का खिलना मुग्ध उन्हें कर सकता है ?
पर विपरीत सदा तेरी गति है मानवी प्रकृति ! जग में
फूल खिले हों, कूक रही हो पिक, बहता हो मलय-समीर,
दुख का कण्टक एक कहीं फिर भी यदि चुभ जाये पग में,
बनते सब सुख व्यर्थ निमिष में, हो उठते तन-प्राण अधीर।
रोनेवाले ! जोड़ लगाया बैठ कभी निज सुख-दुख का
देख, अभागे ! तुझे मिले वरदान अधिक अथवा अभिशाप
है कृतज्ञता-भागी तुझसे वह अदृष्य या सब सुख का
दाता भी है रोषपात्र ही, दे इतना कितना संताप
सुख की वाणी मौन, न उसकी कहता कोई कभी कथा।
रो उठते हैं एक साथ सब, जहाँ तनिक भी हुई व्यथा।[1]

'गांधी-भारती' का प्रतिपाद्य :

पद्मभूषण श्री सीताराम सेकसरिया जी ने 'गांधी भारती' के प्रतिपाद्य के सन्दर्भ में लिखा - 'गांधी भारती' के सॉनेट जो अपने आप से उतरते चले गये हैं, वह एक प्रेरणा है, भावना है और चिन्तन है जो अनेक रूपों में गाँधी जी के लिये स्वयं होता रहा है। वह उतरा है, स्वयं उतरा है, इसलिये दिव्य है, आलोकित है, सुन्दर है, श्रेष्ठ है।'[3] गांधी जी कुछ करने या कहने से पहले जो आत्म-चिन्तन करते हैं और उसे बाद में क्रियान्वित भी करते हैं, उसीका अनुमान करके कवि ने प्रतिपादित किया है कि स्वतन्त्र भारत को वे कैसा देखना चाहते थे। संक्षेप में यही प्रतिपाद्य है गांधी भारती का। यथा -

सेवा ही मानवता का है अर्थ, बता, जिसने दिन रात,
पीड़ित, पतित, अछूत, अनादृत की सेवा में शेष किया
सारा जीवन एक पवित्र पाठ-सा, सहकर भी आघात
हिंसा और द्वेष के जिसने सेवा का ही मंत्र लिया।

* * * * *

जन-सेवा, जीवन-सेवा, सेवा कुल, ग्राम, राष्ट्र, भू की,
सेवा निखिल मनुजता की, कष्टों के पारावार निमग्न
माँग रही जो मृत्यु बिलखती, धारा उसके आँसू की,
पोंछ सके जो सेवा, रोक सके जो महानाश का लग्न।
ऐसी हो सेवा तो बापू के भारत के वासी हम।
जीवन्मृत अन्यथा कृतघ्न, कुबुद्धि, कुटिल, कुलनाशी हम।[3]

'रूप की धूप' का प्रतिपाद्य :

यह कविवर गुलाब खण्डेलवाल की छोटी-बड़ी रचनाओं का अपेक्षाकृत विशालकाय संग्रह है। इन रचनाओं के प्रतिपाद्य के सन्दर्भ में श्री सीताराम

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 31.
2. वही : पृ0 36
3. 'गांधी-भारती' : गुलाब खण्डेलवाल : 37 वाँ सानेट।

चतुर्वेदी ने लिखा है - 'कवि ने इसमें अस्मिता, अपनी विवशता, तेजस्विता, आत्मबल, अहंकार, खीझ, विफलता, आत्म-विश्वास, मनस्ताप, मनोमंथन, आत्म-चिन्तन, जीवन के मधुर और कटु अनुभव, धैर्य, परिवेश का प्रभाव, प्रियजनों द्वारा किया हुआ अनुराग, प्रत्यनुराग, उपेक्षा, आशा-निराशा, चिन्ता वेदना, सब को विभिन्न चटकीले रंगों में प्रस्तुत करने का अभिनव और श्लाघनीय प्रयास किया है। सबसे अधिक प्रशंसनीय तत्त्व यह है कि कवि ने किसी प्रकार का छद्मवेष या घटाटोप धारण करने की कृत्रिमता का प्रदर्शन नहीं किया वरन् जो कुछ उसने स्वतः अनुभव किया उसे निश्छद्म रूप से प्रस्तुत करने में न तो ढिठाई की है, न संकोच किया है।[1] वास्तव में प्रस्तुत संग्रह में अधिकतर कवि 'मैं यह हूँ' को प्रतिपादित करने में लगा है। यथा -

जीवन ही भोगा है, जीवन ही जिया है
जीवन ही दिया और जीवन ही लिया है
तनमन तो तौल दिये काल की तुला पर किन्तु
जीवन का मैंने कभी मोल नहीं किया है[2]

प्रस्तुत 'रूप की धूप' काव्यसंग्रह में 'उमर खय्याम' शीर्षक से 67 मुक्तक दिये गये हैं। इनमें क्षणिक आनन्द का प्रतिपादन किया गया है। संसार में जो कुछ है वह मनुष्य के लिये है। अतः सब कुछ उसके लिये भोग्य है। व्यक्ति के न रहने पर सब कुछ व्यर्थ हो जाता है। अंत में उमर खय्याम के इस कथन के साथ 'उमरखय्याम' नामक 67 रुबाइयों के इस लघु-प्रबंध का अंत हो जाता है -

मैं रहूँगा न जहाँ कौन सुरालय होगा !
किस प्रिया का न मुझे रूप झलक जायेगा !
कौन यौवन कि जहाँ प्यास न होगी मेरी !
अंश मेरा कि मरा पात्र छलक जायेगा।[3]

'रूप की धूप' में 'दोहा शतदल' एक महत्त्वपूर्ण और सशक्त रचना है। खड़ी बोली में लिखे गये ये दोहे श्रृंगार-प्रधान हैं। रूप और प्रेम की इनमें

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 94
2. वही : पृ0 111.
3. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : तृतीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 157.

एक-से-एक सुंदर झाँकियाँ हैं -

सकुच तनिक तिरछी झुकी, कर कपाट-से जोड़
सलिल-वृष्टि करती गई, दृष्टि दृष्टि में छोड़

गये न पहले-से नयन लिपट दृष्टि से लोल
मिले, खिले, सकुचे, झुके, उठे, बढ़े, बेबोल

छवि-दर्शन से कब मिटी, प्रिय-दर्शन की पीर !
चित-चातक को चाहिए स्वाति, न सुरसरि-नीर।

प्राण ! तुम्हारे रूप में, बड़ा विरोधाभास
पास रहूँ तो दूर हूँ, दूर रहूँ तो पास।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : दोहा-शतदल)

अतुकान्त काव्यों का प्रतिपाद्य :

गुलाब खण्डेलवाल जी प्रयोगधर्मी कवि हैं। उन्होंने विभिन्न काव्य-शैलियों को बड़े साहस और दम-खम के साथ आजमाया है। जहाँ एक ओर उन्होंने तुकान्तकाव्यों (प्रबन्ध, मुक्तक और गीत) की सृष्टि की है वहीं दूसरी ओर उन्होंने साधिकार अतुकान्त काव्यों की सृष्टि भी की है। हृदय-पक्ष के साथ-साथ बुद्धि-पक्ष को भी कवि ने बनाये रखा है। ये कविताएँ भी बड़ी मार्मिक हैं। यद्यपि अतुकान्त का शुभारम्भ प्रथम काव्य-संग्रह से ही हो जाता है तथापि शैली का जो रूप आगे अनेक संग्रहों में सामने आया उसका शुभारम्भ 'शब्दों से परे' की कतिपय कविताओं से ही होता है। अतुकान्त काव्यों में - 'शब्दों से परे' 'व्यक्ति बन कर आ', 'बूँदें जो मोती बन गयीं', 'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ', 'कस्तूरी कुण्डल बसे', 'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ' , 'रेत पर चमकती मणियाँ' आदि प्रमुख हैं।

'शब्दों से परे' का प्रतिपाद्य पाठकों को ऐंद्रिय लोक से आगे ले जाता है जैसा कि इन पंक्तियों से व्यक्त हो रहा है - 'यह दर्शन-ग्रन्थ नहीं है, पर दार्शनिक सिद्धान्तों की स्वानुभूति कवि को नाना प्रकार से हो चुकी है। इन की अभिव्यंजना भाव-विभोर होकर की गयी है।[1] जैसे परमात्मा अव्यक्त है लेकिन

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 262.

कवि उससे अपना तादात्म्य स्थापित करना चाहता है -

इसलिए मैं व्यक्त से अव्यक्त होना चाहता हूँ
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा नयन है,
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा गगन है,
क्योंकि मेरे व्यक्त की सीमा मरण है,
इसलिये मैं काल से अविभक्त होना चाहता हूँ।[2]

'व्यक्ति बन कर आ' के प्रतिपाद्य के सन्दर्भ में प्राचार्य विश्वनाथ सिंह ने लिखा है - 'जीवन की सामान्य ऐन्द्रिय संवेदनाओं के प्रवाह में कभी-कभी अनायास तत्त्वदर्शन के जो क्षण आते हैं, उनकी भाषा शब्दों से परे होती है। लेकिन अशब्द अरूप की अनुभूति है, अभिव्यक्ति नहीं। अतः कवि का स्वाभाविक आग्रह है - 'व्यक्ति बनकर आ'। 'अपनी बातें' शीर्षक से कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने लिखा है - 'शब्दों से परे' के बाद अशब्द को शब्दायित करने का मेरा यह विनम्र प्रयास है। भाषा, भाव एवं छन्द-योजना की दृष्टि से मेरी अन्य पुस्तकों से यह नवीन प्रयोग अलग दिखायी दे सकता है परन्तु सूक्ष्म निरीक्षण करने पर यह सर्वथा अप्रत्याशित नहीं लगेगा, बल्कि शब्दों से परे की परिणति ही इसमें मिलेगी।'[3] कवि अव्यक्त से बात करता है -

श्वेत-श्याम अश्वों से जुते आकाश के नीले रथ पर
तू कहाँ जा रहा है ?
क्या तू मुझे भी अपने साथ बिठायेगा ?
इस तंग कोठरी से बाहर ले जायेगा ?
या केवल यों ही ललचा रहा है
बाँह फैला-फैलाकर भरमा रहा है।[4]

'बूँदें जो मोती बन गयीं' में प्रतिपाद्य को लक्ष्य करके प्राचार्य विश्वनाथ सिंह ने लिखा है - 'प्रेम की विभिन्न मनोदशाओं में कवि के अन्तर्मन में जो

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : पृ0 266.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 3.
3. वही : पृ0 4.
4. वही : पृ0 27.

भाव-बिन्दु उगते हैं, उनमें से कुछ ही मुक्तावस्था को उपलब्ध होते हैं। प्रस्तुत संकलन ऐसी ही बूँदों का संग्रह है, जो मोती बन गयी हैं - प्राणों की मधुर प्रेम की पीर, जो शब्दों की सीपी में प्रवेश करके सहज ही शुभ और भास्वर हो उठी हैं।[1] कवि का प्रेम-सम्बन्धी चिन्तन सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होता चला है। भावों की अभिव्यक्ति में निरन्तर गम्भीरता और सहजता आती गयी है, यथा -

जीवन की सार्थकता पाने में नहीं,
खोने में है,
किसीका होने में है।[2]

'नये प्रभात की अँगाड़ाइयाँ' के प्रतिपाद्य को लक्ष्य करके श्री अक्षयचन्द शर्मा ने लिखा है - 'अपने प्रवासी जीवन के क्षणों में समृद्ध अमेरिका की, ऊपर से तृप्त भीतर से क्लान्त धरती पर बैठकर यह महाकवि जिन नवीन भावोर्मियों से उद्वेलित होता रहा है उन्हींका प्रतिफलन है -'नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ।'[3] भारतेतर जीवन-दर्शन एवं जीवन-पद्धति को कवि अपने अपेक्षित रूप में अभिव्यक्ति प्रदान करता है -

मेरा जी तो करता है,
क्षण भर इस हरी घास पर बैठकर
तेरी दी हुई बाँसुरी में फूँक मारूँ,
इस मटमैली तलैया में जलपाखी-सा उतर जाऊँ,
इस आम की डाल पर चढ़कर
कोयल-सा तुझे पुकारूँ,
पर मेरा श्रृंगार
मेरे पाँवों की जंजीर बन गया है,
उड़ने को स्वतन्त्र होकर भी मेरा हृदय
स्वर्ण-पिंजर का कीर बन गया है।[4]

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : पृ0 46.
2. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 56.
3. वही : पृ0 92
4. वही : पृ0 105.

'कस्तूरी कुण्डल बसे' में कविवर गुलाब खण्डेलवाल की निजी अनुभुतियाँ छन्दों से मुक्त होकर अवतरित हुई हैं। इन कविताओं में बाह्य परिधान पर विशेष ध्यान न देकर भाव-जगत में प्रवेश करना चाहिए तभी कवि के प्रतिपाद्य का आनन्द लिया जा सकता है। जैसे -

(1) तेरे पास पहुँचने की आशा में,
मैं निरन्तर चलता जा रहा हूँ,
पर तू केन्द्र में खड़ा मुस्कुरा रहा है,
और मैं परिधि के चक्कर लगा रहा हूँ।'[1]

(2) डाल से छूटते ही पत्ता अनाथ हो गया,
हवा का जो भी झोंका आया,
उसीके साथ हो गया।[2]

'एक चन्द्रबिंब ठहरा हुआ' की कविताओं में कविवर गुलाब खण्डेलवाल का प्रेमी मन पुनः जाग्रत हो गया है। कवि के मन में जो अध्ययन, मनन, और चिन्तन है, वह इस संग्रह की रचनाओं में गाढ़ी चासनी के रूप में तरल हो गया है तथा प्रेम अपने परिपक्व रूप में व्यक्त हुआ है। कवि अपने को भाव-सूक्तियों के रूप में व्यक्त करने की स्थिति में भी आ गया है अर्थात् परिभाषाएँ भी रचने लगा है, जैसे -

नारी एक ऐसा गीत है
जिसकी धुन हर बार बदल गयी लगती है,
जिसका अर्थ प्रत्येक आवृत्ति में
पहले से भिन्न दिखायी देता है,
जिसकी रसानुभूति हर बार नयी लगती है।[3]

इसी प्रकार प्रेम को परिभाषित करते हुए कवि कहता है -

प्रेम वह हीरा है
जिसे किसी भी अन्य उपाय से नहीं पाया जा सकता है,

---

1. 'ग्रलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 140.
2. वही : पृ0 150.
3. वही : पृ0 191.

अपने आपको बदले में देकर ही
इसका मूल्य चुकाया जा सकता है।[1]

'रेत पर चमकती मणियाँ' में संग्रहित कविताओं का प्रतिपाद्य लोक में उपलब्ध सुख-वर्धक वस्तुएँ नहीं हैं क्योंकि जब अन्वेषक खोज के अंतिम छोर पर पहुँचने लगता है तब वहाँ न रेत होती है, न मैं - तू होता है तथा न वहाँ मणियाँ होती हैं और न मणियों का भ्रम ही होता है। सर्वत्र शब्द से परे की ध्वनि मात्र होती है। यह ध्वनि ही मानो अव्यक्त का व्यक्त रूप है। 'रेत पर चमकती मणियाँ' में कवि का प्रौढ़ दार्शनिक चिंतन भी स्थान-स्थान पर दिखाई देता है। अव्यक्त के संबंध में कवि की सूझ देखिए -

अव्यक्त को किसी व्यक्त के माध्यम से ही
जाना जा सकता है।
रेखागणित के बिन्दु की तरह
अव्यक्त को स्वीकार करने से ही
व्यक्त के अस्तित्व को भी माना जा सकता है,
तभी सृष्टि का यह सतरंगा महल खड़ा हो सकेगा,
इसके सभी नियम खरे उतरेंगे,
अन्यथा न बीज होगा न वृक्ष,
न कहीं पक्षी कलरव करेंगे।[2]

'शब्दों से परे' कविता-संग्रह से लेकर 'रेत पर चमकती मणियाँ' तक जो तुकान्त अतुकान्त और कहीं गद्य जैसी स्थितिवाली कविताओं का सिलसिला चला हैं उसमें संसार के अस्तित्व को प्रायः नकारा गया है अथवा माध्यम मात्र माना गया है और स्वानुभूति को, जाग्रति को तथा स्थूल की ओर उतरने की प्रक्रिया को, अपने ज्ञान-गम्य रम्यतम अनुभवों को कवि कविताओं में उतारता चला है जिनसे कभी भक्ति, कभी प्रेम, कभी योग, कभी त्याग और कभी ज्ञान की उत्तमोत्तम अवस्था प्रकट हुई है। कहीं-कहीं तो कविवर गुलाब ने दर्शन के

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : द्वितीय खण्ड : स0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 192.
2. वही : पृ0 203.

ज्ञान को सहज सुबोध वाणी में प्रस्तुति दे दी है, जैसे-पाप पुण्य के क्षयसे जीवन के योग समाप्त हो जाते हैं अर्थात् पुनर्जन्म नहीं होता है, कवि इस भाव या विचार को सहज ही व्यक्त कर देता है, यथा -

पत्तों के झड़ जाने से, पेड़ नया जीवन पाता है।
किन्तु यदि जड़ ही उखड़ जाय, तो क्या रह जाता है !

एक अन्य स्थान पर कवि ने त्याग की महिमा को यों सुक्तिरूप में व्यक्त किया है -

संग्रह करते जाना तो नशा है
सच्चा सुख तो त्याग में है
गुणा में नहीं, भाग में है,

इसे कवि की कुशाग्रता ही कहा जायेगा कि उसने गम्भीर से गम्भीर विषयों को भी कविता में ढाल कर सरस, और सहज बना दिया है।

अष्टम अध्याय
उपसंहार

(क) प्रगतिवादी कवियों में गुलाब खण्डेलवाल
(ख) गुलाब खण्डेलवाल का मौलिक स्थान

:: अष्टम अध्याय ::

-::- उपसंहार-::-

जो साहित्य किसी वाद, फैशन, जार्गन (Jargan) या सस्ती लोकप्रियता के लिए लिखा जाता है और उसको प्रचार-तन्त्र या विज्ञापन-तन्त्र के माध्यम से जन-सामान्य तक पहुँचाने का प्रयत्न किया जाता है वह अधिक समय तक अपनी धाक जमाये नहीं रह सकता। संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू और हिन्दी के ऐसे शताधिक साहित्यकार हुए हैं जिन्होंने कुछ समय के लिये किसी-न-किसी माध्यम से प्रसिद्धि अर्जित कर ली लेकिन जन-सामान्य ने उनके प्रति आत्मीयता प्रकट नहीं की और परिणाम यह हुआ कि इतिहास में उनका नाम मात्र भले रह गया हो, उनकी ख्याति शीघ्र बरसाती नाले की भाँति बह गयी है। किसी साहित्यकार का साहित्य शताब्दियों तक तभी चलता है जब उसके मूल में रस, सम्वेदना और काव्यानुभूति हो। हमें यह लिखते हुये प्रसन्नता है कि महाकवि गुलाब खण्डेलवाल का ऐसा ही साहित्य है जिसमें जीवन्तता के उक्त गुण हैं और वह मानवीय सम्वेदना तथा आत्मोद्धार के कतिपय सिद्धान्तों की उत्तम व्याख्या के कारण मानव-समाज में सदैव समादृत रहेगा। यह बात और है कि सच्ची ख्याति के लिये विरले भाग्यशालियों को छोड़कर, अधिकांश को प्रतीक्षा करनी पड़ती है। महाकवि भवभूति ने इस सन्दर्भ में कहा है -कालोह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथिवी'। प्रत्येक साहित्यकार को अपने समय की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। कब किसका मूल्यांकन होगा, इस सन्दर्भ में समय से पूर्व कौन क्या कह सकता है ! कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने बिना किसी विशेष वाद और प्रचार-माध्यम के जो ख्याति अर्जित की है वह अपने में कम मूल्यवती नहीं है।

(क) प्रगतिवादी कवियों में गुलाब खण्डेलवाल :

प्रगतिवादी कवियों ने अपने चारों ओर व्याप्त गन्दगी एवं दुर्गन्ध को यथार्थवादियों की भाँति बीमारियों के रूप में ही नहीं देखा, उन्होंने गन्दगी के दुर्गन्ध और बीमारियों के कारणों को जानने की सतर्क कोशिश भी की है। वास्तव में यह कवि-कर्म की कर्तव्य-श्रृंखला के अन्तर्गत आनेवाली वस्तु या विचार है, लेकिन यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम प्रगतिवाद के लिए अपने को पश्चिम का ऋणी मानते हैं। यथार्थ में यह सुधारवाद का ही रूप है। भारतीय

कवि जब इस वाद से जुड़े तो वे अधिकांश में रूस के साम्यवाद से प्रभावित होकर रचना करने लगे। यह विसंगति इस सीमा तक पहुँची कि लाल निशान, लाल चौक, लाल रंग आदि ही सर्वस्व हो गये और मानवीय जीवन की व्यथा-कथा, जिसके लिये इस विचारधारा का उदय हुआ था, गौण हो गयी। इतना ही नहीं, छायावाद तथा रहस्यावाद के विरोध-स्वरूप जन्म लेनेवाली कविता मार्क्स, लेनिन, स्टालिन, माओ आदि के चरित्र एवं कृतित्व-गायन में लीन हो गयी। इस आन्दोलन को भारतीय जनाधार नहीं मिला और यह 'वकोऽहं वकोऽहं', होकर रह गयी। फिर भी हम इतना सहर्ष स्वीकार करते हैं कि जो कविता अनपेक्षित रूप से रहस्यमय अवगुण्ठन में बन्द होकर प्रत्यक्ष प्रिय की उपेक्षा करके कल्पित प्रिय के रूप-माधुर्य में अपनी प्रतिभा का कुछ-कुछ अंशों में दुरुपयोग कर रही थी, उसके स्थान पर वह यथार्थ की भूमि पर उतरकर मानवीय सम्वेदना से जुड़ गयी और उसकी पीड़ाओं को अभिव्यक्ति देने लगी।

निस्सन्देह प्रगतिवादी कवियों ने रूढ़ियों का विरोध, शोषकों के प्रति आक्रोश, शोषितों के प्रति सहानुभूति और साहसी व्यक्तियों के प्रति सम्मान-निवेदन को महत्त्व दिया है। भारतीय जीवन की संगतियाँ और विसंगतियाँ जब कविता में तरलता से प्रवाहित होने लगीं तब भारतीय जनमानस ने उन्हें पाकर कुछ शीतलता और शान्ति का अनुभव किया लेकिन रूस का गुणगान तथा प्रगतिवाद का सैद्धान्तिक विवेचन यहाँ बिल्कुल ही स्वीकार नहीं किया गया। 'महाकवि श्री गुलाब खण्डेलवाल उन प्रगतिवादी कवियों में आते हैं जिन्होंने अपनी दृष्टि में मानव का महत्त्व विशेष रूप से अपने सामने रखा है। वे मानव को ही समस्त वस्तुओं का निर्माता, विचारों का सृष्टा, यहाँ तक कि प्रकृति की समस्त शक्तियों का शासक मानते हैं। ऐसा श्रेष्ठ मानव जब जीवन की विषमताओं में पिसता है तब कवि का हृदय विद्रोह कर उठता है। धर्म, नैतिकता और चरित्र के नाम पर जो खोखली दीवारें बनी हैं उन्हें गिराने में वह गर्व का अनुभव करता है। गुलाब खण्डेलवाल मूल रूप से सदसत् विवेक के कवि हैं। उन्हें भारतीयता सर्वप्रथम स्वीकार है।'[1] इस दृष्टि से वे राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' के निकट दिखायी देते हैं। मानव मात्र के प्रति करुणा और भारतीय जीवन-मूल्यों और आदर्शों के प्रति दिनकर जी की भाँति श्री गुलाब में गहरी आस्था है।

दलितों और पीड़ीतों को देख श्री रामेश्वर शुक्ल अंचल ने कहा -

---

1. 'हिन्दी साहित्य में विविधवाद' : डॉ0 प्रेमनारायण शुक्ल : पृ0 293 से उद्धृत।

वह नस्ल जिसे कहते मानव, कीड़ों से आज गयी बीती।
बुझ जाती तो आश्चर्य न था, हैरत है पर कैसे जीती।

और सूर्यकान्त त्रिपाठी ने इससे भी भयानक चित्रण किया है -
बाप बेटा बेचता है, भूख से बेहाल होकर,
धर्म धीरज, प्राण खोकर, बढ़ रही अनरीति बर्बर।

इतनी कठोरता के साथ श्री गुलाब खण्डेलवाल ने प्रगतिवाद को धारण नहीं किया है बल्कि बड़ी गम्भीरता से उन्होंने अपेक्षित परिवर्तन को अपने काव्य में अभिव्यक्ति दी है। कविवर गुलाब को कदाचित श्री सुमित्रानन्दन पन्त का निम्नांकित प्रगतिवादी विवेचन स्वीकार्य है -

खुल गये छन्द के बन्द, प्रास के रजत पाश
अब गीत मुक्त औ' युगवाणी बहती अयास
बन गये कलात्मक भाव जगत् के रूप-नाम
जीवन-संघर्षण देता सुख लगता ललाम
सुन्दर, शिव, सत्य कला के कल्पित मापमान
बन गये स्थूल जगजीवन से हो एकप्राण
मानव-स्वभाव ही बन मानव-आदर्श सुकर
करता अपूर्ण को पूर्ण, असुन्दर को सुन्दर[1]

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल जैसे सुधी और दूरदर्शी साहित्यकार अपने लिए मार्ग चुनते समय सद्बुद्धि से ग्रहण करने योग्य को ग्रहण करते चले हैं और त्याज्य को त्याज्य करते चले हैं। उन्होंने प्रगतिवाद को सही अर्थों में ग्रहण किया है। वे पिछलग्गू होकर नहीं चले हैं।

सामान्य और स्वार्थी व्यक्ति की कोटि का सोच श्री गुलाब का नहीं है। वे चाहते हैं कि मनुष्य मनुष्य बनकर जिये और उसके मार्ग में जो बाधायें आती हैं, उनका वह स्वयं, संघर्ष से नहीं, अन्तर्विवेक से समाधान खोजे। इस दृष्टिकोण में भारतीय मनीषा की देन, शान्ति, न्याय और सुमति भी स्वयं समाहित हैं। बड़ी-बड़ी समस्याओं का समाधान मिल बैठकर ही तय किया जाता है। कवि जीवन में अनासक्ति के मंत्र का प्रतिपादन करते हुए कहता है -

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 252-253.

न तो कुछ बढ़ायें ही, और न ही छोड़ें
कुछ भी न जोड़ें, और कुछ भी न तोड़ें
सबके के ही बीच रहें, सबसे मुँह मोड़ें
चर्चा भर लाभ-हानि, जीत और हार की
यह तो कहो मरने के बाद कहाँ जायें
इतना कुछ लेकर क्या शून्य में समायें !
सोयें कयामत तक, उठ कर भाग आयें !
कोई खबर मिलती नहीं उस पार की

उस पार की खबर भले ही कवि को न मिली हो लेकिन इस पार की, अपने वर्तमान की खबर कवि को भली भाँति है। कवि यथार्थ को प्रस्तुति देता है -

न कोई पेड़ पौधा है, न कोई छाँह दिखती है
जहाँ तक आ गया, आगे न उसके राह दिखती है
न हँसते होंठ दिखते हैं, न फैली बाँह दिखती हैं
जिधर भी देखता हूँ, चीख और कराह दिखती है
उदासी है, अँधेरा है
उलूकों का बसेरा है
इन्हींके बीच क्या अब
प्राण का अधिवास मेरा है ?
नगर सुनसान यह कैसा, यहाँ पर कौन रहते हैं
कि जो आठों पहर मुँह को सिये बस मौन रहते हैं ?[1]

उपर्युक्त पंक्तियाँ 'वीरान बस्ती' शीर्षक कविवर गुलाब की एक लम्बी कविता से हैं जिसमें कवि ने श्मशान के चित्रण द्वारा मृत्यु की अनिवार्यता और जीवन की असारता दिखाई है। श्मसान में सब कुछ दिखायी दे रहा है लेकिन कहीं जीवन्तता या जीवन का चिह्न नहीं दिखाई देता है। कवि द्वारा किया हुआ श्मशान का वर्णन रोयें खड़े कर देता है।

परंतु कवि केवल मृत्यु के गीत ही नहीं गाता है, वह चेतना की शब्द-रूपी चिनगारियों को (मानवता का हित के ध्यान में रखकर) घर, परिवार और संसार के कोने-कोने में पहुँचा देना भी चाहता है -

---

1. गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 278.

फैल जाओ चिनगियों से शब्द मेरे
उड़ निखिल संसार में
दूर गाँवों के निभृत गृह के अँधेरे
दीनतम परिवार में
मनुज भाल-कलंक, कृश कृमि से सरकते
वृद्ध असमय के जहाँ
हाथ भर ऊँचे घरौदे जो दरकते
स्पर्श से, जाओ वहाँ
तुम उन्हींके बीच, निज रच लो बसेरे
सिमट लघु आकार में
अनलपंखी जुगनुओं-से गीत मेरे
उड़ चलो संसार में[1]

जैसे भारतीय मनीषी लोक-मंगल की कामना में स्वयं को होम करते रहे हैं और अपनी लोक-कल्याण की वाणी को संयमित ढंग से जन-मानस तक पहुँचाते रहे है जिससे किसीको कष्ट पहुँचाये बिना स्वयं का और स्वयमेतर का सुख-साधन सहज ही जुटाया जा सके उसी प्रकार महाकवि गुलाब अपने काव्य द्वारा समाज में रस और आनंद की वर्षा करते रहे हैं। उन्हें न तो लाल चौक पर जाने की आवश्यकता अनुभव हुई है और न लाल सेना को एकत्र कर किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये प्रस्थान की आवश्यकता है। लक्ष्य-संधान के लिये संघ की शक्ति में उनका अटूट विश्वास है, वे निज पर पर की और नर पर नरत्व की विजय की तथा पंचतत्त्व पर आत्म-सत्व की जय के आकांक्षी हैं -

निज पर पर, नर पर नरत्व की
पंच तत्त्व पर आत्म-सत्व की
घन महत्त्व पर जन समत्व की
संघ शक्ति का भय हो
कुटिल असुन्दर पर सुन्दर की
पवि कठोर पर कोमल कर की
प्रलय क्षितिज पर विश्वम्भर की

---

1. 'गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 100-101.

नव ज्योति का उदय हो
मानवता की जय हो
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 102)

'नव ज्योति का उदय हो' पंक्ति में इस आशय को समाविष्ट किया गया है कि जब तक पुरातन का मोह त्याग कर नवीन को उल्लासपूर्वक ग्रहण नहीं किया जायगा तब तक यह सम्भव नहीं है कि जन-आकांक्षाएँ पूर्णता को प्राप्त हो सकें। इसलिये नये सोच का उदय अपेक्षित है। नयी ज्योति से ही यह सम्भव है कि मनुष्य में लोकोपकारी सोच उत्पन्न हो और सर्वभूत-हित में वह लगे। विनोबा के भूदान से प्रेरित निम्न पंक्तियों में कवि ने विनोबा के चिंतन को सहज वाणी दे दी है -

सबल की न धनवान की
धरती है भगवान की
जैसे मुक्त समीर है
ज्यों सरिता का नीर है
आतप और प्रकाश है
जैसे नीलाकाश है
वैसे ही हर प्रान की
* * * *
कण्ठ सूखते प्यास से
अमृत झरे आकाश से
आशा से, विश्वास से
दिया जला लो साँस से
नयी फसल हो धान की
सबल की न धनवान की,
धरती है भगवान की।
('गुलाब-ग्रन्थावली' : प्रथम खण्ड : सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी : पृ0 167)

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल रूढ़ अर्थो में प्रगतिवादी नहीं हैं बल्कि वे सच्चे अर्थो में (अभिधार्थ में) प्रगतिवादी हैं। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती और समकालीन कवियों द्वारा प्रणीत साहित्य एवं विचारधारा से विरोध व्यक्त नहीं किया है, उन्होंने यह प्रयत्न अवश्य किया है कि जो हमें ग्रहणीय है उसे

अपेक्षित मानते हुये ग्रहण किया जाय और जो समय-सापेक्ष नहीं रहा है, उसे छोड़ा जाय। गुलाब जी ने परम्परागत रूप के मुक्तक, गीत, प्रबन्धकाव्य के रूप को न तो ग्रहण किया है और न सब का विरोध किया है प्रत्युत उन्होंने इस बात का सर्वत्र ध्यान रखा है कि मौलिकता से अपनी अभिव्यक्ति के लिये क्या अपेक्षित है और क्या अनपेक्षित है। जैसे 'उषा' महाकाव्य की रचना के लिये सर्वथा काल्पनिक कथानक लिया और उसमें जीवन्तता एवं विश्वसनीयता को सर्वत्र बनाये रखा जो कथानक में होनी चाहिए। गुलाब जी में पूर्वाग्रह जैसा भाव कदापि नहीं है। प्रबन्धकाव्य 'अहल्या', 'कच-देवयानी' आदि भी हैं, जिनमें मूल कथानक भी है और कल्पना का प्राबल्य भी है। इसी प्रकार नाटक आदि अन्य कृतियों में भी कवि की यही दृष्टि देखी जाती है। उन्होंने सृजन-हेतु जो भी कथानक (पौराणिक, ऐतिहासिक या काल्पनिक) चुना है उसे मौलिकता से इतना जीवन्त कर दिया है कि वह सुन्दर और अप्रतिम बन गया है।

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने मुक्तककाव्य और गीतिकाव्य के क्षेत्र में भी मौलिकता का परिचय देकर स्वयं को सच्चे अर्थों में प्रगतिवादी सिद्ध किया है। परम्परागत रूप की मौलिक कविताएँ तो श्री गुलाब ने लिखी ही हैं, साथ ही उन्होंने उर्दू की 'कता' की परम्परा को हिन्दी में मौलिकता से प्रस्तुति दी है। इस परम्परा को महाकवि हरिऔध ने अपने ढंग से अपनाया और गुलाब जी ने इसे अपने ढंग से ग्रहण किया है। इसी प्रकार से कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने 'वीर-भारती' और 'दोहा-शतदल' के रूप में परम्परागत दोहा-शैली को मौलिकता से प्रस्तुति दी है। उर्दू मे बड़े चाव से लिखी जानेवाली ग़ज़ल को कवि ने सर्वथा मौलिकता प्रदान करते हुये उसे हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया। इसी प्रकार सॉनेट और रुबाई छन्द (दोनों विदेशी) हिन्दी में साधिकार लिखना गुलाब जी ने प्रारम्भ किया है। किसी नयी पद्धति या शैली में एक-दो रचना कर देना तो सरल हैं लेकिन पुस्तकों की रचना करना किसी गुलाब जी जैसे प्रतिभावान कवि का ही कार्य हो सकता है जो परम्पराओं को ध्यान में रखता हुआ उनमें सहज ही नवीनता का संचार कर देता है।

कविर्मनीषी गुलाब खण्डेलवाल ने गीत की साधना अपने सम्पूर्ण साहित्यिक जीवन में की है। पद-शैली के गीतों से लेकर वर्तमान युग के गीतों तक को जिस-जिस रूप में प्रस्तुति दी गयी है उन समस्त रूपों में गुलाब जी ने गीतों की रचना की है। वल्कि यों कहना चाहिए कि उन्होंने मौलिकता से उनमें प्राण-तत्त्व का संचार कर दिया है। इसी प्रकार गुलाब ने अतुकान्त काव्य

के क्षेत्र में भी मौलिकता का परिचय दिया है। कवि को प्रति पग मौलिकता की पताका गाड़ते चलना ही रुचिकर लगता है।

सारतः, कवि श्री गुलाब खण्डेलवाल ने प्रकट-अप्रकट रूप से स्वयं को किसी वाद-विशेष से नहीं जोड़ा है। मानवीय सम्वेदना और अन्तर्विवेक से जो समय-सापेक्ष बन पड़ा है उसे मौलिकता से कहने में उन्हें सन्तोष मिला हैं। उन्होंने स्वयं को सच्चे अर्थो में प्रगतिवादी सिद्ध किया है। सृजन के लिये विषय-वस्तु-चयन, संचयित सामग्री के प्रस्तुतीकरण में भारतीयता को प्रत्येक पग पर अपनाये रखना उनकी अपनी विशेषता है। उन्हें पुराने-से पुराने होने के कारण किसी के प्रति विरोध नहीं है और नये के प्रति इसलिये आकर्षण विशेष नहीं है कि वह नया है। कविवर को समय-सापेक्षता से जो उपयुक्त लगा है उसे अपनाकर उन्होंने गतिशील बनाया है। व्यर्थ की उछल-कूद से उन्होंने सर्वत्र बचने का प्रयास किया है। मानवता के उत्थान तथा आत्मिक प्रगति और भारतीय जीवन-मूल्यों एवं आदर्शों के लिये जो कुछ मौलिक प्रतिभा से बन पड़ा है, कवि ने सहर्ष कर दिखाया है। यदि कविवर गुलाब किसी वाद-विशेष से बँध जाते तो कदाचित इतने अच्छे ढंग से उत्कृष्ट काव्य की सृष्टि नहीं कर पाते।

(ख) गुलाब खण्डेलवाल का मौलिक स्थान :

अगणित पुण्यों के धनी, महान आस्थावादी, क्रान्तिकारी विचारों से सम्पन्न और साहित्य सृजन में असाधारण साधक महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने प्रचुर, व्यापक और विविधात्मक साहित्य का सृजन किया है। साहित्य-सृजन का क्षेत्र ऐसा विलक्षण है कि यदि इसमें कोई साधक छद्मवेश धारण करे तो उसका आडम्बर-प्रधान रूप अधिक समय तक छिप कर नहीं रह सकता है और यदि वह श्रेष्ठता की ओर निरन्तर अग्रसर होता है तो वह बिना किसी प्रचार या प्रसार के माध्यम के प्रसिद्धि की सीढ़ियाँ चढ़ने लगेगा। कविवर गुलाब खण्डेलवाल एक ऐसे ही असाधारण कवि है जिन्होंने किसी वाद या प्रचार-माध्यम, विज्ञापन आदि का सहारा नहीं लिया है, शनैः-शनैः अपनी सुगन्ध से ही अपने परिवेश, देश और विदेश को सुगन्धित किया है। सन् 1940 ई0 के आसपास से वर्तमान तक कदाचित् ही कोई ऐसा, हिन्दी-साहित्य का पाठक, सम्पादक, समीक्षक और पत्रकार हो जिसने अद्भुत साहित्य-स्रष्टा श्री गुलाब खण्डेलवाल की चर्चा या प्रशंसा न की हो। महाकवि गुलाब ने अपनी विलक्षण काव्य-प्रतिभा से

हिन्दी-साहित्य के भण्डार में श्री-वृद्धि की है जिसे प्राप्त कर हिन्दी साहित्याकाश स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करता है। निश्चय ही कविवर्य की साधना निर्मल गंगा की धारा-सदृश लोक-मंगल-कारिणी भावना को लेकर प्रवहमान हुई है।

प्रकाशन या सुनाने के लिये उत्तमोत्तम गोष्ठियों को लेकर कवि श्री गुलाब खण्डेलवाल को कभी निराश, हताश या कुण्ठित नहीं होना पड़ा। कवि को यह संयोग प्रारम्भ से ही प्राप्त हो गया कि उसकी रचनाएँ साप्ताहिक संसार, रानी, देशदूत आदि बीसियों पत्र-पत्रिकाओं और संकलनों व संग्रहों में प्रकाशित होती रही हैं। उसके साथ-साथ उसकी पुस्तकाकार कृतियाँ भी सामने आती गयी हैं। इतना ही नहीं, कवि के व्यक्तिगत तथा संस्थाओं के प्रयत्न से प्रकाशन की दिशा में सन्तोषजनक प्रगति हुई है तथा समस्त रचना चार खण्डों में पद्मभूषण पं श्रीनारायण चतुर्वेदी के सम्पादकत्व में गुलाब-ग्रन्थावली के नाम से प्रकाशित हुई है। इसी प्रकार कविवर गुलाब खण्डेलवाल काव्य-मंच से भी जुड़े रहे हैं इसलिये उन्होंने अपने मधुर कण्ठ से अपनी रचनाओं को जन-सामान्य तक पहुँचाया है। हाँ, मंच से जुड़कर भी भँड़ैती जैसी कविता करना, एक-दो रचना के बल पर हिन्दोस्तान में घूमना और सस्ती लोकप्रियता लूटनेवालों में वे नहीं रहे हैं। काव्य को सही अर्थों में काव्य-रूप प्रदान कर कवि ने सर्वथा अपनी मौलिकता की पताका फहरा दी है जो कवि के यश को व्यक्त कर रही है।

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल ने जब काव्य-सृजन की कक्षा में प्रवेश किया तब छायावाद और रहस्यवाद अपने चरम शिखर पर थे। इनसे कवि गुलाब भी प्रभावित हुए और इस प्रभाव को 'कविता' के गीत और कविताओं तथा चाँदनी के गीतों में देखा जा सकता है। इन रचनाओं में ही मौलिकता का बीज-वपन हो गया और अपनी पहचान के लिये कविवर गुलाब ने सॉनेट लिखना प्रारम्भ कर दिया । ये सॉनेट 'संसार' पत्रिका के अंकों में प्रकाशित होते रहे जो 'सीपी-रचित रेत' में संग्रहीत होकर प्रकाशित हुए हैं। इसी प्रकार कविवर गुलाब ने गीत विधा में अपने अभ्यास से शिल्प में अद्भुत मौलिकता का परिचय दिया है। गुलाब-साहित्य में कम से कम पचास प्रकार के गीत मिलते हैं जिनमें गेयता ही नहीं, पूर्ण संगीत-तत्त्व भी मिला है।

जिस कलाकार में मौलिक प्रतिभा होती है उसके मन में यह बात रहती है कि वह अपनी प्रतिभा का परिचय विविधता से दे। यह ललक गुलाब जी के कलाकार में भी रही है। प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत महाकाव्य और खण्डकाव्य

और मुक्तक-काव्य के अन्तर्गत कविता और गीत लिखकर उन्होंने अपने अद्भुत सामर्थ्य को अभिव्यक्ति दी है। इतना ही नहीं, उन्होंने काव्य-नाटक और गद्य-नाटक (ऐतिहासिक तथा काल्पनिक) लिखकर साहित्य की अन्य विधाओं में भी अपनी सृजन-शक्ति का परिचय दिया है। यदि गुलाब जी में अप्रतिम प्रतिभा न होती तो वे किसी एक ही विधा में स्वयं को समेटकर रह जाते। प्रबन्ध-काव्य के क्षेत्र में विशेषकर महाकाव्य में समस्त परम्पराओं को लगभग एक ओर रखकर गुलाब जी ने 'उषा' की रचना की। आधुनिक सन्दर्भ में यह समस्त काव्य, व्यक्ति के आपसी सम्बन्ध को न केवल अभिव्यक्ति ही देता है, प्रत्युत यह भी सिद्ध करता है कि प्रेम ही वह तत्त्व है जो सम्बन्ध को स्थायित्व प्रदान करता है। यही तत्त्व 'कच-देवयानी' खण्डकाव्य में क्रियाशील है। जब 'अहल्या' खण्डकाव्य सामने आता है तब यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि अनमेल वैवाहिक सम्बन्ध 'अहल्या' को जन्म देकर समाज को लांछित करते हैं तथा राम जैसा कोई मर्यादा-पुरुष ही उसे पाप-मुक्त कर पाता है। श्री गुलाब खण्डेलवाल अपनी पूर्ण मौलिकता से इन काव्यों में विराजमान हैं।

कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने देशी साहित्य के साथ-साथ विदेशी (विशेषकर अंग्रेजी कविता) साहित्य का भी अध्ययन किया है तभी वे गीत-साहित्य में नाना प्रकार के गीतों का सृजन कर सके हैं। कवि को जहाँ-जहाँ से जो भी उत्तम और योग्य मिला है उसे बड़े ही आदर के साथ उसने ग्रहण किया है तथा मौलिकता के साथ प्रकट भी किया है। कवि में यह प्रवृत्ति अद्यावधि बनी हुयी है। जापानी साहित्य में हाइकू लिखने की परम्परा है। कविवर गुलाब खण्डेलवाल ने भी हिन्दी में हाइकू लिखकर हिन्दी-प्रेमियों तथा हिन्दी-भाषियों को उससे परिचित कराया है। इस प्रकार के कार्य मौलिक प्रतिभा सम्पन्न कलाकार ही कर पाता है।

अरबी-फारसी का साहित्यिक दाय उर्दू के माध्यम से हिन्दी-क्षेत्र में आया है। उर्दू में सरलता की ओर अधिक झुकाव है अतः लोक में उसका प्रभाव भी असाधारण रूप से पड़ा है। हिन्दी-साहित्य में आज जो अनेक छन्द, बहर और काव्य-रूप दिखायी देते हैं उनमें उर्दू-साहित्य का भी योगदान है। उर्दू की ग़ज़ल कता, नज्म आदि ने हिन्दी को विशेष रूप से प्रभावित किया है। गुणग्राही श्री गुलाब ने इस प्रभाव को हृदयंगम किया और मौलिकता से हिन्दी-ग़ज़ल के रूप में एक दो ग़ज़ल नहीं प्रत्युत् तीन सौ साठ ग़ज़लें लिखकर इस विधा की सुदृढ़ नींव रखी है। हमें यह कहते हुये प्रसन्नता है कि पुरोधा कवि गुलाब ने

हिन्दी-ग़ज़ल का ऐसा शुभारम्भ किया अथवा ऐसा वृक्षरोपण किया है कि आज शताधिक रूप में हिन्दी-ग़ज़ल आगे बढ़ रही है, यहाँ तक कि हिन्दी-कवि की वर्तमान में, ग़ज़ल कसौटी मानी जाने लगी है। हिन्दी में मुक्तक-लेखन का शुभारम्भ उर्दू के कता के आधार पर हुआ है। महाकवि हरिऔध ने इस विधा को चौपदे के रूप में प्रारम्भ किया और महाकवि गुलाब ने इस विधा को विकसित किया है। 'रूप की धूप' काव्य-संग्रह में उर्दू साहित्य का प्रभाव, जिस मौलिकता के साथ अधिग्रहण किया गया है, सर्वथा दृष्टव्य है। 'रूप की धूप' में जो जीवन-दृष्टि है, वह भारतीय दृष्टिकोण के निकट है।

जब कोई नदी पर्वत की गोद से उतर कर उछलती कूदती और रस से सराबोर करती हुयी आगे बढ़ती है तब उसके सम्पर्क में आनेवाला सब कुछ रस-विभोर हो उठता है लेकिन जब वह समतल पर गद्यात्मक हो कर गतिशीला होती है तब उसमें अपेक्षाकृत अधिक गाम्भीर्य आ जाता है और लोक-मानस को अधिक लीलामय तथा आनन्दमय करती है। अतुकान्त या क्षणिकाओं के रूप में लघु से विराट्, साधारण से असाधारण और लोक से परलोक की ओर चलने की जो प्रक्रिया कवि ने अपनायी है वह कवि के प्रौढ़त्व के साथ-साथ अथक साधकत्व और प्रज्ञाघनत्व को प्रकट करती है। ये वे रचनाएँ हैं जिन्हें बीजमंत्र की तरह कठोर साधना की सिद्धि के लिये अर्जित किया गया है जिससे लोक-हित सम्भव हो। कवि को मनीषी का वास्तविक रूप भी तो इन्हीं रचनाओं में रूपायित करना पड़ा है। मौलिकता का परिचय अनायास नहीं, सायास होता है।

हम चाहे कवि के रूप में या गीतकार के रूप में, चाहे सॉनेट, रुबाई, ग़ज़ल कता के पुरोधा के रूप में या कथ्य तथा शिल्प के क्षेत्र में नवीन प्रयोगकर्ता के रूप में कविवर गुलाब खण्डेलवाल को देखें, वे सर्वत्र मौलिक प्रयोगधर्मी के रूप में दिखायी देते हैं। कविवर्य गुलाब ने काव्य के विभिन्न रूपों में विविधता का प्रदर्शन मौलिकता से किया है। इस मौलिकता में अन्तःसलिला की धारा की भाँति भारतीय जीवन, जीवन-मूल्य, आदर्श, दार्शनिक दृष्टि, सभ्यता और संस्कृति, आध्यात्मिक उपलब्धियों का क्रम और आस्थावादी स्वर सर्वत्र शान्त, स्निग्ध नीरवता की भाँति समाहित हैं। मानव-जीवन सुन्दर से सुन्दर कैसे हो सकता है इस दिशा में एक मौलिक कवि जो-जो प्रयत्न करता है, उन सबका एक साथ अवलोकन गुलाब खण्डेलवाल के साहित्य में प्रसन्नता के साथ किया जा सकता है। इस साहित्य में कला, साहित्य और जीवन का अद्भुत संगम है।

परिशिष्ट - (क)

-:सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची:-

1. सूक्ति सागर : सं0 रामशंकर गुप्त
2. पं0 रामनरेश त्रिपाठी का काव्य : डॉ0 कृष्ण दत्त पालीवल
3. संस्कृति के चार अध्याय : रामधारी सिंह 'दिनकर'
4. स्वतन्त्रता-संग्राम : अनुवादक - रामसेवक श्रीवास्तव
5. भारत-भारती : मैथिलीशरण गुप्त
6. हिन्दी काव्य की सामाजिक भूमिका : डॉ0 शम्भुनाथ सिंह
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल
9. साहित्य-कोश : धीरेन्द्र वर्मा
10. हिन्दी कविता में युगान्तर : डॉ0 सुधीन्द्र
11. काव्य, कला तथा अन्य निबन्ध : जयशंकर प्रसाद
12. सुमित्रानन्दन पन्त : विश्वम्भर 'मानव'
13. हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास : भगीरथ मिश्र
14. आधुनिक हिन्दी काव्यधारा का सांस्कृतिक स्रोत : केसरी नारायण शुक्ल
15. छायावादी कवि और काव्य : डॉ0 श्रीदेवी खरे
16. आँसू : जयशंकर प्रसाद
17. कामायनी : जयशंकर प्रसाद
18. लहर : जयशंकर प्रसाद
19. गीतिका : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
20. परिमल : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
21. किरण-वीणा : सुमित्रानन्दन पन्त
22. पल्लव : सुमित्रानन्दन पन्त
23. स्वर्ण-किरण : सुमित्रानन्दन पन्त
24. दीपशिखा : महादेवी वर्मा
25. यामा : महादेवी वर्मा
26. हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
27. हिन्दी साहित्य का निबन्धात्मक : आचार्य उमेश शास्त्री

इतिहास
28. प्रगति और परम्परा : हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ : डॉ0 रामविलास शर्मा
29. हुंकार : रामधारी सिंह 'दिनकर'
30. नीम के पत्ते : रामधारी सिंह 'दिनकर'
31. परशुराम की प्रतीक्षा : रामधारी सिहं 'दिनकर'
32. मधुशाला : हरिवंश राय 'बच्चन'
33. छायावाद : पुनर्मूल्यांकन : सुमित्रानन्दन पन्त
34. आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र : डॉ0 रामेश्वर दयाल मिश्र
35. डिंगल साहित्य : सरोजिनी मिश्रा
37. साहित्य विवेचन : क्षेमचन्द्र सुमन-योगेन्द्र कुमार मलिक
38. महादेवी वर्मा का विवेचनात्मक गद्य : गंगा प्रसाद पाण्डेय
39. समीक्षा-शास्त्र : डॉ0 दशरथ ओझा
40. हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि: डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना
41. हिन्दी-साहित्य के विविध वाद : प्रेमनारायण शुक्ल
42. कनुप्रिया : धर्मवीर भारती
43. हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ प्रेम-गीत : सम्पादक-क्षेमचन्द्र सुमन
44. स्वर-गंगा : डॉ0 नागेन्द्र
45. कालजयी (पाण्डुलिपि) : डॉ0 नागेन्द्र
46. जो आये जो गये यहाँ से : डॉ0 नागेन्द्र (पाण्डुलिपि)
47. काव्यांलकार : भामह
48. काव्यादर्श : दण्डी
49. काव्यालंकार : रुद्रट
50. साहित्य-दर्पण : आचार्य विश्वनाथ
51. हिन्दी-साहित्य : बाबू श्यामसुन्दर दास
52. महाकाव्य का स्वरूप-विकास : डॉ0 शम्भुनाथ सिंह
53. काव्यरूपों के स्रोत और उनका विकास : डॉ0 शम्भुनाथ सिंह
54. प्रिय-प्रवास : अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
55. रिसते घाव : रामप्रकाश गोयल
56. उर्दू ग़ज़ल के पचास साल : डॉ0 अब्दुल अहमद खाँ 'खलील'

57. आधुनिक हिन्दी-कविता में उर्दू तत्त्व : डॉ0 नरेश
58. शामियाने काँच के : डॉ0 कुँवर बेचैन
59. ग़ज़ल एक अध्ययन : चानन गोविन्दपुरी
60. हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ गजलें : डॉ0 गिरिराज शरण अग्रवाल
61. छाँव की दयार : सम्पादक - डॉ0 मनमोहन शुक्ल
62. श्रीमद् भगवद् गीता : गीता प्रेस, गोरखपुर।
63. उत्तर प्रदेश-अमृतलाल नागर-स्मृति-अंक - अप्रैल, 1990.
64. अमर उजाला-19 दिसम्बर 1993.
65. अमर उजाला-26 दिसम्बर 1993. परिशिष्ट- (घ)

महाकवि गुलाब खण्डेलवाल का साहित्य

1. कविता : गीत और कविताएँ
2. चाँदनी : गीत
3. दानवीर बलि (बलि-निर्वास) : काव्य-नाटक
4. कच-देवयानी : खण्डकाव्य
5. उषा : महाकाव्य
6. अहल्या : खण्डकाव्य
7. मेरे भारत, मेरे स्वदेश : देशभक्ति के गीत और दोहे
8. रूप की धूप : रुबाइयाँ
9. सौ गुलाब खिले : ग़ज़ल
10. पँखुरियाँ गुलाब की : ग़ज़ल
11. कुछ और गुलाब : ग़ज़ल
12. हर सुबह एक ताजा गुलाब : ग़ज़ल
13. आलोक-वृत्त : खण्डकाव्य
14. गांधी-भारती : सॉनेट
15. शब्दों से परे : गीत और कविताएँ
16. सीपी-रचित रेत : सॉनेट
17. बूँदें जो मोती बन गयीं : गीत, मुक्तक और कविताएँ (छंदमुक्त शैली में)
18. ऊसर का फूल : गीत और कविताएँ
19. व्यक्ति बनकर आ : कविताएँ तथा मुक्तक (छदंमुक्त शैली में)

20. नूपुर-बँधे चरण : गीत एवं कविताओं के विविध प्रयोग
21. सब कुछ कृष्णार्पणम् : गीत
22. हम तो गाकर मुक्त हुए : गीत
23. नये प्रभात की अँगड़ाइयाँ : कविताएँ (छंदमुक्त शैली में)
24. कस्तूरी कुण्डल बसे : मुक्तक (छंदमुक्त शैली में)
25. चन्दन की कलम शहद में डुबो-डुबोकर : कविताएँ, गीत
26. राजराजेश्वर अशोक : ऐतिहासिक नाटक (गद्य में)
27. भूल : सामाजिक नाटक (गद्य में)
28. आयु बनी प्रस्तावना : गीत
29. कितने जीवन, कितनी बार : गीत
30. नाव सिन्धु में छोड़ी : गीत
31. गीत-वृन्दावन : गीत-प्रबंध
32. सीता-वनवास : गीत-प्रबंध
33. एक चन्द्र-बिंब ठहरा हुआ : मुक्तक (छंदमुक्त शैली में)
34. रेत पर चमकती मणियाँ : मुक्तक (छंदमुक्त शैली में)
35. आधुनिक कवि गुलाब खण्डेलवाल-19 : प्रतिनिधि संकलन
36. गुलाब-ग्रन्थावली : प्रथम खण्ड सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी
37. गुलाब-ग्रन्थावली : द्वितीय खण्ड, सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी
38. गुलाब-ग्रन्थावली : तृतीय खण्ड, सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी
39. गुलाब-ग्रन्थावली : चतुर्थ खण्ड, सं0 श्रीनारायण चतुर्वेदी
40. महाकवि गुलाब और उनकी कृतियाँ : परिचय
41. महाकवि गुलाब खण्डेलवाल की कालजयी कृतियों का परिचय।